राजसिंह

वा

शहंशाह औरंगज़ेब

ऐतिहासिक उपन्यास ।

प्रकाशक—रामलाल वर्म्मा ।

॥ श्री ॥

राजसिंह

या

शहंशाह औरङ्गज़ेब।

वीररस पूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास।

बङ्ग-साहित्य-सम्राट् स्वर्गीय

बाबू बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय महाशयके

बङ्गला "राजसिंह"का

हिन्दी अनुवाद।

"वीरभारत"--सम्पादक

श्रीयुत पण्डित रामानन्द द्विवेदी

अनुवादित।

आर० एल० बर्म्मन एण्ड कम्पनी,

४०।१।२ अपर चितपुर रोड,

कलकत्तासे प्रकाशित।

पं० जीवनलाल चौबेके प्रबन्धसे जीवनप्रेसमें मुद्रित।

प्रथम बार १००० } सं० १९६९ विक्रमीय { मूल्य बे जिल्द १), जिल्ददार १।

Printed at
THE JIBAN PRESS.
BY
MANNILAL MONDAL
5-1 Jagmohan Mullick's Lane, Calcutta.

॥ श्री ॥

भूमिका ।

मित्रवर श्रीयुत पं० रामानन्दजी शर्म्मा तथा इस ग्रन्थके प्रकाशक श्रीयुत बाबू रामलालजी वर्म्मा महाशयके आज्ञानुसार मैं इस 'राजसिंह' नामक ग्रन्थकी भूमिका लिखने बैठा हूं ।

वङ्गीय साहित्य-सम्राट, सुविख्यात औपन्यासिक और गद्य काव्यके अद्वितीय कवि स्वर्गीय बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय महाशय इस ग्रन्थके मूल लेखक हैं। चट्टोपाध्याय महाशयकी विद्वत्ता, अतुल-ज्ञान-गाम्भीर्य्य और अनूठी वर्णन शक्तिकी प्रशंसा मुझ अल्पज्ञसे नहीं हो सकती। जिन महानुभावने अपने अपूर्व्व पाण्डित्यसे केवल वङ्ग देश ही नहीं ; वरं समग्र भारतवर्षका मुखोज्ज्वल किया है, जिनकी पुस्तकोंका भाषान्तरकर अंगरेजीजैसी समुन्नत भाषाके लेखकोंने भी अपनेको गौरवान्वित समझा है और जिनकी विलक्षण वर्णशैली देख विद्वन्मण्डली विमुग्ध हो गई है, उनकी प्रशंसा अथवा उनके कार्य्योंकी समालोचना कोई सहजसाध्य कार्य्य नहीं । इन अतुल-शक्तिशाली विद्वान्ने जिस विषयपर लेखनी उठाई है, उसे पूर्ण रूपसे प्रतिपादन कर दिखाया है। गद्य काव्यके ऐसे उद्भट लेखक संसारमें बहुत नहीं।

यों तो बङ्किमचन्द्रके लिखे सभी उपन्यास उच्च श्रेणीके हैं किन्तु 'राजसिंह' उनमें अन्यतम है। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मेवाड़पति महाराणा राजसिंहके समयकी राजनैतिक, धार्म्मिक तथा सामाजिक परिस्थितिका विशद वर्णन है। कविने तत्कालीन क्षत्रिय-वीरोंका वीरत्व और रणकुशलता, राजपूत-ललनाओंकी धर्म्मभीरुता और उदारता तथा मुसलमान स्त्री-पुरुषोंकी विलासिता और स्वाधीनताका सुन्दर चित्र चित्रित किया है।

यह 'राजसिंह' उन्हीं स्वर्गीय बङ्किमचन्द्रके राजसिंहका हिन्दी भाषान्तर है। भाषान्तर करनेका कार्य्य कितना महत्व भरा और दायित्वपूर्ण है, यह किसीको बताना नहीं होगा। अपने ही मनके भावोंको अपनी भाषा द्वारा व्यक्त करना उतना मुशकिल नहीं; किन्तु किसी अन्य भाषाके लेखकके भावोंको अपनी भाषा द्वारा अविकल व्यक्त करना कठिन कार्य्य है। मुझे यह लिखते आनन्द होता है, कि इस पुस्तकके भाषान्तरकारने इस विषयमें कमाल कर दिखाया है। भाषान्तर बड़ी ही मधुर, मनोहर तथा साधु भाषमें हुआ है। मूल ग्रन्थकारके भावोंके अविकल रखनेका यथेष्ट किया गया है।

हिंदीके सुविख्यात समाचारपत्र 'वीरभारत'के भूतपूर्व्व स्वामी श्रीयुत बाबू प्राणतोष दत्त महाशयने अपने पत्रमें राजसिंहका अनुवाद प्रकाशित करना आरम्भ किया था। अनुवादका कार्य्य उन्होंने स्वयं प्रारम्भ किया था; किन्तु थोड़े ही दिनोंके बाद जब पंडित रामानन्द शर्म्माने वीरभारतका सम्पादनभार ग्रहण किया, तब इन्होंने राजसिंहके अनुवादका भार स्वयं लिया। उस समयसे 'वीरभारत'में नियमित रूपसे राजसिंहका अनुवाद प्रकाशित होने लगा। उसके पाठकोंने इसे खूब पसन्द किया। कितने ही हिन्दीप्रेमी केवल 'राजसिंह' पढ़नेकी इच्छासे वीरभारतके ग्राहक बन गये; उस समय इसकी बड़ी धूम थी। यदि किसी कारणवश एक-दो संख्या खाली चली जाती तो सैकड़ों तकाजेकी चिट्ठियां वीरभारतके कार्य्यालयमें आने लगतीं। दैवदुर्व्विपाकमें पड़ वीरभारतके बन्द हो जानेपर कितनेही प्रेस वाले राजसिंहके लिये लालायित हुए; कितनों होने पण्डित रामानन्दजीसे कहा, कि वह राजसिंहका अनुवाद प्रकाशित करनेका अधिकार उन्हें दें; किन्तु इससे पहले ही पण्डितजीने यह अधिकार श्रीयुत बाबू रामलालजी वर्म्मा महाशयको दे दिया था।

यहां इतना और कह देना है, कि प्रारम्भमें इस महाशयने इसके पात्रोंका नाम बदल दिया था तथा अनेकांशोंमें उसे नये ढङ्गका बनाना चाहा था ; किन्तु इस संस्करणमें अनुवादकने राज-सिंह-पुस्तकसे मिला ठीक कर दिया है ; फलत: बहुत कुछ संशो-धन-परिवर्द्धन हुआ है। मानो पुस्तक एक नई चीज हो गई है ।

और भी कितने ही विद्वानोंने राजसिंहका अनुवाद किया है, उनमें कोई तो अधूरे हैं और कोई विकलाङ्ग । जो पूर्ण हैं, उनका दाम इतना अधिक है, कि साधारण हिन्दी-पाठक उसे खरीद ही नहीं सकते ।

सन्तोषकी बात है, कि इसका मूल्य भी बहुत कम रखा गया है तथा प्रकाशकने पुस्तककी खूबसूरती, छपाई और सफाईकी ओर विशेष ध्यान दिया है, जिससे पुस्तक सर्व्वाङ्ग सुन्दर हो गई है।

कलकत्ता ;
कार्त्तिक कृष्ण ५ सं० १९६८ | नवजादिकलाल श्रीवास्तव ।

राजसिंह

वीर-चरितावली

अर्थात्

वीर-वीराङ्गना चरित्र ।

मातृभूमि भारतवर्षके वीर-वीरांगनाओंके चरित्र पढ़नेकी किसकी इच्छा नहीं होती ? किन्तु हिन्दीमें ऐसी कोई पुस्तक नहीं, जिसमें ऐसे लोगोंकी वीरत्व-जीवनी संगृहीत हों। इसी खयालसे बड़ी ही फड़कती हुई भाषामें निम्नलिखित वीर-वीरांगनाओंकी वीर-कहानियां इस पुस्तकमें सन्निवेशित की गई हैं,—(१) रानी दुर्गावती (२) रानी लक्ष्मी बाई (३) जवाहर बाई (४) कर्मदेवी (५) वीरधात्री पन्ना (६) वीर-बालक और वीर-नारी (७) राजकुमार चण्ड (८) महाराजा पृथ्वीराज (९) बादलचन्द्र (१०) रायमल (११) सिखवीर रणजीतसिंह (१२) हमीर (१३) महाराणा प्रतापसिंह (१४) छत्रपति शिवाजी प्रभृति। पुस्तकमें झांसीकी रानी लक्ष्मीबाई, मेवाड़ाधिपति क्षत्रियकुलतिलक राणा प्रताप, पञ्जाबकेशरी रणजीतसिंह, महाराज मानसिंह, छत्रपति शिवाजी प्रभृतिके सुन्दर चित्र भी हैं। इतना सब होने पर भी मूल्य सिर्फ ॥) है।

॥ श्रीः ॥

राजसिंह

पहला खण्ड

पहला परिच्छेद।

तसवीरवाली।

राजस्थानके पहाड़ोंमें छिपा हुआ रूपनगर नामक गुम-नाम छोटासा एक राज्य था। राज्य चाहे कितना ही छोटा क्यों न हो, पर प्रत्येक राज्यमें एक राजाका अवश्य ही आवश्यक होता है। रूपनगर राज्य छोटा होनेपर भी वहां एक राजा थे। इनका राज्य तो छोटा था, किन्तु नाम बड़ा था। आप "आंखके अन्धे नाम नयन सुख"-की कहावत चरितार्थ करते थे। इनका नाम था विक्रमसिंह। पाठकोंको विक्रमसिंहका परिचय हम आगे चलकर सुनायेंगे। इनका नाम सुनते ही हमारे हृदयमें इनके महलके अन्दर जानेका शौक चर्राया। इनका राज्य था छोटा, राजधानी थी छोटी, महल था छोटा; किन्तु उस महलके अन्दरका एक कमरा बहुत बड़ा और सजा हुआ था। स्वच्छ और काले सङ्गमरमर इस खूबीसे फर्शपर बिछे हुए थे, मानो बहुमूल्य गालीचा बिछा हुआ है। दीवारोंपर

भांति भांतिके बेलबूटे हरे पीले पत्थरोंसे खचित बहुत ही शोभा देते थे। उस समय ताज बीबीका रौज़ा तथा तख्तेताऊसका ही अनुकरण हुआ करता था। इसलिये दीवारोंपर भांति भांतिके पक्षी-पखेरू, भांति भांतिके बेलबूटोंपर बैठकर मानो भांति भांतिके फल खा रहे थे। कमरेकी एक ओर कीमती गालीचा बिछा हुआ था; उसपर १५।१६ स्त्रियां रंग-विरंगकी चोली-लहगां पहने ओढ़नी ओढ़े आपसमें हंसी दिल्लगी कर रही थीं। केवल चोली लहंगे तथा ओढ़नियोंकी ही जगमगाहट न थी; वरं उनकी खूबसूरतीके सामने परियांतक झेंपती थीं। यदि उनकी तुलना ही करनेका प्रयोजन हो, तो केवल इतना कहना ही बस होगा, कि किसीका तो पद्मसा मुखड़ा था, और किसीका बेला चमेलीकी तरह। इधर तो खूबसूरतीकी यह बहार थी और उधर गहनोंकी जगमगाहटसे आंखें चौंधिया जाती थीं। कोई तो "पान खा मिस्सी लगा दांतोंका रतवा कम" कर रही थीं, कोई सटक खींचकर कस्तूरी मिले हुए तम्बाकूका स्वाद ले रही थीं। कोई नाकके बेसरकी शोभा दिखानेके लिये इधर उधर मुंह फेर पद्मिनीका किस्सा कह रही थीं, कोई जड़ाऊ कर्णफूलको हिलाते हुए दूसरोंकी निन्दा कर रही थीं। कुछ स्त्रियां मिलकर हंसी-मज़ाक कर रही थीं। कारण यह था कि, एक बुढ़िया तसवीर बेचनेके लिये वहां आई थी। हाथीदांतके बने हुये पत्रोंपर रंग-विरंगकी तसवीरें खिंची हुई थीं। बुढ़िया उन्हींको बेचनेकी इच्छासे यहां आई थी। बड़े यत्नसे तसवीरोंको खरीतेसे निकालकर दिखाती थी। जितनी तसवीरें बुढ़िया दिखाती थी; स्त्रियां उनमें हरेक भाग्यवान्का परिचय पूछती थीं।

पहिली तसवीरके देखते ही युवतियोंने पूछा—"बुढ़िया! यह तसवीर किसकी है?" बुढ़ियाने कहा—"शाहंशाहकी!"

युवती बोली—"यह तो किसी बूढ़ेकी तसवीर है। कदाचित मैं इसे पहिचानती हूं।" दूसरी युवती बोल उठी—"इसे बूढ़ा क्यों कहती हो? यही तो तुम्हारे पति हैं।" इतना कहकर वह अपनी सखियोंसे कहने लगी,—"एकबार एक बिच्छू इसकी दाढ़ीमें घुस गया था, हमारी सखीने उसकी जूतियोंसे खबर ली थी।"

यह बात सुनकर युवतियोंने खूब कहकहे लगाये।

तसवीरवालीने एक और चित्र दिखाकर कहा—"यह जहांगीर बादशाहकी तसवीर है।"

युवतियोंमें एकने पूछा—"इसकी क्या कीमत है?"

बुढ़ियाने दुगुना मूल्य मांगा।

युवतीने मूल्य सुनकर कहा—"बुढ़िया तसवीर की अधिक कीमत मांगती है। असलको नूरजहाँने कितने पर खरीदा था?" बुढ़ियाको भी दिल्लगी करनेका शौक चर्राया। बोली—"मुफ्तमें?"

युवतीने कहा—"जब असल मुफ्तमें बिकी थी, तब नकल हमें कुछ देकर बेचो?"

यह बात सुनते ही युवतियां हंसने लगीं। बुढ़ियाने बिगड़कर चित्रोंको कपड़े में लपेट लिया और कहा,—"तसवीर खरीदना नहीं चाहतीं। केवल दिल्लगी ही करनेकी इच्छा है। मैं तो राजकुमारीजी के लिये तसवीर लाई हूं। उन्हींको चित्र दिखाऊंगी।"

फिर क्या था; कुल युवतियां कहने लगीं—"मैं राजकुमारी हूं, बुढ़िया! मैं राजकुमारी हूं।" बुढ़िया बेचारी इधर उधर ताकने लगी। बुढ़ियाका यह हाल देखकर युवतियां फिर हंस पड़ीं।

अचानक युवतियां चुप हो गईं—केवल एक दूसरीको देखने लगीं; मानो बर्षाके बाद बादल शान्त और स्वच्छ हुए। बुढ़ियाने इसका कारण जाननेके लिये मुंह फेरा। देखा, तो एक सुन्दरी लड़की खड़ी है। देखा, कि किसी सर्वाङ्ग सुन्दरी युवतीकी तसवीर जैसे

किसी चित्रकारने एकान्तमें बैठ कर खींची हो!

बुढ़ियाकी टकटकी बंध गई। उम्रकी अधिकताके कारण उसकी आंखोंमें धुन्ध छागया था; इसलिये उसे साफ दिखाई न दिया; नहीं तो उसे देखते ही मालूम हो जाता, कि पत्थरमें यह रंग कहां? चित्रमें ऐसी सुन्दरता कहां? पत्थरकी तो कौन कहे, फूल भी इसके सामने झेंप जाता है। थोड़ी देर बाद बुढ़ियाको मालूम हुआ, कि चित्र मुसकुरा रहा है—क्या चित्र भी हंसा करते हैं? बुढ़ियाने सोचविचार कर स्थिर किया, कि यह चित्र नहीं कोई युवती है—काली काली आंखें उसीकी ओर ताक रही थीं। अन्तमें बुढ़ियाने देखा, कि युवती मुसकुरा रही है।

बुढ़िया आश्चर्य्यमें आ अन्यान्य युवतियोंकी ओर देखने लगी। वह इतनी अचम्भित हुई थी, कि यह भी विचार न सकी, कि माजरा क्या है? जब कुछ बन न पड़ा, तब बुढ़ियाने अन्यान्य रमणियों से कहा,—"बेटी मुझ बूढ़ीसे दिल्लगी करती हो?"

एक युवतीसे रहा न गया; वह बेतहाशा खिलखिलाकर हंसने लगी। युवती हंसते हंसते लोट गई। उसे हंसते देख बुढ़ियाकी आंखोंसे आंसू टपकने लगे।

बुढ़ियाको रोते देख चित्रसे आवाज आई। आवाज ऐसी कोमल तथा नम्रतासे भरी हुई थी, कि मानो कोई देवकन्या बुढ़ियापर प्रसन्न हुई है। चित्रने बुढ़ियासे पूछा "बूढ़ी! क्यों रोती है!"

इतनी देर बाद बुढ़ियाने समझा, कि यह चित्र नहीं, कोई युवती है। शायद रानी या राजकुमारी हैं। बुढ़ियाने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। प्रणाम राजकुलको नहीं किया गया—प्रणाम सौन्दर्य्यको किया गया! बुढ़ियाने ऐसा सुन्दर सुहावना मुखड़ा देखा, जिसे देखकर प्रणाम किये बिना रहा नहीं गया।

दूसरा परिच्छेद।

चित्रकी खराबी।

जिस सुन्दरीको देखकर तसवीरवालीने प्रणाम किया ; वह रूपनगरके राजाकी कन्या चञ्चलकुमारी थी। जो युवतियां बुढ़ियासे हंसी-मजाक कर रही थीं, वह कुमारीकी सहेलियां तथा सखियां थीं। चञ्चलकुमारी सहेलियोंकी दिल्लगीको सुनकर खड़ी हंस रही थी ; पर बुढ़ियाको रोते देख बड़े प्यारसे बोली !—"बुढ़िया! क्या चाहती है ?"

सहेलियोंमें एकने कहा—"बुढ़िया तसवीर बेचने आई है !"

चञ्चलकुमारीने पूछा—"हंसी मजाकका क्या कारण है ?"

यह बात सुन कई सहेलियां चुप हो गईं। परन्तु जिसने शाहंशाहकी दाढ़ीपर जूते मारनेकी बात कही थी, उसने कहा,— "हमारा क्या दोष है ? बुढ़िया केवल पुराने जमानेके बूढ़े बादशाहोंकी तसवीरें दिखा रही है ; इससे हम हंसती थीं। क्या उसे नहीं मालूम, कि राजा-महाराजोंके यहां बादशाह तथा शाहजादोंकी हजारों तसवीरें हैं ?"

बुढ़िया बोली—"क्यों नहीं ? राजा-महाराजोंके यहां ही तो उमरावोंकी तसवीरें रहती हैं। तसवीरके रहने परभी चित्रके रसिक तसवीरें खरीदा ही करते हैं। यदि आप जैसे रईस घरानेकी नाजनियां हम गरीबोंसे तसवीर न खरीदतीं, तो हमारा गुजारा कैसे होता ?"

राजकुमारीने तसवीरोंके देखनेकी इच्छा प्रगट की। बुढ़िया कुमारीको तसवीरें दिखाने लगी। अकबर बादशाह, जहांगीर,

शाहजहां, नूरजहां, नूरमहल आदिके चित्र बुढ़ियाने दिखाये ; पर कुमारीके एक भी पसन्द न आया। आपने मुसकुरा कर कहा,—"इनकी तसवीरें हैं। हिन्दू-राजाओंकी तसवीरें दिखाओ।"

"बहुत अच्छा ; हिन्दू-राजाओंके चित्र भी देखिये—यह कह-कर बुढ़िया राजा मानसिंह, राजा बीरबल, राजा जयसिंह आदिके चित्र दिखाने लगी। राजकुमारीने उन्हें देखकर कहा कि, मैं इन तसवीरोंको न खरीदूंगी। यह तो हिन्दू राजाओंकी तसवीरें नहीं हैं ; मुसलमानोंके गुलामोंकी तसवीरें हैं !

बुढ़ियाने मुसकराकर कहा—कुमारीजी! भला हमें क्या मालूम कौन गुलाम कौन राजा है। मेरे पास जो कुछ है दिखाती हूं ; आप पसन्द कर लीजिये।

बुढ़िया तसवीर दिखाने लगी। कुमारीने राणा प्रताप, राणा अमरसिंह, राणा कर्ण, यशवन्तसिंह आदिके चित्र दिखाये। एक चित्र बुढ़ियाने छिपाना चाहा ; पर छिपा न सकी।

राजकुमारीने पूछा—"उस तसवीरको क्यों छिपाती हो?" बुढ़ियाने चुप्पी साध ली। राजकुमारीने बुढ़ियासे फिर यही प्रश्न किया।

बुढ़ियाने हाथ जोड़ विनतीकर कहा—"कुमारीजी! क्षमा कीजिये! यह तसवीर गलतीसे आ गई है—और तसवीरोंके साथ यह भी अनजाने चली आई है?

कुमारीजीने कहा—"क्यों घबराती हो, चित्र दिखाने में क्या डर है?"

बुढ़ियाने कहा—"देखनेकी आवश्यकता नहीं, आपके घरानेके चिरशत्रुकी तसवीर है।"

कुमारीजीने पूछा—"किसकी तसवीर है?" बुढ़ियाने हाथ जोड़कर कहा—"राणा राजसिंहकी।"

कुमारीजीने हंसकर कहा,—"वीर, स्त्रियोंके शत्रु नहीं होते। मैं यह तसवीर खरीदूंगी।"

बुढ़ियाने राणा राजसिंहकी तसवीर कुमारीको दी।

चित्र लेकर कुमारी बहुत देरतक उसे देखती रही। तसवीर देख वह बहुत ही प्रफुल्लित हुई। टकटकी बंध गई। एक सहेलीने कुमारीसे तसवीर मांगी। कुमारीने उसे तसवीर देकर कहा, कि यह तसवीर प्रशंसाके योग्य है।"

तसवीर सहेलियोंके हाथों हाथ फिरने लगी। राणा राजसिंहकी अवस्था कम न थी तथापि सहेलियां उनकी प्रशंसा करने लगीं।

मौका पाकर बुढ़ियाने इस चित्रका दुगुना मूल्य मांगा। लालचमें पड़कर बोली—"कुमारी! यदि वीरकी तसवीर खरीदनेकी इच्छा हो, तो मैं और एक तसवीर दिखाती हूं। इनके बराबर वीर पृथिवीपर और कोई नहीं है।"

यह कहकर बुढ़ियाने एक चित्र राजकुमारीको दिया।

कुमारीने पूछा—"यह किसकी तसवीर है?" बुढ़िया बोली, कि बादशाह आलमगीरकी!" राजकुमारीने कहा—"मैं इसेभी खरीदूंगी"

इसके बाद कुमारीने एक सहेलीसे कहा, कि बुढ़ियाको तसवीरोंका मूल्य ला दो। एक सहेली मूल्य लाने गई।

कुमारीजीने अन्यान्य सहेलियोंसे कहा—"आओ कुछ तमाशाकरें।"

कुल सहेलियां मिलकर पूछने लगीं—"कैसा तमाशा कुमारीजी!"

कुमारीने कहा—"मैं आलमगीरके चित्रको फर्शपर रखती हूं, देखें तुममें कौन लात मारकर इसकी नाक तोड़ सकती है!"

मारे डरके सखियोंका मुंह कुम्हला गया।

एकने कहा—"ऐसी बात न कहना चाहिये कुमारीजी! यदि इस बातकी खबर बादशाहके कानोंतक पहुंची, तो रूपनगरका किला मट्टीमें मिला दिया जायेगा।"

हंसकर कुमारीजीने चित्रको फर्शपर रखा और कहा—"देखें, कौन पहले लात मारता है।"

मारे डरके कोई सहेली आगे न बढ़ी। एकने विनतीकर कहा-"कुमारीजी! ऐसी बात जबानपर न लाइये!"

जेवरसे शोभित गोरे गोरे चरणोंको कुमारीने औरंगजेबके चित्र पर रखा—चित्रकी शोभा दुगुनी होगई! बस जरासा दबाव पड़ते ही चित्रके टुकड़े टुकड़े हो गये। राजपूत युवतीकी लातसे चित्र का यह हाल हुआ।

सहेलियोंने डरकर कहा—"कुमारीजी! आपने बहुत ही बुरा किया।"

कुमारीजीने मुसकुराकर कहा—"जैसे लड़कियां गुड़ियां बनाकर सांसारिक कामकाजोंका अनुकरणकर ख्याल करतीं हैं, कि हमने संसारका कुल कामकाज कर डाला; वैसे ही हमने मुगल बादशाहके मुंहपर लात मारनेकी इच्छा पूरी की।"

यह कहकर कुमारीने प्यारी सखी चम्पाकी ओर मुंह फेरकर कहा—"बालिकाओंकी इच्छा तो पूर्ण होती ही है, शादी विवाह होनेपर वह संसारका कामकाज करती हैं। क्या हमारी यह आशा पूरी नहीं होगी? क्या कभी मैं औरंगजेबके मुंहपर लात—"

कुमारीकी जबानसे बात निकलने भी न पाई थी, चम्पाने कुमारी जीके मुंहपर हाथ रख दिया। परन्तु इस कथनका अर्थ सबकी समझमें आगया। बुढ़िया बहुत ही डरी—अपने मनमें विचारने लगी, कि कैसे यहांसे चली जाऊं। जो सहेली चित्रका मूल्य लाने गई थी, वह आ पहुंची, मूल्य पाते ही बुढ़िया वहांसे खिसकी।

कमरेसे बाहर आते ही चम्पाने आकर बुढ़ियाका हाथ पकड़ा तथा एक अशरफी देकर विनतीसे कहा, बुढ़िया यह बात किसीसे न

कहना कुमारीजी नासमझ हैं; जो दिलमें आता है, कह डालती हैं; भला बुरा; कुछ नहीं समझतीं।"

बुढ़ियाने अशरफी लेकर कहा,—"भला ऐसी बातें क्या दूसरोंसे कही जाती हैं? मैं तो आप ही लोगोंके यहां मांगकर खाती हूं, भला मैं यह बात किसीसे क्यों कहने लगी!"

निर्म्मल खुश होकर लौट गई।

तीसरा परिच्छेद।

चित्रोंपर विचार।

दूसरे दिन चञ्चलकुमारी निरालेमें बैठ चित्रोंको देखने लगीं। वहां निर्म्मल भी आ पहुंची। चंचलकुमारीने चित्रोंको दिखा पूछा,—"इनमें किससे विवाह करना चाहती हो?"।

निर्म्मलने कहा,—"जिससे मैं विवाह किया चाहती थी, उसके चित्रको तो आपने लात मारकर चकनाचूर कर दिया।"

चञ्चल। क्या औरङ्गजेबसे?

निर्म्मल। इतना आश्चर्य्यित होनेका कारण?

चञ्चल। वह बड़ा बदमाश है। ऐसा पाषण्ड तो मैंने कभी देखा ही नहीं।

निर्म्मल। पाषण्डोंको वशीभूत करना ही बहादुरी है। क्या तुम्हें नहीं मालूम, कि मैं शेर पालती थी। मैं किसी न किसी दिन अवश्य औरङ्गजेबसे विवाह करूंगी।

चञ्चल । वह तो मुसलमान है ?

निर्म्मल । मेरे साथ विवाह करनेसे उसे हिन्दू बनना पड़ेगा ।

चञ्चल । बस बहुत हुआ ।

निर्म्मल । जो हो ; किन्तु उस तसवीरको आप बड़े गौरसे देख रही थीं । कारण क्या है ?

चञ्चलकुमारीने झट उस चित्रको अन्यान्य चित्रोंमें मिला दिया तथा पूछा,—"कहां, मैं तो किसी चित्रको देख नहीं रही थी ! क्या तुम मुझे बदनाम किया चाहती हो ? मैं किस तसवीरको देखती थी ?"

निर्म्मलने मुस्कुराकर कहा,—"तसवीर देखनेसे कोई बदनाम नहीं होता । राजकुमारी ! आपका क्रोध ही कहे देता है, कि आप किसी न किसी तसवीरको अवश्य देख रही थीं । न मालूम किस भाग्यवान्‌की किसमत चमकी है । तसवीरें दिखानेसे मैं बता सकती हूं, कि आप किस चित्रपर कृपादृष्टि डाल रही थीं ।"

चञ्चल । अकबर शाहके चित्रपर ।

निर्म्मल । राजपूत रमणियां अकबरको झाड़ू मारती हैं । आप उसके चित्रको कभी देखती नहीं थीं ।

यह कह निर्म्मल तसवीरोंको हाथमें ले देखने लगी । कहा,—"आप जिस चित्रको देखती थीं, उसके पीछे काला दाग है ।" काले दागको देख निर्म्मलने उस चित्रको चुन लिया तथा कुमारीको दिखा कहा, कि आप इसी चित्रको देख रही थीं । कुमारीने झुंझला-कर कहा,—"क्या तुम मुझे तङ्ग करने आई हो ? क्या मुझे तङ्ग करने हीसे तुम्हें आनन्द आता है ? मेरे सामनेसे हट जाओ ।"

निर्म्मल । मैं न जाऊंगी । आप क्यों इस बूढ़ेके चित्रको देख रही थीं ?

चञ्चल । इन्हें बूढ़ा कहती हो ; क्या तुम्हारी आखें फूट गई हैं ?

निर्म्मल चञ्चलसे दिल्लगी कर रही थी। चञ्चलको नाराज होते देख वह मुस्कुराने लगी। निर्म्मल सुन्दरी थी। उनका मुस्कुराना बहुत ही सुहावना था। निर्म्मलने हंसकर कहा,—"चित्रमें जवान मालूम होता है; किन्तु सुनते हैं, कि महाराणा राजसिंह बूढ़े हैं। उनके युवा पुत्र हैं।"

चञ्चल। क्या यह राजसिंहका चित्र है? मुझे यह बिलकुल मालूम नहीं।

निर्म्मल। कल आपहीने चित्रोंको खरीदा और आज ही भूल गईं। महाराणाकी उम्र अधिक है, तथा वह कुछ वैसे खूबसूरत भी नहीं, फिर आप क्या देख रही थीं?

चञ्चल।

महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम।
जाहि-जाहिसों मन रमै, ताहि-ताहिसों काम॥
(तुलसीदास)

निर्म्मल। मैं देखती हूं, कि तुम अपनी मृत्युका सामान आप कर रही हो। राजसिंहको चाहनेसे क्या आप राजसिंहसे विवाह कर सकेंगी?

चञ्चल। क्या कोई किसीको पानेके लिये ही प्यार करता है? क्या तुम औरङ्गजेबको विवाह करनेके लिये ही प्यार करती हो?

निर्म्मल। मैं औरङ्गजेबको ऐसा प्यार करती हूं; जैसा बिल्ली चूहेको। यदि औरङ्गजेब मेरे हाथ न आया, तो मैं समझूंगी, कि मैं भूखी ही रह गई। क्या आप भी यही चाहती हैं?

चञ्चल। मैं भी समझूंगी, कि मैंने इस जन्ममें संसारका कुछ मजा न चखा।

निर्म्मल। वाह राजकुमारी! आप तो चित्रके इश्कमें ही व्याकुल हो रही हैं!

चञ्चल। मैं या तुम ईश्वरकी इच्छाको समझ नहीं सकतीं। जो होना था; हो चुका। अब देखें, किस्मतमें क्या लिखा है।

मुझे भी यही कहना पड़ेगा। यदि चित्रको देखते ही चञ्चल-कुमारीका यह हाल हुआ, तो सचमुच ही न मालूम उसकी किस्मत-में क्या लिखा है। अनुराग स्त्री और पुरुषमें होता है; चित्र और स्त्रियोंमें नहीं। चित्रको देखकर असलका ध्यान हो सकता है। सनातनधर्म्मावलम्बी इस बातको अच्छी तरह जानते हैं। पाठक! यदि आपमें किसी का अनुराग हो, तो आप आंखें मींच कर देख सकते हैं, कि आपके सामने उसकी तसवीर खिंची हुई है। क्या चञ्चलकुमारीका वैसा ही हाल हुआ था? नतो हम अठारह वर्षकी युवतीकी इच्छा को समझ सकते हैं; न किसीको समझा सकते हैं।

चञ्चलकुमारीकी इच्छा चाहे जो हो; किन्तु हम यह बात अवश्य कहेंगे, कि कुमारीने चित्रपर अनुराग दिखाकर अच्छा नहीं किया। कारण, चञ्चलपर बहुत सी आपदायें आयेंगी। आगे चल हम उनका वर्णन करेंगे।

चौथा परिच्छेद।

चालाक बुढ़िया।

बुढ़िया तसवीर बेच आगरे लौट आई। उसका मकान आगरे था। देश-विदेश फिर चित्र बेचा करती थी। वह रूपनगरसे आगरे गई। वहां जा अपने पुत्रसे मिली; उसका पुत्र दिल्ली-

का एक दुकानदार था। बड़े बुरे मुहूर्त्त बुढ़िया रूपनगर चित्र बेचने गई थी। चञ्चलकुमारीका व्यवहार उसने शुरूसे आखीरतक देखा था। वह हाल किसीसे बिना कहे उसका दिल घबराने लगा। यदि निर्म्मल उसे अशरफी देकर विदा न करती, तो शायद वह चञ्चलकुमारीके व्यवहारको भूल जाती; कि जब निर्म्मलने उसे अशर्फी दी है, तब अवश्य ही वह उस बातको प्रकाश करनेके लिये बहुत ही व्याकुल हुई है। बुढ़ियाको यह बात भलीभांति मालूम थी, कि मैंने अशरफी लेकर वादा किया है, कि मैं चञ्चल-कुमारीकी बात प्रकाश न करूंगी। कारण उससे चञ्चलकुमारीका अनिष्ट हो सकता है। बादशाहके कानोंतक बात पहुंचनेसे न मालूम चञ्चलकुमारीका क्या हाल होगा। पहले तो बुढ़ियाने यह बात किसीसे न कही। अन्तमें जब उसका पुत्र खाने लगा, तब बुढ़िया उसके पास आ बैठी तथा अपने पुत्रसे कहने लगी, कि आज जैसी तरकारी बनी है, वैसी मैंने रूपनगरसे आनेके समय बनाई थी। बेटेने कहा,—"अम्माजान! आपने फरमाया था, कि आप रूपनगरका कुछ हाल कहेंगी।"

बुढ़िया बोली,—"बेटा चुप रह। ऐसी बात जुबानपर न लाओ, न मालूम मैंने तुझसे क्या कहा था।" बुढ़िया भूल गई थी, कि एक समय जब उससे बिना कहे रहा नहीं जाता था, तब उसने पुत्रसे कुछ कह दिया था। पुत्रने कहा,—"चुप रहनेकी क्या बात है? ऐसी बात क्या है?"

बुढ़िया। बेटा! सुनने लायक बात नहीं है।

बेटा। जब नहीं कहना चाहती हो, तब जाने दो।

बुढ़िया। और कुछ नहीं, केवल रूपनगरकी राजकुमारीकी बात है।

बेटा। क्या कुमारी बहुत खूबसूरत है? या कोई और बात है?

बुढ़िया। नहीं; वह बड़ी मगरूर है। मैं और कुछ न कहूंगी।

बेटा। कुमारी मगरूर है, तो मेरा उससे क्या? इस बातके सुननेसे क्या फायदा?

बुढ़िया। केवल मगरूर ही नहीं; वरं उसने बादशाहको बेइज्जत किया है।

बेटा। जहांपनाहको गालियां दी थीं?

बुढ़िया। गालियोंसे भी बढ़कर।

बेटा। मार तो सकती नहीं; और क्या किया होगा?

बुढ़िया। मारसे भी ज्यादा।

बेटा। वह क्या?

बुढ़िया। बेटा और मुझसे कुछ न पूछो। मैंने उसका नमक खाया है।

बेटा। नमक खाया है! कैसे?

बुढ़िया। उसने अशरफी दी थी।

बेटा। क्यों मा!

बुढ़िया। जिससे मैं उसकी यह बात किसीसे न कहूं?

बेटा। कुछ तो आपने मुझसे भी कहा है। आधी अशरफी मुझे भी दीजिये, नहीं, तो मैं सबसे कह दूंगा।

बुढ़िया। मैं अशरफीका हिस्सा क्यों देने लगी?

बेटा। तो बताइये क्या बात है?

बुढ़िया। और कुछ नहीं बादशाहकी तसवीर—तोबह तोबह!

बेटा। क्या चित्र तोड़ डाला?

बुढ़िया। लात मारकर; तोबह! तोबह! मैंने यह क्या किया! मुझे तो यह बात कहनी न चाहिये थी!

बेटा। मुझसे कहनेमें कोई खराबी नहीं। क्योंकि, आप मा हैं और मैं बेटा।

बुढ़िया। बेटा! यह बात किसीसे न कहना।

बेटा। आप खातिरजमा रखें ; मैं किसीसे न कहूंगा।

बस बुढ़ियाने चित्रकी खराबीका कुल हाल कह दिया।

पांचवां परिच्छेद ।

दरिया बीबी ।

बुढ़ियाके पुत्रका नाम खिज़िर शेख था। वह चित्रकार था। उसकी दुकान दिल्लीमें थी। आगरेमें दो दिन रह फिर वह दिल्ली चला गया। उसकी दुकानमें उसके साथ एक स्त्री रहा करती थी। स्त्री का नाम फातिमा था। खिजिरने बुढ़ियासे रूपनगरकी जो बातें सुनी थीं, सब फातिमाको कह सुनाईं। कुल हाल कह खिजिरने फातिमासे कहा,—दरिया बीबीसे आकर कहो, कि यह समाचार बेगम साहबाको जा सुनाये। कुछ न कुछ अवश्य हाथ लगेगा।

दरिया बीबी वहीं रहा करती थी। खिजिरकी दुकानसे दरिया बीबीके मकान जानेकी एक छिपी राह थी; इसलिये फातिमा परदानशीन होनेपर भी दरियाके घर जा पहुंची।

खिदिर और फातिमाका परिचय देनेका प्रयोजन नहीं; किन्तु दरिया बीबीके परिचयका विशेष प्रयोजन है। दरिया बीबीका नाम दरीउन्निसा था; किन्तु उसे कोई दरीउन्निसा न कहता था। लोग यही जानते थे, कि उसका नाम दरिया बीबी है। दरिया बीबीके मा-बाप कोई न था। उसके केवल एक बड़ी बहन

और एक बुढ़िया थी, जिसे फूफी खाला जो चाहें कह सकते हैं। उस मकानमें कोई मर्द न था। दरिया बीबीकी उम्र १७ बरस की थी; वह नाटी थी; इसलिये लोग समझते थे, कि उसकी अवस्था पन्द्रहसे अधिक नहीं। दरिया बीबी सदा फूलकी तरह हरीभरी रहती।

दरिया बीबीकी बहन सुरमा और इत्र बनाना जानती थी। उसीको बेच, वह दोनो गुजारा करती थीं। इक्के या डोलीपर चढ़ वह अमीर-उमरावोंके यहां जा सुरमा बेच आया करती थी। कभी बुरका डाल पैदल भी जाया करती थी। बादशाहके महलमें किसीको जानेका अधिकार न था। बाहरी स्त्रियां भी जाने न पाती थीं। केवल दरिया बीबी जा सकती थी; इसका कुछ कारण था। उसे हम आगे चलकर लिखेंगे।

फातिमाने चञ्चलकुमारीका कुल हाल दरिया बीबीसे कहा तथा यह भी कह दिया, कि समाचार बेंच धन लाना चाहिये।

दरिया बोली,—"रङ्गमहलमें जाना पड़ेगा; परवाना कहां है"?

फातिमाने कहा—"परवाना तुम्हारे ही पास होगा।"

दरिया बीबीने सन्दूक खोल एक कागज निकाल कहा,—"शायद यही परवाना होगा।"

दरिया बीबी कुछ सुरमा और परवाना ले बाहर निकली।

दूसरा खण्ड

पहला परिच्छेद ।

नजूमी ।

चांदनी रातमें यमुनाकिनारेकी प्रधान नगरी दिल्ली बहुत ही शोभा दे रही थी। हजारों मीनार-मकानादि चांदनीमें चमक रहे थे। कुतुब-मीनारकी चमकसे आंखें चौंधिया जाती थीं। जुमा-मसजिदकी मीनारें अजब शोभा दे रही थीं। सड़कोंपर चांदनी खिली हुई थी। दुकानोंपर मशालें जल रही थीं। फूलकी सुगन्धि न केवल राहियोंको मोहित करती थी, वरं कुल दिल्ली इसका मजा चख रही थी। संगीतकी मधुर-ध्वनिके साथ बाजोंकी तान मनको हर लेती थी। इसीसे कहते हैं, कि संसारनरकमें कभी कभी स्वर्ग-का आराम मिलता है। फूलोंकी बहुतायत, इत्र-गुलाब आदिकी खुशबू, नाच-तमाशेकी बहार, अजब मजा देती थी। जिधर जाओ, उधर होसे खुशबूको लिये हुए भीनी-भीनी हवा तन-मनको न केवल आनन्द देती थी, वरं प्रफुल्लित तथा उत्साहित करती थी। घोड़े, इक्के, पालकी, हाथी आदिका इतना जमघट था, कि पैदल चलने-वालोंके नाकों दम होजाता था।

शहरके बीचोबीच चांदनी-चौक था। वहां कितने ही तुर्की सवार पहरा दे रहे थे। पृथिवीमें ऐसी कोई चीज न थी, जो वहां न बिकती हो। कहीं मदारी अपने हथकण्डे दिखा रहे थे, कहीं गवैये तान-लयसे गाकर लोगोंको मोहित करते थे। किन्तु ज्योतिषियोंके पास लोगोंकी बड़ी भीड़ थी; मुगल बादशाह ज्योतिषियोंका बड़ा आदर करते थे। शुभ-सायत और शुभ-मुहूर्त्त बिना देखे वह कोई काम ही न करते। हिन्दू और मुसलमान ज्योतिषी, दोनोंका वह समान आदर किया करते थे। जिन घटनाओंका उल्लेख इस पुस्तकमें होगा, उसके कई वर्ष बाद औरङ्गजेबके छोटे पुत्र अकबरने बलवा किया। पचास हजार राजपूतोंने उसकी सहायता की थी। औरङ्गजेबके साथ बहुत कम सिपाही थे; किन्तु ज्योतिर्विदोंके कहनेसे अकबरने लड़ाईके मैदानमें पहुंचनेमें कुछ विलम्ब कर दिया और इसी विलम्बके कारण उसे हार जाना पड़ा।

सड़कके किनारे हजारों ज्योतिषी पत्रा लिये बैठे थे। कोई तो हथेलियोंकी रेखा देखकर भविष्य गिन रहे थे, कोई पत्रा देख शुभ-सायत बता रहे थे और कोई फाल डालकर भविष्यत्‌की घटनाओंका उल्लेख कर रहे थे। हजारों स्त्री-पुरुष भविष्यकी उन्नति तथा अवनतिका हाल उनसे पूछ रहे थे। एक ज्योतिषीके पास बड़ी भीड़ थी। घूंघट निकाले एक रमणी भीड़के आसपास घूम रही थी। ज्योतिषीके पास जानेकी इच्छा तो थी, परन्तु जानेका मौका न था। ठीक उसी समय एक सवार वहां आ पहुंचा।

सवार जवान था। शायद मुसलमान होगा। उसका सुन्दर मुखड़ा देख हजारों स्त्रियां उसकी ओर देखने लगीं। उसकी पोशाक भी अच्छी थी। मालूम होता था, कि यह सिपहसालार या पांच-दश हजारी सेना नायकोंमें है।

बहुत जमावके कारण उसे घोड़ेको बहुत सम्हालकर ले जाना पड़ा। जो युवती भीड़के इधर-उधर टहल रही थी, उसने घूंघटकी ओटसे उसे देखा। देखते ही उसने घोड़ेकी लगाम पकड़ ली और कहा,—"खां साहब! सलाम। किधर तशरीफ ले जारहे हैं?"

सवारका नाम था, मुबारक अली। मुबारकने कहा,—"तुम कौन हो?"

युवतीने कहा,—"या अल्लाह! यह मुझे पहचानते भी नहीं!"

मुबारक। दरिया! तुम्हारा यहां कैसे आना हुआ?

दरिया। योंही चली आई।

मुबारक। क्यों? क्या सबब है?

दरिया। मैं सब जगह जाया-आया करती हूं। आप तो मुझे कहीं जानेसे नहीं रोकते।

मुबारक। जब तुमसे कोई नाता-रिश्ता ही नहीं, तब मैं तुम्हें रोकने क्यों लगा?

इसके बाद मुबारकने सिर झुकाकर कहा,—"रुपये चाहियें?"

दरिया। मैं तुम्हारे रुपयेको हराम समझती हूं।

मुबारक। यहां मुझसे बातचीत करनेकी क्या जरूरत थी?

दरिया। घोड़ेसे उतरें तो कहूं। दरियाके आदेशानुसार मुबारक घोड़ेसे उतर दरियाके पास जा बोला,—"क्या कहना चाहती हो?"

दरिया। यहां एक ज्योतिषी हैं। चलो उनसे पूछें, कि तुम्हारी किस्मत में क्या लिखा है?

मुबारक। मेरी किस्मतसे तुम्हें क्या मतलब? अपनी किस्मत-का हाल पूछो।

दरिया। मैं अपनी किस्मतका हाल जानना नहीं चाहती हूं।

यह कह दरिया मुबारकका हाथ पकड़ खींचने लगी।

मुबारकने कहा,—"साईस साथ नहीं लाया।"

दो-तीन बालक वहीं गोली खेल रहे थे। एकसे मुबारकने कहा,—"थोड़ी देर मेरा घोड़ा पकड़ो। मैं तुम्हें बहुत सी गोलियां खरीद दूंगा।" मुबारकका यह कहना ही था, कि एक बालक आ घोड़े पर चढ़ बैठा। मुबारक उसको मारनेके लिये लपका। किन्तु घोड़ेने ऐसी दुलत्ती चलाई, कि वह चारोंखाने चित्त गिरा। मुबारक दरियाको साथ ले ज्योतिषीके पास गया। ज्योतिषीने बहुत देरतक हथेलीकी रेखायें देखीं और अन्तमें कहा,—"आप शीघ्र विवाह कीजिये।" दरियाने मुंह फेरकर कहा,—"विवाह होगया है।"

ज्योतिषी ने कहा,—"यह बात किसने कही?"

मुबारक बोला,—"एक पागल स्त्रीने। क्या आप बता सकते हैं कि मेरी शादी किससे होगी?"

ज्योतिषीने कहा,—"आप किसी शाहजादीसे विवाह कीजिये।"

मुबारकने पूछा,—"शाहजादीसे विवाह करनेसे क्या लाभ होगा?"

ज्योतिषीने कहा,—"उन्नति होगी।"

मुंह फेरकर फिर दरिया बोली,—"मृत्यु कब होगी?"

ज्योतिषीने पूछा,—"यह कौन है?"

मुबारकने कहा,—"वही पगली।"

ज्योतिषी। पगली नहीं; शायद ज्योतिषी है। मैं अब आपकी रेखाओंका विचार न करूंगा।

मुबारक इसका अर्थ कुछ समझ न सका; ज्योतिषीको कुछ दक्षिणा दे वह वहांसे चला गया।

दरियाकी खोज की, किन्तु उसका कुछ पता न चला। बालकोंको दो-चार पैसे दे मुबारक घोड़े पर सवार हो किलेमें चलागया।

दूसरा परिच्छेद ।

जेबुन्निसा ।

दरिया क्योंकर समाचार बेचा करती थी ; इसका जवाब देनेसे पहले मुगल-सम्राट्के रङ्गमहलका हाल लिखूंगा ।

भारतवर्षकी रमणियां राज्यशासन करनेमें राजा-महाराज तथा सम्राटोंसे कम नहीं समझी जातीं । युरोपमें तो जेनोबिया, इसाबेला अथवा एलीजबेथ कदाचित् मिलती हैं ; किन्तु भारतवर्षकी स्त्रियां बहुत दिनोंसे राज्यशासन करती आई हैं । मुगल-सम्राटोंकी कन्याएं राज्यशासन करनेके लिये ही प्रसिद्ध हैं । औरङ्गजेबके दो बहनें थीं । एकका नाम जहांनारा और दूसरीका रौशनारा था । शाहजहां बादशाहके राज्यशासनमें जहांनारा साहाय्य किया करती थी । बादशाह सब विषयोंमें उसका परामर्श लिया करते । उसीके परामर्शानुसार कामकर शाहजहां इतने प्रसिद्ध हुए थे । मुगल-सम्राट्की बेटियां आजकलके राजनीतिविदोंसे किसी तरह कम न थीं । उनमें दोष केवल यही था, कि वह विलासिनी थीं । जहांनारा पिताकी बहुत साहाय्य करती ; किन्तु उसका चालचलन अच्छा न था । युरोपीयपर्य्यटकोंने उसका हाल बहुत कुछ लिखा है । मैं अब उन्हें दुहराकर अपनी लेखनी खराब करना नहीं चाहता ।

रौशनारा शाहजहांकी दुश्मन थी । वह औरङ्गजेबकी पक्षपातिनी थी । रौशनारा भी जहांनाराकी तरह ही राजनीतिविद् थी ; बदचलन भी वैसी ही थी । जब पिताको गद्दीसे उतारकर औरङ्गजेब

सिंहासन पर बैठा, तब रौशनाराने ही उसकी सहायता की थी। औरङ्गजेब भी रौशनाराकी बातें माना करता था। औरङ्गजेबके गद्दीपर बैठते ही बादशाही रौशनाराके हाथ आई।

रौशनाराकी किस्मत बहुत खराब थी। उसके हाथ बादशाही आते ही औरङ्गजेबकी कन्या उसकी शत्रु बन गई। औरङ्गजेबके तीन कन्यायें थीं। छोटी बहनोंका विवाह औरङ्गजेबने अपने भतीजोंसे कर दिया था; किन्तु बड़ीने शादी न की। अपनी फूफिओंकी तरह उसने भी भांति-भांतिके फूलोंका मजा चखना ही उचित समझा।

कभी कभी रौशनारा और जेबुन्निसाकी निगाह एक ही फूलपर पड़ जाया करती थी, दोनोंकी दुश्मनीका यही कारण था। रौशनाराके चरित्रका हाल जेबुन्निसाने अपने पितासे कहा। फलतः रौशनारा इस लोकसे अदृश्य हुई। रौशनाराके विदा होते ही जेबुन्निसा बादशाह बन बैठी। अब जेबुन्निसा जिस फूलको चाहती, उसीको अपने गलेका हार बनाती थी। अब कोई उसके विरुद्ध बोलने वाला रह न गया था।

रङ्गमहलमें हिजड़ोंके सिवा कोई मर्द जाने न पाता था। केवल तातारी औरतें या हिजड़े पहरेपर नियत किये जाते। हिन्दू राजा-महाराज भी तातारी स्त्रियोंको पहरा देनेके लिये नियत किया करते थे। इन तातारी स्त्रियोंको सरदार जो स्त्रियां नियत होती थीं, उनका रुतबा पांच या दश हजारी जैसा हुआ करता था। इसी पदपर रौशनारा नियत थी। रौशनाराके विदा होते ही यह पद जेबुन्निसाको मिला। यही कारण था, कि जेबुन्निसा जो चाहती, कर डालती; कोई बोलनेवाला न था। पहरेवाली स्त्रियां उसकी अधीनतामें थीं। वह जिसे चाहती, उसीको रङ्गमहलमें बुला सकती थी।

दो तरहके मनुष्य रङ्गमहलमें जाने पाते थे। एक वह, जिन्हें जेबुन्निसा चाहती थी, और दूसरे वह जो खबरें बेचा करते थे। खबरें बेचनेवालोंमें औरत-मर्द दोनों हुआ करते थे।

हम कह चुके हैं, कि जेबुन्निसा राजनीतिविद् थी। मुगल-साम्राज्यका शासनभार उसीपर था। पठान इतिहास-लेखकोंने इसको "नियामक" नक्षत्र कहा है। राजनीतिविदोंको खबरोंकी बड़ी आवश्यकता रहती है। उन्हें यह खबर रखना पड़ती है, कि राज्यमें इस समय कैसा आन्दोलन हो रहा है। रामचन्द्रसे लेकर आज-तकके कुल राजाओंका यही कायदा है। रामचन्द्रके समय प्रधान राजनीतिविद् थे, दुर्मुख। और आजकलके प्रसिद्ध राजनीतिविदों-में विसमार्क गिने जाते हैं। जेबुन्निसाको यह बात अच्छी तरह मालूम थी, कि राज्यकी खबर रखे बिना राजनीतिविद् होना कठिन है। इसी कारण यह संवाद खरीदा करती थी। संवाद इकट्ठा करनेके लिये इसने कई कर्म्मचारियोंको नियत कर रखा था। उन कर्म्मचारियोंमें खिजर शेखका भी नाम था। खिजरकी मा जहां-तहां बेचने जाया करती थी। खिजर अपनी मातासे सब स्थानोंकी खबर पाता था। दरिया बीबीका बहन भी इत्र और सुर्मा बेचते समय संवाद इकट्ठा करती थी। इन संवादोंको दरिया जेबुन्निसाके पास बेच जाया करती थी। जेबुन्निसा प्रतिवार कुछ न कुछ ईनाम दिया करती थी। हमने इसीको संवाद बेचना कहा है। संवाद बेचनेके कारण ही दरिया बीबीको रङ्गमहलमें जानेका परवाना मिला था। परवानेमें लिखा था, कि दरिया बीबी सुर्मा बेचनेके लिये रङ्गमहल-में आ सकती है।

रङ्गमहलमें जाते समय दरियाने देखा, कि मुबारक भी रङ्ग-महलमें गया है। मुबारकको रङ्गमहलमें जाते देख वह ठहर गई; थोड़ी देर बाद रङ्गमहलमें गई।

दरियाने अन्दर जाकर खबर पाई, कि मुबारक जेबुन्निसाके पास गया है। दरिया वृक्षवाटिकामें छिपकर देखने लगी, कि देखें मुबारक क्या करता है।

तीसरा परिच्छेद।

अर्थमें अनर्थ।

दिल्लीका सारांश किला है; किलेका सारांश महल। इस महलकी थोड़ी सी जगहमें इतना अर्थ तथा सौन्दर्य्य है, कि कुल भारतवर्षको छान डालनेसे भी उतना अर्थ, सौन्दर्य्य और पाप मिलना कठिन है। महलोंमें रङ्गमहलका सौन्दर्य्य सबसे बढ़-चढ़कर था। इसे कुबेर और कन्दर्पका राज्य कहना चाहिये। चन्द्र-सूर्य्य वहां न घुसने पाते थे—उनकी किरणें तक वहां फटकने न पातीं, वायुको भी वहां जानेका अधिकार न था। यम कभी कभी वहां जा पहुंचते थे; किन्तु बहुत छिपकर। न तो ऐसा महल कहीं था, न ऐसा सौन्दर्य्य। उर्व्वशी, मेनका आदि भी वहां जानेमें झेंपती थीं; किन्तु यह स्थान पापसे परिपूर्ण था। फर्श, पत्थरके बेलबूटे खचित दीवारें, अजीब शोभा दे रही थीं। हीरा, जवाहिरात आदिसे पंछी-पखेरुओंकी आंखें बनाई गई थीं। इसके उपरान्त शीशेकी इतनी बहार थी, कि इसे आजतक लोग शीशमहल कहते हैं। चन्द्रातप चांदीके तारसे बिने हुए थे। उनमें मोतीकी झालरें लटक रही थीं। परन्तु फूलोंकी झालरोंके सामने

मोतियोंका भी रङ्ग फक हो गया था। फर्शपर गलीचा बिछा हुआ था; गलीचेपर हाथी-दांतका पलंग शोभा दे रहा था। पलंगको चारो ओर छोटी-छोटी मेजें सजी हुई थीं। उन मेजोंपर इत्रदान, गुलाब-पास, फूलदान आदि बहुत करीनेसे सजे हुए थे। पलंगपर कामदार चद्दर बिछी हुई थी। मखमलके मुरस्से और तकिये लगे हुए थे। शरबतका गिलास हाथमें लिये हुए, खिड़कीके पास बैठ जेबुन्निसा प्रकृतिकी शोभा देख रही थी। इसी समय मुबारकने आकर सलाम किया।

जेबुन्निसाका दिया हुआ पान-इत्रादि ले मुबारक कृतार्थ हुआ।

जेबुन्निसाने कहा—"बेबुलाये कैसे आये?"

मुबारक। माफ कीजिये; कभी-कभी बेबुलाये भी आना पड़ता है; किन्तु सब नहीं; भिक्षुक ही बेबुलाये आते हैं।

जेबुन्निसा। प्यारे मुबारक! तुम क्या भीख मांगते हो?

मुबा०। आज्ञा दीजिये, कि मुल्ला हम दोनोंका हाथ मिला दें।

जेबु०। फिर वही बात! क्या तुम नहीं जानते, कि शाहजादियां विवाह नहीं करतीं।

मुबा०। आपकी छोटी बहनोंने तो किया है?

जेबु०। उन्होंने शाहजादोंसे विवाह किया है। शाहजादियां शाहजादोंसे विवाह कर सकती हैं। पांच हजारी मनसबदारोंसे उनका विवाह हो नहीं सकता।

मुबा०। आप मालिके मुल्क हैं। आप जो चाहें, कर सकती हैं।

जेबु०। मैं बादशाहसे अनुचित अनुरोध कर नहीं सकती।

मुबा०। क्या ऐसा करना उचित है?

जेबु०। क्या!

मुबा०। क्या पाप करना उचित है?

जेबु०। कौन महापाप कर रहा है?

मुबारकने शिर झुका लिया। अन्तमें कहा,—"आप समझ-दार हैं ; क्या यह बात आप नहीं समझतीं ?"

जेबुन्निसा। यदि इसे पाप समझते हो, तो मेरे पास न आया करो।

मुबारकने विनीत प्रार्थना करते हुए कहा,—"यदि मुझमें शक्ति होती, तो मैं न आता। मैं तो आपके कदमोंमें बिक चुका हूं।"

जेबुन्निसा। यदि तुम बिक चुके हो, यदि तुम मेरे खरीदे हुए हो, तो मेरा कहा माना करो।

मुबा०। यदि मुझे ही यह पाप भोगना पड़ता, तो कोई बात न थी ; किन्तु मैं आपको अपनेसे भी अधिक चाहता हूं।

जेबुन्निसा यह बात सुन बहुत हंसी तथा बोली,-"शाहजादियोंके पास भी पाप फटकने नहीं पाता।" मुबारकने कहा,—"पाप-पुण्य अल्लाह का हुक्म है।"

जेबुन्निसा। अल्लाहने पाप-पुण्य कमीनों,—काफिरोंके लिये बनाया है। क्या मैं हिन्दू, ब्राह्मण-क्षत्रियकी बेटी हूं, कि एकसे शादीकर सदा उसीकी दासी बनी रहूं तथा अन्तमें उसीकी चितापर जलकर मर जाऊं। अल्लाहकी यदि यह मरजी होती, तो वह मुझे शाहजादी न बनाते।

मुबारक यह सुनकर बहुत ही अचम्भित हुआ ; ऐसी बात उसने इससे पहले कभी सुनी न थी। पापसे भरी हुई दिल्लीमें भी उसने ऐसी बात किसीसे सुनी न थी। यदि और कोई उससे यह बात कहता, तो वह उसपर बहुत बिगड़ता ; किन्तु वह जेबुन्निसाकी खूबसूरतीके समुद्रमें गोता लगा चुका था ; वह आंखें गंवा चुका था। उससे कुछ कहते न बना। जेबुन्निसाने कहा,—"वह बात छोड़ो, मुझे कुछ और कहना है सुनो, यदि फिर कभी ऐसी बात सुनो तो—"

मुबारक। नाराज होनेका क्या प्रयोजन है? आपके बिगड़नेसे मेरे तनसे शिर जुदा कर दिया जायेगा; किन्तु यह आप अच्छी तरह जानती हैं, कि मैं मृत्युसे नहीं डरता।

जेबु०। क्या मृत्युसे बढ़कर कोई सजा नहीं?

मुबा०। है; तुम्हारा वियोग।

जेबु०। ऐसी बात कहनेसे वैसा होनेकी सम्भावना है।

मुबारक समझ गया, कि जुदा होते ही मृत्यु होगी। यदि पापी समझ वह जेबुन्निसाको परित्याग करे, तो निश्चय ही वह फांसीपर लटका दिया जायेगा। जेबुन्निसा ही बादशाह है। वह औरङ्गजेबसे जो कहेगी, उसे उसको मानना ही पड़ेगा; किन्तु मुबारक मृत्युसे डरता न था। केवल उसमें यह शक्ति न थी, कि वह शाहजादीको परित्याग कर सके; क्योंकि वह उसे बहुत ही चाहता था। इस पापसे छुटकारा पाना उसके लिये कठिन था।

शिर झुका मुबारकने कहा,—"शाहजादीजी! आप अनुग्रह-कर जितनी दया कर सकें, कीजिये; मेरे लिये वही बहुत है। केवल इतना याद रखिये, कि गरीब अधिककी आशा करते हैं। ऐसा कौन दरिद्र है, जो दुनियाकी बादशाही नहीं चाहता?

प्रसन्न होकर शाहजादीने मुबारकको पुरस्कार दिया। मधुर प्रणय सम्भाषणके बाद मुबारकको पान और इत्र दे विदा किया।

जेबुन्निसाके महलसे बाहर आते ही दरियाने मुबारकका हाथ पकड़ धीरेसे पूछा,—"शाहजादीसे विवाहका क्या स्थिर हुआ?" मुबारकने आश्चर्यमें आ पूछा,—"तू कौन है?"

दरियाने कहा,—"वही दरिया।"

मुबा०। शैतान! यहां से दूर हो!

दरियाने कहा,—"क्या तुम्हें मालूम नहीं, कि मैं समाचार बेचा करती हूं?"

मुबारक कांप उठा ; किन्तु दरियाने कहा,—"शाहजादीके कब विवाह होगा ?"

मुबा० । कौन शाहजादी ?

दरिया । शाहजादी जेबुन्निसा साहबा । क्या शाहजादी जेबुन्निसा-को तुम नहीं जानते ?

मुबारक । मैं तुझे यहीं मार डालूंगा ।

दरिया । तब मैं चिल्लाऊं ?

मुबा० । अच्छा मैं खून न करूंगा । बता, तू किसके यहां समाचार बेचने आई है ?

जेबु० । बतानेके लिये ही तो खड़ी हूं । मैं हजरत जेबुन्निसा साहबाके पास समाचार बेचने आई हूं ।

मुबा० । क्या खबर बेचेगी ?

दरिया । कहूंगी, कि मुबारक ज्योतिषीके यहां अपना भविष्य पूछने गये थे । ज्योतिषीने उनसे कहा था, कि शाहजादीसे विवाह करो ; तुम्हारी तरक्की होगी ।

मुबा० । क्यों मुझपर जुल्म करती है ? मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है ?

दरिया । क्या बिगाड़ा है ? तुमने मेरा जो बिगाड़ा है, उससे बढ़कर अनिष्ट स्त्रियोंका और क्या हो सकता है ?

मुबा० । क्यों प्यारी ! मेरे ऐसे कितने ही हैं ।

दरिया । ऐसा पापी पृथिवीपर कोई नहीं ।

मैं पापी नहीं ; किन्तु यहां खड़े-खड़े अधिक बात हो नहीं सकती । किसी और जगह मिलना ; मैं तुझसे सब बातें कहूंगा ।

यह कहकर फिर मुबारक जेबुन्निसाके पास लौट गया । जेबुन्निसासे बोला,—"क्षमा कीजियेगा । मैं यह कहने आया हूं, कि दरिया बीबी आपसे मुलाकात करनेके लिये खड़ी है । अभी आपसे

मुलाकात करेगी । वह पागल है, यदि उसने मेरी कोई निन्दा की, तो मुझसे बिना पूछे, मुझपर क्रोध न कीजियेगा।"

जेबुन्निसा। मुझमें यह शक्ति नहीं, कि मैं सजा दे सकूं। यदि मैं तुमसे नाराज हूंगी, तो स्वयं मुझको कष्ट उठाना पड़ेगा। मैं तुम्हारी निन्दा सुनती ही नहीं।"

मुबा०। इस दासपर सदा ऐसा ही अनुग्रह रखियेगा।

इतना कहकर मुबारक चला गया

चौथा परिच्छेद।

संवाद-विक्री।

जो तातारी स्त्री नङ्गी तलवार लिये जेबुन्निसाके दरवाजेपर पहरा दे रही थी, उसने दरियासे कहा,—"इतनी रातको क्यों आई हो ?"

दरियाने कहा,—"तुझसे क्या कहूं? शाहजादीको खबर कर।"

तातारीने कहा,—"जाओ दूर हो,—मैं खबर न दूंगी।"

दरियाने कहा—"बिगड़ती क्यों है? तेरे नजर फेरते ही काबुल, कन्दहार फतह हो सकता है। इसके सिवा अब तो हाथमें ढाल-तलवार है; जो चाहे, कर सकती है। देख; मेरे पास परवाना है; शाहजादी साहिबाको खबर कर दे।"

तातारी मुसकराई। बोली,—"मैं तुम्हें भी पहचानती हूं और तुम्हारे परवानेको भी। इस आधी रातको शाहजादी साहबा सुर्मा न

खरीदेंगी ; कल सवेरे आना। रातको अपने प्यारेके पास आओ, और यदि कोई न हो तो—

दरिया। तू जहन्नममें जा। क्या तू खयाल करता है, कि मैं बिना जरूरत रातको यहां आई हूं ; आधी रातका काम है ; इसीलिये आधी रातको यहां आई हूं।

तातारीने धीरेसे दरियासे कहा,—"इस समय बेगम साहबा आनन्दमें होंगी।"

दरिया। मैं सब जानती हूं ? तुझे जरूरत हो, तो तू भी मुंह खोल।

दरियाने उढ़नीके भीतरसे एक शीशी निकाल तातारीको शराब पिलाई। तातारीने शराब पीकर कहा,—"बिसमिल्लाह ! बहुत अच्छा शरबत है !"

फिर तातारी बोली,—"ठहरो खबर देती हो।"

तातारीने कमरेमें जा देखा, कि जेबुन्निसा फूलोंका कुत्ता बना रही है। उसका मुंह मुबारकजैसा है और उसकी दुम बादशाह की पगड़ीकी कलगीकी तरह। जेबुन्निसाने तातारीको देखकर, कहा,—"नाचनेवालियोंको बुला ला।"

रङ्गमहलकी हर एक बेगमें जी बहलानेके लिये नर्त्तकियोंको बुला सकती थीं। तातारीने कोर्निशकर कहा,—"जो आज्ञा। दरिया बीबी हाजिर हैं। हुक्म हो तो बुलाऊं।"

जेबुन्निसा। क्या उसने कुछ इनाम दिया है ?

तातारीने लज्जित हो उढ़नीमें मुंह ढांक लिया। जेबुन्निसा-ने कहा,—"पहले दरियाको बुला ; नर्त्तकियोंको अभी रहने दे।"

दरिया आ सलामकर फूलके कुत्तेकी ओर देखने लगी। शाह-जादीने दरियासे पूछा,—"कैसा कुत्ता बना है दरिया ?"

दरियाने फिर अभिवादनकर कहा,—"ठीक मनसबदार मुबारक-की शकलका !"

जेबु०। बहुत ठीक ; तू लेगी !

दरिया। किसे दीजियेगा ; कुत्ते को या मनुष्यको ?

जेबुन्निसा कुछ नाराज तो हुई सही ; पर संभल गई। कहा,—"जिसकी तुझे जरूरत हो।"

दरिया। कुत्ता आप रखिये ; मनसबदारको मुझे दीजिये।

जेबु०। कुत्ता तो पास है ; मनुष्य नहीं; इसीको ले।

यह कह जेबुन्निसाने फूलोंको दरियाकी ओर फेंका ; जेबुन्निसा उस समय कुछ नशेमें थी। दरियाने फूलोंको चुन उढ़नीमें रख लिया। कहा,—"हुजूरकी मेहरबानीसे मुझे कुत्ता और मनसबदार दोनों मिले।"

जेबु०। कैसे ?

दरिया। मनसबदार मेरा है।

जेबुन्निसा। क्योंकर ?

दरिया। उससे मेरा विवाह हुआ है।

जेबुन्निसा। दूर हो, यहांसे।

यह कह जेबुन्निसाने दरियाको फूल फेंक मारा ; दरियाने हाथ जोड़कर कहा,—"हुजूर ! मुल्ला और गवाह दोनों जीते हैं। आप उनसे पूछ सकती हैं।

जेबुन्निसाने भवें चढ़ा कहा,—"मैं दोनोंको सूलीपर चढ़ाऊंगी।"

दरिया डरी ; उसे मालूम था, कि शाहजादी जो चाहेगी सो कर डालेगी। इसलिये उसने विनयकर कहा,—"क्षमा कीजिये मैं केवल आपके पास खबर बेचने आई हूं।"

जेबुन्निसा। बोल, क्या खबर है ?

दरिया। दो हैं ; उनमें एक मुबारकखांके सम्बन्धमें है। आज्ञा हो तो कहूं ?

जेबु०। कह ; क्या कहना चाहती है।

दरिया। मुबारकखां आज गणेश ज्योतिषीके यहां अपना भविष्य पूछने गये थे।

जेबु०। ज्योतिषीने क्या कहा ?

दरिया। किसी शाहजादीसे विवाह करो; तुम्हारी तरक्की होगी।

जेबु०। झूठी बात है। मनसबदार कब ज्योतिषीके यहां गया ?

दरिया। यहां आनेसे पहले।

जेबु०। कौन यहां आया था ?

दरिया पहले तो डरी; किन्तु तुरत ही साहसकर उसने सलाम-कर कहा,—"मुबारक खां साहब।"

जेबु०। तुझे कैसे मालूम हुआ ?

दरिया। मैंने आते देखा था।

जेबु०। ऐसी बात बोलनेवालोंको मैं सूलीपर चढ़ाती हूं।

दरियाने हाथ जोड़कर कांपते हुए कहा,—"मैं यह बात हुजूरके सिवा और किसीके सामने जुबानसे नहीं निकालती।"

जेबु०। यदि तूने यह बात किसी दूसरेसे कही, तो मैं तेरी जुबान उखड़वा लूंगी। दूसरी खबर क्या है ?

"दूसरी खबर रूपनगरकी है।" यह कह दरियाने चञ्चल-कुमारीका तसवीर तोड़ने प्रभृतिका कुल हाल कह सुनाया।

यह खबर सुनकर जेबुन्निसाने कहा,—"खबर अच्छी है; मैं तुझे कुछ इनाम दूंगी।"

जेबुन्निसाने कुछ अर्थ दे दरियाको विदा किया।

महलसे बाहर आते ही तातारीने दरियाके कन्धेपर तलवार रखकर कहा—"सखी! भागती कहां हो?"

दरिया। काम होगया। अब घर जाती हूं।

तातारी। तुमने रुपये पाये हैं; कुछ मुझे नहीं दिया ?

दरिया। रुपयेकी बहुत जरूरत है, यदि गाना सुन तो सुनाऊं।

तातारीके पास सारङ्गी थी ; कभी-कभी बजाया भी करती थी। बेगमें भी गाना-बजाना जानती थीं। रङ्गमहलमें रातभर गाना-बजाना होता रहता था ; दरिया गाने लगी। जेबुन्निसाने उसका गाना सुन तातारीको बुला पूछा—"कौन गाता है?" तातारीने कहा,—"दरिया।"

जेबु०। उसे यहां भेज दे।

दरियाकी आवाज बहुत मधुर थी। गाती भी अच्छा थी। तातारीसे खबर पा वह फिर जेबुन्निसाके पास गई।

जेबुन्निसाने कहा,—"यह वीणा है ; इसे ले बजा और गा"।

वीणा बजा दरिया गाने लगी। गाना बड़ा मधुर था। शाहजादीने बहुत गवैयोंका गाना सुना था ; किन्तु ऐसा नहीं। गाना समाप्त होनेपर शाहजादीने उससे पूछा,—"क्या कभी मुबारकने भी तेरा गाना सुना है?"

दरियाने कहा,—"मेरा गाना सुनकर ही मुबारकने मुझसे शादी की थी।"

जेबुन्निसाने इस जोरसे फूलोंका तोड़ा फेंक दरियाको मारा, कि तोड़ा बालियोंमें लगनेसे दरियाका कान फट गया तथा उससे खून टपकने लगा। जेबुन्निसाने कुछ और भी धन दे उससे कहा—"अब मेरे पास कभी न आना।"

दरिया सलामकर चली गई ; किन्तु जाते समय मन ही मन बोली,—"फिर आऊंगी ; फिर जलाऊंगी ; फिर मार खाऊंगी ; फिर रुपये लूंगी। तुम्हारा सर्वनाश करूंगी!"

पांचवां परिच्छेद ।

उदयपुरी बेगम ।

औरङ्गजेब भयङ्कर बादशाह थे। वह जगत् प्रसिद्ध साम्राज्यके अधिकारी थे। वह बुद्धिमान, कर्म्मठ, मेहनती तथा अन्यान्य राज-गुणोंसे विभूषित थे। इतने गुणोंके होते भी वह अपने राज्यको ध्वंसकर पृथिवीसे विदा हुए।

इस ध्वंसका एक मात्र कारण यह है, कि औरङ्गजेब महापापी थे। उनकी तरह धूर्त्त कपटी, स्वार्थी तथा प्रजापीड़क बादशाह दो ही एक मिलते हैं। वह कपटी सम्राट् अपनेको जितेन्द्रिय बताते थे; किन्तु रङ्गमहलमें सुन्दर स्त्रियोंसे आनन्द करनेमें अपनी सानी आप ही थे। हिन्दुओंके विरोधी औरङ्गजेबकी प्रधान बेगम दुर्भाग्यवश एक हिन्दू-कन्या थीं। अकबर बादशाहने राजपूत राजाओंकी कन्याओंसे विवाह करनेका नियम जारी किया था। उसी नियमके अनुसार कुल बादशाहोंकी प्रधान स्त्रियां हिन्दू थीं। औरङ्गजेबकी प्रधान बेगम जोधपुरके राजाकी बेटी थीं। इसके उपरान्त ऐसी भी बहुत सी रमणियां थीं, जिन्हें औरङ्गजेब तनखाह दिया करता था। इन स्त्रियोंसे इस पुस्तकका कुछ सम्बन्ध नहीं; इसलिये उनके उल्लेख करनेका यहाँ कोई प्रयोजन नहीं।

जोधपुरी बेगम प्रधान महिषी होनेपर भी औरङ्गजेबकी प्यारी नहीं थीं। औरङ्गजेब एक ईसाइनको बहुत चाहते थे। इति-हासमें उसे उदयपुरी बेगम कहा गया है। उदयपुरसे इसका कोई सम्बन्ध न था। एशिया खण्डके पश्चिम प्रान्तमें जर्जिया नामक एक नगर है। जर्जिया रूस देशमें है। जर्जियासे एक व्यापारी इसे

बेचनेके लिये भारतवर्ष लाया था। औरङ्गजेबके बड़े भाई दारा-ने इसे खरीदा। युवावस्थामें बालिका बहुत ही सुन्दरी हुई। दारा इसे बहुत चाहने लगे। अफवाह है, कि दारा इसके प्रेममें ईसाई हो गये थे।

दाराको युद्धमें हरा औरङ्गजेब गद्दीपर स्वयं बैठे। दाराको कुछ दिन कैद रख औरङ्गजेबने उन्हें मरवा डाला। दाराकी मृत्युके बाद औरङ्गजेबने एक महापाप किया। उड़ीसेके उड़िया अपने बड़े भाईके मरनेपर विधवा भावजसे विवाहकर उसका शोक दूर करते हैं। एक बार हमने एक उड़ियेसे पूछा था,—"तुम-लोग क्यों ऐसा पाप करते हो ?" उसने झट कहा,—"क्या घरकी बहू परायेको दें ?" भारतेश्वर औरङ्गजेबने भी शायद ऐसा ही सोचा था। उन्होंने कुरानसे आयत उद्धृतकर साबित किया था, कि मुसलमान-धर्म्मानुसार वह अपनी भावजसे शादी करनेके लिये बाध्य हैं। उन्होंने दाराकी दो प्रधान महिषियोंसे निकाह करना चाहा था। एक राजपूत-कन्या थीं और दूसरी थीं उदयपुरी महाशया। राजपूत कन्याने वही किया, जो हिन्दू-मात्रकी कन्यायें वैसी अवस्थामें करती हैं; और किसी जातिकी कन्यायें वैसा कर नहीं सकतीं—वह विष खा मर गईं। ईसाइनने आनन्दित होकर औरङ्गजेबका पल्ला पकड़ा। इतिहासने इस गणिकाके नामसे तो अपने कई पृष्ठ काले किये हैं; किन्तु जिसने धर्म्म बचानेके लिये प्राण त्याग किया, उसका नामतक उल्लेख करनेमें घृणा प्रकट की है; इतिहासोंका तो यह हाल है।

उदयपुरी जितनी खूबसूरत थी, उतनी ही शराबखोर भी थी। दिल्लीके बादशाह मुसलमान होनेपर भी शराब पिया करते थे! रङ्गमहलमें शायद ही ऐसी कोई रमणी रही होगी, जो शराब न पीती हो।

जेबुन्निसा उदयपुरीसे मुलाकात करना चाहती थी, पर कमरेमें न जा सकी; क्योंकि उदयपुरी शराब पीकर बदमस्त पड़ी थी। जब बांदियोंने उसे सावधान कर दिया, तब जेबुन्निसा उसके कमरेमें आ सकी। जेबुन्निसाने जाकर देखा, कि उदयपुरीके हाथमें सट्का पड़ा हुआ है। मुंहपर मक्खियां उड़ रही हैं। आंधीसे गिरे हुए फूलकी तरह उदयपुरी बिस्तरेपर पड़ी हुई है। जेबुन्निसाने सलाम-कर कहा,—"अम्माजान! आपकी तबीयत तो अच्छी है?"

उदयपुरीने कहा,—"हां; इतनी रातको यहां क्यों?"

जेबु०। एक जरूरी खबर सुनाने आई हूं।

उदय०। क्या मरहठा डाकू मर गया? *

जेबु०। उससे भी अधिक खुशखबरी है।

इतना कह जेबुन्निसाने चञ्चलकुमारीका सब हाल कह सुनाया। उदयपुरीने कहा,—"इसमें क्या खुशखबरी है?"

जेबुन्निसा बोली,—"बांदियोंके भरे हुए तम्बाकूमें मजा नहीं; यदि मजा चाहती हैं, तो बादशाहसे कहकर चञ्चलकुमारीको यहां बुलवा लीजिये। वह हुजूरको चिलम भरा करेगी।"

उदयपुरीने बिना समझे-बूझे नशेकी झोंकमें कह दिया,—"बहुत अच्छा।"

थके-मांदे बादशाह दरबारसे उदयपुरीके पास आये। उदयपुरी नशेमें थी; इसलिये भला-बुरा न विचार उसने चञ्चलकुमारीका कुल हाल बादशाहसे कह सुनाया। यह भी कह दिया, कि मैं उससे चिलम भरवाऊंगी। उदयपुरीके कहते ही औरङ्गजेबने उसे बुलवानेका वादा किया; क्योंकि औरङ्गजेब चञ्चलकुमारीका हाल सुन, उससे पहलेसे ही बहुत नाराज थे।

---

* औरङ्गजेबके राज्य में महात्मा शिवाजीको "मरहठा डाकू" के नामसे सम्बोधन किया जाता था!

छठां परिच्छेद।

जोधपुरी बेगम।

दूसरे दिन बादशाहका हुक्म जारी हुआ। रूपनगरके राजाके पास पत्र भेजा गया। जयसिंह, यशवन्तसिंह आदि सेनापति और आजिमशाह प्रभृति शाहजादा औरङ्गजेबकी जिस कुटिलतासे सदा डरते थे; जिस चालाकीसे शिवाजीको दिल्लीमें कैद होना पड़ा था; यह पत्र भी वैसी ही कुटिलतासे लिखा गया। इस पत्रमें लिखा गया था,—"रूपनगरकी राजकुमारीके सौन्दर्य्यका हाल सुनकर बादशाह मुग्ध हुए हैं। रूपनगरके राजाके व्यवहारसे बादशाह बहुत ही प्रसन्न हैं; इससे बादशाह राजकुमारीका पाणिग्रहणकर उन्हें पुरस्कृत किया चाहते हैं। राजाको चाहिये, कि वह राज-कन्याको दिल्ली भेजनेके लिये प्रस्तुत रहें। दिल्लीसे फौज जा शीघ्र राजकुमारीको ले आयेगी।"

यह समाचार रूपनगरमें पहुंचते ही वहांके निवासियोंमें चहल-पहल मच गई। राजा भी फूले न समाते थे; क्योंकि जोधपुर, अम्बर आदिके महाराज बादशाहोंसे कन्याका विवाह करना सौभाग्य तथा गौरव समझते थे! इसीसे क्षुद्र रूपनगरके राजाने भी अपनेको भाग्यवान् समझा। बादशाहोंके बादशाह, जिनके बराबर दुनियामें कोई नहीं है; वह दामाद होगा; चञ्चलकुमारी बेगम बनेगी; इसे क्षुद्र रूपनगरके राजा सौभाग्यके सिवा और क्या समझ सकते? रूपनगरके राजा सोचने लगे, कि इस मौकेपर राज्य बढ़ाना चाहिये तथा शत्रुओंकी खबर लेनी चाहिये। रांनीने देवमन्दिरमें पूजाका सामान भेजा। केवल चञ्चलकुमारीकी सखियोंका मुंह

कुम्हला गया। कारण, वह जानती थीं, कि इस सम्बन्धसे चञ्चलको सुख नहीं होगा; क्योंकि चञ्चल मुगलोंकी पूर्ण शत्रु है।

यह खबर दिल्लीमें खूब फैल गई। शाही रङ्गमहलमें भी गूंज उठी। जोधपुरी बेगम यह समाचार सुन बहुत दुःखित हुई। वह हिन्दूकी लड़की हैं; भारतेश्वरी होनेपर भी उन्हें सुख नहीं। वह औरङ्गजेबके महलमें भी अपना हिन्दुत्व रखतीं, उनकी कुल दासियां हिन्दू थीं। हिन्दू ही उनका रसोइया था। यहांतक, कि औरङ्गजेबके महलमें वह देव-देवियोंकी मूर्त्ति प्रतिष्ठितकर उनकोपूजा करतीं। विख्यात देव—हृषीके, यह सब महनेसे मालूम होता है, कि वह जोधपुरीपर भी बहुत कुछ प्रेम रखता था।

जोधपुरी बेगमने यह समाचार सुना। बादशाहसे भेंट होनेपर विनीत भावसे उन्होंने उनसे निवेदन किया,—"जहांपनाह! जिनकी आज्ञासे प्रति दिन राजराजेश्वरगण राज्यच्युत होते हैं; एक सामान्य बालिका क्या उनके क्रोधके योग्य है?"

बादशाह हंसे; किन्तु कुछ बोले नहीं। असर कुछ भी न हुआ।

इसके बाद जोधपुर-राज-कन्याने मन ही मन कहा,—"हे भगवन्! मुझे विधवा करो। इस राक्षसके अधिक दिन जीनेसे हिन्दू नाम सदा के लिये लोप हो जायेगा।"

देवी नामकी उनकी एक परिचारिका थी। वह जोधपुरसे उनके साथ आई थी। अब वह वृद्धावस्थामें इस मुसलमान पुरीमें रहना नहीं चाहती, वह देश लौट जाना चाहती है। जोधपुरीकी विश्वासपात्र होनेके कारण वह उसे छोड़ती नहीं थीं। आज जोधपुरीने एकान्त-में ले जा उससे कहा,—"तू अनेक दिनोंसे देश जाना चाहती हो, आज तुझे छोड़ दूंगी; किन्तु तुझे मेरा एक काम करना होगा। काम बड़ा मुश्किल है; परिश्रम और विश्वासका प्रयोजन है। राह खर्च दूंगी; ईनाम दूंगी और सदाके लिये मुक्ति दूंगी। कर सकेगी?"

देवीने कहा,—"आज्ञा कीजिये।"

जोधपुरीने कहा,—"रूपनगरकी राजकुमारीकी बात तूने भी सुनी होगी। उसके पास जाना होगा। चिट्ठी-पत्री कुछ न दूंगी ; जो मैं बता दूंगी, वही मेरी ओरसे उससे कहना होगा। मेरा यह पञ्जा दिखानेसे ही वह विश्वास करेगी। यदि घोड़ेपर चढ़ना जानती है तो घोड़ेपर जा। घोड़ा खरीदनेके लिये रुपये देती हूं।"

देवी। क्या कहना होगा ?

बेगम। "राजकुमारीसे कहना, कि हिन्दू-कन्या हो वह मुसलमानके घर न आये। यहां आ मैं नित्य मृत्युको पुकार रही हूं। कहना, कि तसवीर तोड़नेकी बात बादशाहके कानों तक पहुंची है; सजा देनेके लिये ही वह बुला रहे हैं। प्रतिज्ञा की है, कि रूपनगरवालीसे उदयपुरीके लिये तम्बाकू भरवाऊंगा। कहना, कि विष खाना पड़े तो आनन्दसे खा लेना ; किन्तु दिल्ली न आना।"

"और भी कहना, कि दिल्लीका सिंहासन डगमगा रहा है। दक्षिणमें मरहठे मुगलोंकी नसें ढीली कर रहे हैं। राजपूत आपसमें मिल रहे हैं। जिजियाकी ज्वालासे सारा राजपूताना जल उठा है। राजपूतानेमें गोहत्या हो रही है! कौन राजपूत इसे सह सकेगा ? सब राजपूत एकमत हो रहे हैं। उदयपुरके राणा वीर पुरुष हैं। वह यदि राजपूतोंके सेनानायक हो, अस्त्र धारण करें,—यदि एक ओर शिवाजी और दूसरी ओर राजसिंह अस्त्र गहें, तो दिल्लीका सिंहासन कितने दिन टिकेगा ?"

देवी। नहीं, बाई! ऐसी बात मुंहसे न निकालो ; दिल्लीका तख्त तुम्हारे ही पुत्रके लिये है। अपने पुत्रके सिंहासन छिननेका परामर्श आप ही देती हो ?

बेगम। मुझे यह भरोसा नहीं, कि मेरा पुत्र इस सिंहासनपर विराजेगा। जबतक राक्षसी जेबुन्निसा और डाकिनी उदयपुरी

जीती है, तबतक ऐसी आशा नहीं। एक बार ऐसी बात कहनेसे दीप्रभारासे मेरी मारपीट हो गई थी। उसने मेरा मुंह नोच-खसोट लिया था। आज भी मेरे नाक-मुंह पर उन जखमोंके चिन्ह हैं।

यह कह जोधपुरीने रो दिया। फिर रुलाई रोक कहा,—"उन सब बातोंसे अब कुछ मतलब नहीं। तू मेरा सब मतलब समझ न सकेगी—समझनेसे भी क्या होगा! जैसा कह रही हूं, वैसा ही करना। राजकुमारीको राजसिंहकी शरण लेनेके लिये कहना। राजसिंह राजकुमारीको हताश न करेंगे। कहना कि मैं आशी र्वाद करती हूं, कि वह राणाकी महिषी बने, महिषी बन वह प्रतिज्ञा करे,—"उदयपुरी उसका तम्बाकू भरेगी; जेबुन्निसा उसे पङ्खा झलेगी।"

देवी। यह क्या सम्भव है?

बेगम। इन सब बातोंका विचार तू न कर। मैं जो कहती हूं, वह कर सकेगी या नहीं?

देवी। खूब अच्छी तरह।

बेगमने देवीको प्रयोजनानुसार खर्चके लिये रुपये, पुरस्कार तथा पञ्जा दे विदा किया।

सातवां परिच्छेद।

खुदा शाहजादियोंको क्यों पैदा करते हैं?

रातको मुबारक फिर जेबुन्निसाके पास आया। अबके मुबारक हाथ बांध घुटने टेक बैठा हुआ है; उसका मुंह ऊपरको है। जेबुन्निसा सुन्दर पलङ्गपर मखमली गाव तकियोंके सहारे बैठी हुई

सोनेके हुक्केमें लगे हुए सटकसे तम्बाकू खींच रही है। पाश्चात्य देशके अनुग्रहसे उस समय भारतवर्षमें तम्बाकूका रिवाज हो गया था।

जेबुन्निसाने मुबारकसे कहा,—"सच कहोगे ?"

मुबा०। आज्ञा पाते ही ठीक जवाब दूंगा।

जेबु०। क्या तुमने दरियासे विवाह किया है ?

मुबा०। जिस समय मैं स्वदेशमें था, उस समय उससे विवाह किया था।

जेबु०। शायद इसीलिये अनुग्रहकर मुझसे शादी करनाचाहते थे ?

मुबा०। बहुत दिन हुए मैंने उसे छोड़ दिया है।

जेबु०। तुमने क्यों उसे परित्याग किया ?

मुबा०। आपको मालूम होगा, कि वह पागल है।

जेबु०। मैं तो उसे पागल नहीं समझती।

मुबा०। वह अपनी कार्य्य-सिद्धिके लिये आपके पास आती है। कामके समय मैं भी उसे पागल नहीं देखता; किन्तु अन्यसमय वह पागल रहती है। किसी दिन आप उसे बुलाकर उसकी परीक्षा लीजियेगा।

जेबु०। क्या तुम उसे भेज दोगे ? कहना, कि मुझे कुछ अच्छे सुरमेका प्रयोजन है।

मुबा०। कुछ दिनोंके लिये मैं विदेश जाऊंगा।

जेबु०। विदेश जाओगे! अभीतक तो तुमने यह बात मुझसे नहीं कही थी ?

मुबा०। इच्छा थी, कि आज आपसे कहूंगा।

जेबु०। कहां जाओगे ?

मुबा०। राजपूतानेमें रूपनगर नामक ऐक छोटा सा राज्य है। शाहंशाहकी इच्छा है, कि वह वहांके राजाकी कन्यासे विवाह करें। मैं अब उस कन्याको लानेके लिये जाऊंगा। मेरे साथ फौज भी जायेगी।

जेबु० । इस विषयमें मुझे भी कुछ कहना है ; किन्तु पहले यह बताओ, कि क्या तुम गणेश ज्योतिषीके पास गये थे ?

मुबा० । गया था ।

जेबु० । क्यों गये थे ?

मुबा० । लोगोंको जाते देख मैं भी गया था। इसके सिवा दरिया मुझे जबर्दस्ती खींच ले गई थी ।

जेबु० । हूं !

इतना कहकर जेबुन्निसा फूलोंसे क्रीड़ा करने लगी। फिर बोली,—"तुम क्यों गये थे ?"

मुबारकने सब हाल कह सुनाया। जेबुन्निसाने यह बात सुनकर कहा,—"क्या ज्योतिषीने तुमसे कहा था, कि शाहजादीसे विवाह करो, तुम्हारी तरक्की होगी ?"

मुबा० । हिन्दू शाहजादी नहीं कहते। ज्योतिषीने राजकुमारी कहा था।

जेबु० । शाहजादियां क्या राजकुमारी नहीं होतीं ?

मुबा० । क्यों नहीं ?

जेबु० । शायद इसीलिये उस दिन तुमने विवाहका प्रस्ताव किया था ?

मुबा० । आपको याद होगा, कि ज्योतिषीके पास जानेके बहुत पहलेसे मैं आपसे विवाहका प्रस्ताव कर रहा हूं ।

जेबु० । मुझे तो यह बात याद नहीं ; जो हुआ, सो हुआ ; नाराज न होना ; तुम्हारी नाराजगीसे मुझे बड़ा कष्ट होता है। तुम मेरे प्राणाधिक हो ; जबतक मेरे पास रहते हो, मुझे बहुत आनन्द होता है। तुम मेरे पास आकर बैठो; मैं तुम्हें फूलोंका गजरा पहनाऊंगी।

जेबुन्निसाने मुबारकको पलंगपर बैठाकर फूलोंका गजरा पहनाते हुए कहा—"तुम रूपनगर जाते हो ; नहीं जानती, कि

राजकुमारीका बाप तुम्हारे साथ उसे विदा करेगा या नहीं ; यदि न करे, तो उसे छीन लाना।"

मुबा०। ऐसी आज्ञा तो बादशाहने मुझे दी नहीं।

जेबु०। समझ लो, कि मैं ही बादशाह हूं। यदि बादशाहकी यह इच्छा न होती, तो वह तुम्हारे साथ फौज क्यों भेजते ?

मुबा०। राहकी विघ्न-बाधायें दूर करनेके लिये।

जेबु०। बादशाहकी फौज क्या खाली हाथ लौट आयेगी ? जैसे हो सके, रूपनगरवालीको ले आना। यदि बादशाह नाराज होंगे, तो मैं तो हूं।

मुबा०। आपका हुक्म ही काफी है ; किन्तु यदि आप बता दें, कि क्यों आप ऐसा हुक्म देती हैं, तो मेरीभुजाओंमें और भी बल आजाये।

जेबुन्निसाने कहा,—"मैं यही बात कहना चाहती थी ; रूपनगरवाली मेरे ही कौशलसे यहां बुलाई जाती है।"

मुबा०। सबब ?

जेबु०। सबब यह है, कि उदयपुरीके रूपकी बड़ाई अब सही नहीं जाती। सुनती हूं, कि रूपनगरवाली बहुत खूबसूरत है। उसके आनेपर बादशाह उसीको चाहने लगेंगे। जब उसे मालूम हो जायेगा, कि मैंने ही उसे बुलवाया था, तब वह मेरी बात माना करेगी। उसके, मेरी वश्यता स्वीकार कर लेनेपर, बादशाह तक मेरी बराबरी कर न सकेंगे। तुम्हारा जाना बहुत अच्छा हुआ। यदि वह उदयपुरीसे सुन्दरी हो—

मुबा०। मैंने बेगम साहिबाको कभी देखा नहीं।

जेबु०। यदि देखना चाहते हो, तो मैं दिखा सकती हूं। इस परदेकी ओटमें छिप जाओ !

मुबा०। छिः।

जेबुन्निसा खिलखिलाकर हंसने लगी। बोली,—"दिल्लीमें तुम्हारे

जैसे कितने ही बन्दर हैं। यदि तुम उदयपुरीको नहीं देखना चाहते, तो मैं तुम्हें उसकी तसवीर दिखाती हूं; किन्तु रूपनगरवालीको अवश्य देखना। यदि वह उदयपुरीसे सुन्दरी हो, तो उससे कहना, कि वह मेरी ही मेहरबानीसे बेगम बन रही है। यदि वह सुन्दरी न हो, तो—"

जेबुन्निसा सोचने लगी। मुबारकने पूछा,—"यदि वह देखनेमें सुन्दरी न हो, तो मैं क्या करूंगा?"

जेबु०। तुम बहुत विवाह-विवाह कर रहे हो, उससे विवाह कर लेना। बादशाह मुझे जो आज्ञा देंगे, मैं वैसा ही करूंगी।

मुबा०। क्या इस अधमपर आपका जरा भी प्रेम नहीं?

जेबु०। शाहजादियां प्यारका नाम ही नहीं जानतीं।

मुबा०। तब अल्लाहने क्यों शाहजादियोंको बनाया है?

जेबु०। ऐश और आरामके लिये। प्रेममें दुःख है; कष्ट है।

मुबारक यह बात सुना नहीं चाहता था; उसने उस बातको दबा कर कहा,—"जो बादशाहकी बेगम होने वाली है, मैं उसे कैसे देख सकूंगा?"

जेबु०। जैसे हो।

मुबा०। यदि बादशाह मुझपर नाराज हों?

जेबु०। मैं उन्हें समझा लूंगी।

मुबा०। मैं आपके हुक्मके अनुसार कार्य्य करूंगा; किन्तु मुझपर मेहरबानी रखियेगा।

जेबु०। मैं कह चुकी हूं, कि मैं तुम्हें बहुत चाहती हूं।

मुबा०। क्या प्यारसे कहा है?

जेबु०। कह चुकी हूं, कि प्रेम गरीबोंके लिये दुःखका कारण है। शाहजादियां इस दुःखको भोगना नहीं चाहतीं।

मर्म्माहित हो मुबारक चला गया।

तीसरा खण्ड।

पहला परिच्छेद।

हंस और बगलेकी कहानी।

निर्म्मल, राजकुमारीके पास जा बैठी। राजकुमारीकी आंखोंसे आंसू टपक रहे थे। उस दिन जो चित्र खरीदे गये थे, उनमें एक चित्र कुमारीके हाथमें था। निर्म्मलको देखकर कुमारीने उस चित्रको छिपा लिया; किन्तु निर्म्मल समझ गई, कि वह चित्र किसका था। निर्म्मलने कुमारीसे कहा,—"अब उपाय क्या है?"

चञ्चल। उपाय जो हो; किन्तु मैं मुगलकी चेरी न बनूंगी।

निर्म्मल। मुझे मालूम है, कि तुम राजी नहीं; किन्तु बादशाह आलमगीरका हुक्म ऐसा ही है। राजा उस हुक्मके विरुद्ध कुछ कर नहीं सकते; कोई उपाय भी दिखाई नहीं देता। तुम्हें स्वीकार करना ही उचित है। तुम्हारी किस्मत खुली है। जोधपुर, अम्बर आदिके महाराजोंसे लेकर कुल अमीर-उमरावतक बादशाहसे अपनी कन्याका विवाह करना गौरव समझते हैं। किसकी यह इच्छा नहीं, कि मेरी कन्या दिल्लीकी गद्दीपर बैठे? तुम इस गौरवको क्यों नहीं चाहतीं?

कुमारीने नाराज होकर कहा,—"तू यहांसे चली जा।"

निर्म्मल समझ गई, कि राजकुमारी उसकी बातें न सुनेगी। परन्तु

उसने यह विचारा, कि यदि मेरी जैसी सखीसे राजकुमारीका कुछ उपकार न हुआ, तो और किससे होगा? उसने कहा,—"मेरे चले जानेसे तुम्हें क्या लाभ होगा? मैंने तुम्हारा नमक खाया है, इस-लिये तुम्हारा उपकार करना चाहती हूं। क्या यह भी सोचा है, कि तुम्हारे दिल्ली न जानेसे तुम्हारे पितासे कैसा वर्ताव किया जायगा?"

चञ्चल—मुझे भलीभांति मालूम है। यदि मैं दिल्ली न गई, तो मेरे पिताका सिर काट लिया जायेगा; रूपनगर धूलमें मिल जायेगा। मैं अपने पिताका अनिष्ट करना नहीं चाहती। दिल्लीसे फौज आतेही मैं यहांसे विदा हो जाऊंगी।

निर्म्मल प्रसन्न हो बोली,—"मैं भी यही चाहती थी।"

राजकुमारीने फिर नाराज होकर कहा, "क्या तू खयाल करती है, कि मैं बादशाहसे विवाह करूंगी? हंसी बगलेकी सेवा क्या कभी कर सकती है?

कुमारीने निर्म्मलको अंगूठी दिखा कर कहा,—"दिल्लीकीराहमें जहर खाऊंगी?" निर्म्मल जानती थी, कि इस अंगूठी में विष है।

निर्म्मलने कहा,—"क्या और कोई उपाय नहीं है?"

चञ्चल। और क्या उपाय है? कौन मेरे लिये दिल्लीके बाद-शाहका शत्रु बनेगा? और ऐसा वीर है ही कौन? राजपूतानेके कुलाङ्गार तो मुगलोंके दास हैं। अब न तो संग्राम ही हैं, और न प्रताप ही।

निर्म्मल। क्या कहा कुमारीजी! यदि प्रताप या संग्रामसिंह जीवित होते, तो तुम्हारे लिये क्या वह युद्ध करते? प्रताप या संग्राम-सिंह तो नहीं हैं; पर राजसिंह जीते हैं। किन्तु वह क्यों तुम्हारे लिये युद्ध करने लगे? विशेषत: तुम मारवाड़ घरानेकी हो।

"राजपूत शरणागतकी जरूर रक्षा करते हैं। इसीसे मैं सोचती थी, कि संग्रामसिंह तथा प्रतापके वंशधरकी शरण लूंगी।

क्या वह मेरी रक्षा न करेंगे ?" यह कह कर राजकुमारीने चित्र-को उठा लिया। निर्म्मलने देखा, कि चित्र राजसिंहका है। राज-कुमारीने फिर कहा"निर्म्मल! तुम्हारी समझमें क्या नहीं आता, कि ऐसे ही वीर शरणागतोंकी रक्षा किया करते हैं ? यदि मैं इनकी शरण लूं, तो क्या यह मेरी रक्षा न करेंगे ?"

निर्म्मल बहुत चालाक थी, वह कुमारीको सगी बहनसे भी अधिक चाहती थी। उसने सोच-विचार कर कहा,—"कुमारीजी! जो वीर तुम्हारी रक्षा करेगा ; उसे तुम क्या दोगी ?"

कुमारी समझ गई और सिर झुकाकर बोली,—"मेरे पास है ही क्या ? मैं तो अबला हूं।"

निर्म्मल। तुम अपनेको दे सकती हो।

चञ्चल झेंपी। कहने लगी,—"दिक न करो।"

निर्म्मल। ऐसा ही राजाओंके यहां हुआ करता है। यदि तुम रुक्मिणी हो सको, तो बांकेबिहारी श्रीकृष्ण महाराज तुम्हारा उद्धार कर सकते हैं!

चञ्चलकुमारीने सिर झुका लिया। जैसे अस्ताचलगामी सूर्य्यकी किरणोंसे बादल रंग बदलते हैं तथा हर एक रंगका सौन्दर्य्य बहुत ही सुहावना प्रतीत होता है, वैसे ही चञ्चलकुमारीके मुखका रंग सुर्ख तथा लज्जासे सफेद होने लगा। अन्तमें कुमारीने कहा,—"मेरे ऐसे भाग्य कहां ? मैं तो बिकने पर राजी हूं। क्या वह मुझे खरीदेंगे ?"

निर्म्मल। इसका विचार महाराणा ही करेंगे। सुनते हैं, कि महाराणा बहुत ही बलवान हैं। उनके पास क्या किसीको भेजना चाहती हो ? किसी ऐसे विश्वासी मनुष्यको भेजना चाहिये, जो यह खबर चुपचाप उनतक पहुंचा सके।

चञ्चलने सोच-विचारकर कहा,—"गुरूजीको बुलाओ। वह मेरी सहायता कर सकते हैं। किन्तु मेरे पास लानेसे पहले उनसे कुल

हाल कह देना। मैं उनसे यह बात न कह सकूंगी।"

सखियोंने आकर कहा,—"एक स्त्री मोती बेंचने आई है।"

कुमारीने कहा,—मैं मोती न खरीदूंगी।"

सखियां बोलीं—"उसे भगानेकी बहुत चेष्टाकी गई ; परन्तु वह जाती ही नहीं। मालूम होता है, कि वह आपसे कुछ कहा चाहती है।" राजकुमारीने कहा,—"उसे बुलाओ।"

मोती बेचने वालीने कई एक झूठे मोती दिखाये। राजकुमारीने कहा,—"क्या यह मोती ही दिखानेके लिये तू जिद कर रही थी ?"

मोतीवालीने कहा,—"मैं एकान्तमें और कुछ दिखाना चाहती हूं।"

कुमारीने कहा, "एक सखी मेरे पास रहेगी। निर्म्मल तुम ठहरो, और सखियोंको जाने दो।"

कुल सहेलियां चली गईं। मोती बेचने वाली हमारी पूर्व्व परिचिता देवीही थी। उसने जोधपुरी बेगमका पन्ना दिखाया। पन्ना देख कुमारीने कहा,—"यह पन्ना तुम्हें कैसे मिला ?"

देवी। जोधपुरी बेगमने मुझे दिया है।

चञ्चल। तुम कौन हो ?

देवी। मैं जोधपुरी बेगमकी बांदी हूं।

चञ्चल। यह पन्ना लेकर क्यों यहां आई हो ?

देवीने चञ्चलसे कुल हाल कहा। निर्म्मल और चञ्चल एक दूसरेका मुंह ताकने लगीं।

कुमारीने देवीको पुरस्कार देकर विदा किया। देवी जाते समय जोधपुरीका पन्ना छोड़ गई; जान बूझ कर छोड़ गई। यह विचार कर, कि यदि और कहीं फेंक दूं और किसीने उठा लिया तो जोधपुरीका अपकार हो सकता है; इसलिये यहीं रख जाना उचित है। उसके चले जानेपर कुमारीने निर्म्मलसे कहा,—"वह यह पन्ना भूल गई है।"

निर्म्मल। भूल नहीं गई, रख गई है।

चञ्चल। बेगमका सन्देशा सुन मैं बहुत ही प्रसन्न हुई हूं; अब-तक सोच रही थी, कि क्या करना चाहिये; अब स्थिर कर लिया, कि राणा राजसिंहकी शरण लेना ही अच्छा होगा।

निर्म्मल। यह तो मैं बहुत दिनोंसे जानती थी।

यह कह निर्म्मल हंसी। चञ्चलने भी शिर नीचेकर हंस दिया। निर्म्मल वहांसे उठ कर चली गई; किन्तु उसके हृदयमें कुछ भरोसा न हुआ। वह वहांसे रोती-रोती गई।

दूसरा परिच्छेद।

अनन्त मिश्र।

रूपनगरके राजाके पुरोहितका नाम अनन्त मिश्र था। मिश्रजी चञ्चलकुमारीको कन्यासे भी अधिक चाहते थे। यह एक बड़े भारी पण्डित थे। लोग इनकी पण्डिताईके कायल थे। खबर पाते ही यह चञ्चलकुमारीके पास आ पहुंचे। राह हीमें निर्म्मलने इनसे कुल हाल कह दिया था।

विभूति-चन्दन-विभूषित प्रशस्त ललाट, दीर्घ काय, रुद्राक्ष-शोभित और हंसमुख, वह ब्राह्मणदेव चञ्चलकुमारीके पास आ खड़े हुए। निर्म्मलके सामने तो चञ्चल रोई थी; किन्तु ब्राह्मणने देखा, कि चञ्चलकुमारीकी मूर्त्ति स्थिर तथा गम्भीर है। ब्राह्मणने कहा,—"मुझे क्यों बुलाया है?"

७

चञ्चल। अपनी रक्षाके लिये। मेरी रक्षा करनेवाला इस समय आपके सिवा और कोई नहीं।

मिश्रजीने मुस्कराकर कहा,—"शायद रूक्मिणीके विवाहके लिये इस बूढ़े पुरोहितको ही द्वारिका जाना पड़ेगा। खैर; यदि मुझे खर्चा मिल जाये, तो मैं अभी उदयपुर जानेको तय्यार हूं।"

कुमारीने पुरोहितको एक जरीका बटुआ दिया। इस बटुएमें अशरफियां भरी हुई थीं। पुरोहितने केवल पांच अशरफी लेकर कहा,—"राहमें अन्न ही खाऊंगा, अशरफी नहीं। कुमारी तुम मेरा एक कहा मानोगी?"

कुमारीने कहा,—"मुझे जो आज्ञा दीजियेगा; मैं वही करूंगी। किन्तु आप मुझे इस आफतसे बचाइये।"

मिश्रजीने कहा,—"राणा राजसिंहको एक पत्र लिख दोगी?"

कुमारीने सोच-विचारकर कहा,—"मुझसे महाराणाका परिचय नहीं; इसके सिवा मैं स्त्री हूं। मैं कैसे उन्हें पत्र लिख सकती हूं? किन्तु जब मैं महाराणाकी शरण ले रही हूं, तब उनसे लज्जा कैसी? हां, मैं पत्र लिख सकती हूं।"

मिश्र। मैं लिखा दूं या खुद लिख लोगी?

चञ्चल। आप ही लिखा दीजिये।

इतनेमें निर्म्मल आ पहुंची। उसने कहा,—"पत्र लिखना पण्डितोंका काम नहीं; पत्र लिखना स्त्रियोंको ही आता है। मैं पत्र लिखती हूं; आप तय्यार हो जाइये।"

मिश्रजी चले गये; किन्तु घर न गये। राजा विक्रमसिंहके पास आ पहुंचे। वहां जाकर कहा—"मैं देश-पर्य्यटन करने जा रहा हूं।"

महाराजने इनसे पूछा, कि किन-किन तीर्थोंमें जाइयेगा; किन्तु मिश्रजीने महाराजके प्रश्नोंका ठीक जवाब न दिया। केवल इतना

को कहा, कि मैं उदयपुरतक जाऊंगा। मुझे एक पत्र लिख दीजिये। मेरा इरादा है, कि मैं महाराणासे भी जरा मिलूं। राव साहबने पत्र लिख दिया।

पत्र ले मिश्रजी कुमारीके पास लौट आये। चञ्चल और निर्म्मल दोनोंने मिलकर एक पत्र लिखा था। कुमारीने मिश्रको एक पत्र और एक डब्बेसे एक अपूर्व्व शोभाविशिष्ट कड़ा निकालकर दिया और कहा, कि पत्र महाराणाको देकर कहियेगा,—"मैं कुमारी-की तरफसे आपके हाथमें रक्षा बांधता हूं।" इतना कह इस कड़े-को महाराणाके हाथमें पहना दीजियेगा। राजपूतकुलतिलक राजपूत कन्याकी भेजी हुई रक्षा अवश्य ग्रहण करेंगे।

मिश्रजी राजी हुए। कुमारीने उन्हें प्रणामकर विदा किया।

तीसरा परिच्छेद।

मिश्रजीकी विदाई।

धोती, छाता, चन्दन आदि तथा एक नौकर ले मिश्रजी विदा हुए। विदा होते समय अपनी स्त्रीसे कह गये,—"मैं उदयपुर जाता हूं।" स्त्रीने पूछा,—"क्यों?" मिश्रजीने कहा,—"कुछ प्राप्ति होगी"। मिश्रजीकी स्त्री शान्त हुई। विरहके कष्टको भूल गई। अर्थके शीतल पानीने विरहकी आगको बुझा दिया। केवल दो-एक बार सिसकनेकी आवाज आई। मिश्रजी और भी दो-चार नौकर साथ ले जा सकते थे; किन्तु उन्होंने वैसा न किया। यह खयाल था, कि बात फैलने न पाये। राह बहुत ही खराब थी। पहाड़ोंके बीचसे जाना पड़ता था। कहीं-कहीं सनसान भयानक जङ्गल-भी पड़ता

था। मिश्रजीको अब जहां आश्रय मिल जाता, बस वहीं ठहर जाते थे। केवल दिन हीको सफर करते। जहाज कड़ा साथ रहनेके कारण ब्राह्मण अकेले सफर न करते थे। एक दिन रातको एक मन्दिरमें ठहरे थे। सवेरे सङ्गियोंकी खोज न करनी पड़ी। चार वणिक उस मन्दिरमें ठहरे हुए थे; उन्होंने ब्राह्मणसे पूछा,—"आप कहां जायेंगे?" ब्राह्मणने कहा,—"मैं उदयपुर जाऊंगा।" वणिकोंने कहा,—"अच्छा हुआ; हम भी उदयपुर चलेंगे। चलिये साथ ही चलें।"

ब्राह्मणने पूछा,—"यहांसे उदयपुर कितनी दूर है?" वणिकने कहा,—"बहुत दूर नहीं; सन्ध्यातक वहां पहुंच जायेंगे। यह स्थान महाराणाके राज्यके अन्तर्गत ही है।"

बातचीत करते-करते मिश्रजी वणिकोंके साथ आगे चले। पहाड़ी बहुत भयानक थी तथा राहोंकी दोनो ओर सुनसान जङ्गल थे; किन्तु मिश्रजी ऐसी राह अतिक्रम कर चुके थे; अब मैदानसे जा रहे थे। मैदानको अतिक्रमकर एक बहुत ही सुन्दर स्थानमें पहुंचे थे। यहां दोनो तरफ वृक्षोंकी कतारके भीतरसे एक छोटीसी नदी बहती थी। इस नदीके कारण सड़क बहुत ही रमणीय मालूम होती थी; किन्तु वहांसे दृष्टि बहुत दूर न जाती थी। केवल चारो ओर पहाड़ोंके उच्चशिखर थे। वहां जाकर एक वणिकने ब्राह्मणसे पूछा,—"तुम्हारे पास क्या है?"

ब्राह्मण प्रश्नको सुनते ही भयभीत तथा चकित हुए। सोचा,—कि "शायद यहां चोर-उचक्कोंका डर है; इसीलिये वणिक पहलेसे चौकसा कर रहे हैं।" ब्राह्मणने कहा,—"हम भिखमंगोंके पास क्या हो सकता है?"

वणिकोंने डपट कर कहा,—"तुम्हारे पास जो कुछ है, हमें दे दो। यदि न दोगे, तो तुम्हें जानसे हाथ धोना पड़ेगा।"

ब्राह्मण डरे। सोचा, कि जड़ाऊ कड़ा वणिकोंको दे दूं; किन्तु फिर विचारने लगे, कि यदि कड़ा इन्हें दे, तो राणाके पास क्या लेकर जाऊंगा। इतना सोच-विचारकर ब्राह्मणने फिर कहा,—"मैं भीख मांगता फिरता हूं। मेरे पास क्या है?"

विपदके समय जो हिचकता है, उसीपर आफत आती है। वणिक समझ गये, कि ब्राह्मणके पास कुछ न कुछ अवश्य होगा। एकने ब्राह्मणको जमीनपर दे मारा; दूसरेने उनकी छातीपर पैर रखा और तीसरेने उनके मुंहपर कपड़ा बांध दिया। मिश्रजीका नौकर रफूचक्कर हुआ। चौथेने मिश्रजीकी पोटली खोली। उस पोटलीसे उसे जड़ाऊ कड़ा, पत्र तथा अशरफी प्रभृति मिले। उन द्रव्योंको लेकर उसने अपने संगियोंसे कहा,—"इसे छोड़ दो; ब्रह्महत्याकी आवश्यकता नहीं। इसके पास जो था, वह सब मिल गया।"

उसके संगियोंमें एकने कहा,—"यदि इसे छोड़ दोगे, तो हम पकड़े जायेंगे। आजकल राणा राजसिंह कठोरतासे राज्यशासन कर रहे हैं। आजकल हमारेजैसे वीरोंको जीवन बिताना कठिन हो गया है। इस ब्राह्मणको एक वृक्षसे बांधकर छोड़ दो।"

डाकुओंने ब्राह्मणको खूब जकड़कर वृक्षसे बांध दिया और वह जड़ाऊ कड़ा तथा पत्र लेकर चलते बने। पहाड़से डाकुओंका यह कृत्य एक सवारने देखा। डाकू उस सवारको न देख सके। डाकू नदीके किनारे-किनारे जङ्गलमें चले गये। थोड़ी दूर बाद वह एक गुफामें जा घुसे।

गुफामें खाट, बिस्तरा बरतन आदि सब था। डाकू यहां जाकर चिलम पीने लगे। उनमें एक रसोईका प्रबन्ध करने लगा। एकने कहा,—"माणिकलाल! रसोई अभी रहने दो। आओ पहले माल बांट लें।"

माणिकलालने कहा,—"हां ठीक है, पहले माल ही बांट लेना चाहिये।"

डाकुओंने अशर्फियोंको बांट उनका अलग-अलग हिस्सा लगाया तथा यह निश्चय किया, कि कड़े का हिस्सा उसे बेचनेके बाद किया जायेगा। अब पत्रकी बारी आई। एकने कहा,—"कागजोंको लेकर क्या करेंगे? जला दो।"

डाकुओंमें एकको कुछ लिखना-पढ़ना आता था। उसने पत्रोंको खोलकर पढ़ा; वह बहुत ही आनन्दित हुआ। बोला,—"इन पत्रोंसे कुछ धन हाथ लग सकता है।"

अन्याय डाकुओंने पूछा,—"कैसे?" उस डाकूने चञ्चलके पत्रका खुलासा उन्हें पढ़कर समझाया। पत्र सुनकर डाकू बहुत ही आनन्दित हुए।

जिस डाकूने पत्र पढ़ा था; उसने कहा,—"यदि ये पत्र महाराणाको दिये जायें, तो वह कुछ पुरस्कार दे सकते हैं।"

दूसरे डाकूने कहा,—"मूर्ख, नादान! जब तू यह पत्र महाराणाको देगा, तब क्या वह तुझसे यह न पूछेंगे, कि यह पत्र तूने कहां पाया? तब तू क्या जवाब देगा? क्या कहेगा, कि हमने डकैती कर यह पत्र पाया है? राणा पुरस्कारके बदले तुझे सूलीपर चढ़ायेंगे। यह पत्र बादशाहको देना चाहिये। बादशाहको यह पत्र देनेसे अवश्य कुछ पुरस्कार मिलेगा। और इसमें—"

बात पूरी न होने पाई थी, कि उसका सिर धड़से जुदा हो जमीनपर तड़फड़ाने लगा।

चौथा परिच्छेद।

माणिकलाल।

सवारने पहाड़की चोटीसे देखा, कि चार आदमी एक मनुष्यको वृक्षसे बांधकर चले गये। इससे पहले उसने देखा नहीं था, कि क्या हुआ। कारण उस समय वह वहां न था। वह देखने लगा, कि यह सब किस तरफ जाते हैं। जब वह बहुत दूर चले गये तथा दृष्टिसे गायब हो गये तब सवार घोड़ेसे उतर पड़ा। घोड़ेकी पीठपर हाथ फेर उसने उससे कहा—"जबतक मैं न आऊं; यहां ठहरे रहना; कहीं न जाना; मैं शीघ्र ही आता हूं।" घोड़ा खड़ा हो गया। सवार दौड़ता हुआ पहाड़से उतरा। हम पहले ही कह चुके हैं, कि यहां पहाड़ बहुत ऊंचा न था।

सवारने आकर मिश्रजीको खोला। रस्सीके बन्धनसे छुटकारा पा मिश्रजीने इष्ट-देवताको स्मरण किया तथा सवारसे कहा,—"मैं डाकुओंके साथ यहां आया था। मैं उन्हें पहचानता नहीं, सरायमें उनसे मुलाकात हुई थी। उन्होंने कहा, कि हम वणिक हैं। पीछे यहां पहुंच उन्होंने मेरा सब कुछ छीन लिया।"

सवारने पूछा,—"आपके पास क्या क्या था?"

ब्राह्मणने कहा,—"कई अशरफियां, एक कङ्कण तथा दो पत्र थे।"

सवारने कहा,—"आप यहीं ठहरिये; मैं उनका पीछा करता हूं।"

ब्राह्मणने कहा,—"आप कैसे उनका अनुसरण करेंगे? वह चार हैं और आप अकेले।"

सवारने कहा,—"क्या आप नहीं देखते, कि मैं राजपूत सिपाही हूं।"

मिश्रजीको उसकी पोशाक देखते ही मालूम हो गया, कि यह राजपूत सिपाही है। उसकी कमरसे तलवार और ढाल लटक रही थी तथा हाथमें बर्छा था। मिश्रजीने चुप्पी साध ली।

राजपूत बड़ी सावधानीसे डाकुओंका अनुसरण करने लगा; किन्तु जङ्गलमें घुसनेपर उसे न तो रास्तेका ही पता लगा और न डाकुओंका ही।

वह सवार फिर पहाड़के शिखरपर चढ़ गया। थोड़ी देर इधर-उधर देखनेके बाद उसकी निगाह डाकुओंपर पड़ी। डाकू उस समय बहुत छिपकर आगे बढ़ रहे थे। वहीं खड़े हो वह राजपूत वीर देखने लगा, कि डाकू कहां जाते हैं। डाकू थोड़ी दूर आगे बढ़ पहाड़की एक गुफामें चले गये। राजपूत अपने मनमें समझ गया, कि वह इस गुफामें विश्राम करने गये हैं।

राजपूतने वृक्षादिके चिन्होंसे उस स्थानको पहचान लिया। पहाड़से उतर और फिर जङ्गलके उन चिन्होंको देखता हुआ आगे बढ़ा। बहुत देरतक ढूंढ़-खोज करनेके बाद वह गुफा दिखाई दी। उसने सुना, कि चारो डाकू गुफामें बैठ बातें कर रहे हैं।

गुफाके पास आ राजपूत हिचका; क्योंकि डाकू चार थे और वह अकेला। अब वह सोचने लगा, कि गुफाके भीतर जाना ठीक है या नहीं। यदि गुफाके भीतर जाते ही उन्होंने उसका दरवाजा बन्द कर लिया, तो मेरे जीवनकी आशा नहीं। कारण, वह चारो मुझपर एक साथ हमला करेंगे और मैं अकेले उनका सामना कैसे कर सकूंगा? फिर उसने सोचा, कि क्या मैं मृत्युसे डरूं? कभी नहीं। राजपूत मृत्युकी कुछ परवा नहीं करते। अन्तमें राजपूतने सोचा, कि यदि गुफाके भीतरके मनुष्य डाकू न हों, तो उनकी हत्या करना अन्याय होगा। ऐसी दशामें क्या करना चाहिये?

बहुत-सोच-विचारके बाद राजपूतने यह स्थिर किया, कि जरा सुनूं तो, कि गुफाके भीतर क्या बातें हो रही हैं?

जब राजपूत गुफाके मनुष्योंकी बात सुन रहा था तब डाकू लूटका माल बांट रहे थे। राजपूतने निश्चय कर लिया, कि यह सब डाकू हैं। अब गुफामें बेधड़क जानेके सिवा और कोई उपाय नहीं।

बरछेको वृक्षकी ओटमें छिपा नङ्गी तलवार दाहिने हाथमें धारण-कर तथा बायें हाथमें तपञ्चा ले, डाकू जिस समय चञ्चलकुमारीके पत्रके विषयमें बातें कर रहे थे, उसी समय राजपूत वहां जा कूदा। डाकुओंका सरदार गुफाके दरवाजेकी ओर मुंहकर बैठा हुआ था। राजपूतने तलवारके आघातसे सरदारका शिर तनसे जुदा कर दिया; मस्तक जमीनपर गिर पड़ा।

राजपूतने दूसरे डाकूके शिरपर इस जोरसे लात मारी, कि वह बेहोश होकर जमीनपर गिर पड़ा। बाकी दो डाकुओंमें एकने पत्थर फेंक राजपूतको मारना चाहा। राजपूतने उसे पिस्तौलका निशाना बनाया। वह गोली खाकर जमीनपर गिर पड़ा और मर गया। जो डाकू बच गया था, वह गुफासे निकल बेतहाशा भागा। राजपूतने उसका पीछा किया। बाहर डाकूके हाथ वह बरछा लगा, जिसे राजपूतने छिपा रखा था। उसने यह बरछा ले राजपूतपर आक्रमण करते हुए कहा,—"महाराज! मैं आपको पहचानता हूं। अपनी जान बचाइये, नहीं तो मैं आपको मार डालूंगा।"

राजपूतने हंसकर कहा,—"यदि मुझे विश्वास होता, कि तू मुझे बरछा मार सकेगा, तो मैं उसे बायें हाथसे पकड़ लेता। किन्तु तू मुझपर बरछा चला नहीं सकता—यह देख।" यह बात कहते-कहते राजपूतने अपने हाथका खाली पिस्तौल डाकूके दाहने हाथकी मुट्ठीको लक्ष्य कर फेंक मारा। दारुण चोटसे उसके हाथका बरछा जमीन पर गिर पड़ा। राजपूतने उसे उठा लिया तथा माधि-

कलालको चुटिया पकड़ ली। इसके बाद तलवारसे उसका शिर उतार लेनेको तय्यार हुआ।

डाकूका नाम माणिकलाल था। उसने हाथ जोड़, विनतीकर कहा,—"महाराजाधिराज! मेरी जान बख्शिये। मैं आपको शरण लेता हूं।"

राजपूतने उसे परित्यागकर कहा,—"तू मौतसे इतना क्यों डरता है?"

माणिकलालने कहा,—"मैं मौतसे नहीं डरता; किन्तु मेरी एक सात वर्षको कन्या है। उसकी मा मर गई है। उसका मैं ही पालन-पोषण करता हूं। मैं सवेरे उसे खिला आया हूं, सन्ध्याको आ फिर उसे कुछ खिला आऊंगा। यदि मेरी मृत्यु हुई, तो वह भी मर जायेगी। यदि मेरी जान लेना चाहते हैं, तो पहले उसे मार डालिये।"

माणिकलालकी आंखोंसे आंसू टपकने लगे। आंसुओंको पोंछ उसने हाथ जोड़कर कहा—"महाराजाधिराज! मैं आपके चरणोंकी शपथकर प्रतिज्ञा करता हूं, कि आजसे चोरी या डकैती न करूंगा। आजसे आप हीकी सेवा करूंगा, यदि जीता रहा, तो मेरेजैसे क्षुद्र मनुष्यसे भी आपका उपकार हो सकता है।"

राजपूतने कहा,—"क्या तू मुझे पहचानता है?" डाकूने कहा,—"वीरकुल तिलक महाराणा राजसिंहको कौन नहीं पहचानता?"

राजसिंहने कहा,—"मैंने तेरी जान बख्शी; किन्तु तूने ब्राह्मणका माल छीन लिया है। यदि मैंने तुझे सजा न दी, तो लोग यही कहेंगे, कि मैंने राजधर्म्मके अनुसार कार्य्य नहीं किया।"

माणिकलालने हाथ जोड़कर कहा,—"यह मेरा पहला पाप है; इसलिये मुझे थोड़ीसी सजा दीजिये। लीजिये मैं खुद सजा ग्रहण करता हूं।" यह कहकर उसने अपनी कमरसे छुरी निकाल अपनी

एक (तर्ज्जनी) उङ्गली काट डाली ; किन्तु छुरीसे हड्डी न कटी। अब उसने एक ईंटपर उङ्गली रख तथा उसपर छुरी रख उस छुरीपर ईंट मारी, उङ्गली कटकर जमीनपर गिर पड़ी। माणिकलालने कहा,—"महाराज ! इस सजाको मञ्जूर कीजिये।"

महाराणा बहुत ही विस्मित हुए। उन्होंने कहा,—"बस ; बहुत हुआ। तुम्हारा नाम क्या है ?"

डाकूने कहा,—"मेरा नाम माणिकलालसिंह है। मैं राजपूतकुलका कलङ्क हूं।"

महाराणाने कहा,—"आजसे मैंने तुम्हें अपने रिसालेमें नियत किया। अपनी कन्याको साथ ले उदयपुर आओ। वहां मुझसे मिलना, मैं तुम्हें जागीर दूंगा।"

माणिकलाल गुफाके भीतर जा, पत्र, अशरफी और कड़ा ले आया। इन सब चीजोंको महाराजके सामने रख उसने कहा,—"यही सब चीजें ब्राह्मणसे हमने लूटी थीं। दोनो पत्र आप हीके नाम हैं ; मैंने इन्हें पढ़ा था। आशा है, कि इसके लिये आप मुझे क्षमा करेंगे।"

पत्र लेकर महाराणाने देखा, कि पत्र उन्हींके नाम हैं। इसके बाद उन्होंने माणिकलालसे कहा,—"यह स्थान पत्र पढ़नेके उपयुक्त नहीं। मेरे साथ चलो। मैं यहांकी राह नहीं पहचानता।"

माणिकलालके पीछे महाराणा चलने लगे। महाराणाने देखा, कि माणिकलाल न तो कटी हुई उङ्गलीको ओर देखता है और न उसकी कुछ परवाह ही करता है। थोड़ी दूर आगे बढ़ महाराणा नदीकिनारे पहुंचे, उस स्थानका सौन्दर्य्य देख महाराणा मुग्ध हुए।

पांचवां परिच्छेद।

चञ्चलकुमारीका पत्र।

बहती हुई धाराकी धीमी-धीमी आवाज पक्षियोंकी मधुर आवाजसे मिलकर बहुत ही मधुर हो गई थी। वहां फूलोंकी ऐसी बहार थी, कि जिसे देखकर आंखोंमें तरावट आ जाती थी। खुशबूका तो कुछ हाल ही न पूछिये ; खुशबूसे तन-मन प्रफुल्लित होता था। वहीं एक पत्थरपर बैठ महाराणा राजसिंह पत्र पढ़ने लगे।

महाराणाने पहले राजा विक्रमसिंहका पत्र पढ़ा। पत्र पढ़कर यह निश्चय कर लिया, कि ब्राह्मणको कुछ धन देनेहीसे काम चल जायेगा। इसके बाद महाराणाने चञ्चलकुमारीका पत्र पढ़ा। उस पत्रमें लिखा था :—

"महाराणा! आप राजपूतोंके शिरमौर हैं,—हिन्दुओंके शिरोमणि हैं। मुझसे आपका परिचय नहीं। मैं नादान बालिका हूं। यदि मुझपर आफत न आती, तो मुझमें आपको पत्र लिखनेका साहस भी न होता। मुझे सामान्य नारी आपदाकी मारी समझ क्षमा कीजियेगा।

"जो पत्र ले जा रहे हैं, वह मेरे गुरुदेव हैं। उनसे पूछनेसे मालूम हो जायेगा, कि मैं राजपूतकी कन्या हूं। रूपनगर बहुत छोटासा राज्य है। विक्रमसिंह सोलाङ्की राजपूत हैं। मैं अवश्य आपजैसे राजा-महाराजोंके सामने राजकन्या कहलानेयोग्य नहीं। राजपूतकी कन्या समझ मुझपर दया कीजिये; कारण आप राजपूत हैं ; राजपूतोंके सिरताज हैं।

"अब मेरी आपदाका हाल सुनिये। मेरी किस्मत ऐसी खोटी है, कि दिल्लीका बादशाह मुझसे विवाह करना चाहता है। शीघ्र वहांसे फौज आनेवाली है। मुझे फौजके साथ दिल्ली जाना पड़ेगा। मैं राजपूत-कुलकी कन्या हूं। क्षत्रिय-कुलमें मेरा जन्म हुआ है; मैं कैसे मुसलमानसे विवाह करूंगी? राजहंसके कुलमें जन्म लेकर कैसे बगुलेकी सङ्गिनी बनूंगी? हिमालयमें जन्म लेकर कीचड़से कैसे मिलूंगी? राजकुमारी होकर वर्व्वर यवनसे कैसे विवाह करूंगी? इसलिये मैंने यह निश्चय कर लिया है, कि दिल्ली पहुंचनेसे पहले ही विष खा मर जाऊंगी।

"महाराजाधिराज! मुझे मगरूर न समझियेगा। मुझे भली-भांति मालूम है, कि मैं एक मामूली जमींदारकी कन्या हूं। जोधपुर, अम्बर आदिके राजाधिराज भी अपनी कन्याओंका विवाह करना दिल्लीके बादशाहसे कलङ्क नहीं; गौरव समझते हैं। उन घरानोंसे मेरी तुलना हो नहीं सकती। अब आप पूछ सकते हैं, कि तब तुम इतनी मगरूर क्यों? किन्तु महाराज! सूर्य्यदेवके अस्ताचल जानेपर क्या जुगनू नहीं चमकते? ओसके बोझसे जब पद्मका मुंह बन्द होजाता है, तब क्या कुन्दजैसे छोटे-छोटे फूल नहीं खिलते? जोधपुर अम्बर आदिके कुलमें धब्बा लगा है, तो क्या रूपनगर राज्य भी इस धब्बेको लगाये? मैंने भाटोंके मुखसे राजाओंके बारेमें सुना है, कि जब महाराज मानसिंह जङ्गलमें वास करनेवाले प्रतापसिंहके साथ भोजन करने आये थे, उस समय महाराणाने उनके साथ भोजन किया नहीं था। महाराणाने कहा था, कि तुमने अपनी बहनकी शादी तुर्कसे कर दी है, मैं क्योंकर तुम्हारे साथ भोजन कर सकता हूं? क्या उन्हींके वंशधरको समझाना पड़ेगा, कि राजपूत कामिनियोंका तुर्कोंसे विवाह करना राजपूत नामपर धब्बा लगाना नहीं? महाराज! किसी तुर्कको यह ताब न

हुई, कि आज भी आपके वंशकी कन्यासे विवाह करनेका नाम ले। उदयपुरके महाराणाओंने क्यों दिल्लीके बादशाहोंसे अपनी कन्याओंका विवाह न किया? इसलिये, कि वह सच्चे राजपूत हैं। मैं भी राजपूतिन हूं। महाराज! मैंने यह प्रतिज्ञा की है, कि प्राण जाये तो जाये; किन्तु अपने कुलमें धब्बा न लगाऊंगी।

"आवश्यक होनेपर मैं अपनी जान दे दूंगी। मैं केवल १८ वर्षसे ही इस पृथिवीपर आई हूं; इसीलिये कभी-कभी इच्छा होती है, कि यदि और कुछ दिन जीती तो अच्छा होता। किन्तु इस आफतसे मुझे कौन बचायेगा? मेरे पितामें यह शक्ति नहीं, कि वह आलमगीरसे बिगाड़ करें। आपके सिवा छोटे बड़े कुल राजपूत राजा दिल्लीके बादशाहके गुलाम हैं। किसीमें यह ताब नहीं, कि वह बादशाहके विरुद्ध कुछ कह सके। केवल आप अकेले राजपूत-कुलको उज्ज्वल कर रहे हैं; केवल आप ही स्वाधीन नृपति हैं; केवल उदयपुरके महाराणा ही बादशाहका मुकाबिला कर सकते हैं। हिन्दू सनातन-धर्मावलम्बियोंमें ऐसा कोई नहीं, जो आपकी बराबरी कर सके। आपके सिवा और ऐसा कोई नहीं, जो मेरीजैसी आफतकी मारी अबलाकी रक्षा करनेके लिये आगे बढ़े। मैं आपकी शरण आई हूं; क्या आप मेरी सहायता न करेंगे? क्या आप मेरी रक्षा न करेंगे?

"न जाने किस साहससे मैं आपसे अपनी सहायता करनेके लिये अनुरोध कर रही हूं। मुझे मालूम है, कि दिल्लीके बादशाहके साथ विरोध करनेसे आपको बहुत कुछ क्षति पहुंचेगी। मैं बालिकाओंकी तरह बिना सोचे समझे यह बात नहीं कहती, कि दिल्लीके बादशाहोंका शत्रु बनना सहज नहीं। पृथिवीमें ऐसा कोई नहीं, जो दिल्लीके बादशाहोंका शत्रु बनकर पृथिवीपर रह सके। परन्तु महाराजाधिराज! आपको मालूम है, कि संग्रामसिंहने बाबरसे गद्दी छीन ली थी; महाराणा प्रतापसिंहने अकबर बादशाहको मध्य-

प्रदेशसे निकाल दिया था। आप उन्हीं महाराणा प्रतापसिंहकी गद्दी-पर विराजमान हैं—आप उन्हीं महाराणा संग्रामसिंहके वंशधर हैं; क्या आपमें उनसे कम बल है? सुनते हैं, कि एक पहाड़ी जातिने, जिसे महाराष्ट्र कहते हैं, आलमगीरको नीचा दिखाया है। क्या राजस्थानके राजा ऐसे आलमगीरसे डरते हैं?

"आप कह सकते हैं, कि मेरे बाहुमें बल तो है; किन्तु मैं तुम्हारे लिये क्यों किसीसे विरोध करूं? किसी स्त्रीके लिये मैं क्यों खून बहाऊं? दूसरेसे युद्ध करूं? परन्तु महाराज! शरण लेनेवालोंको रक्षा करना क्या राजा-महाराजोंका धर्म्म नहीं? राजपूत स्त्रियोंकी इज्जत बचानेके लिये क्या अपनी जान न्योछावर नहीं करते?"

पत्रमें इतना तो राजकुमारीका लिखा हुआ था, बाकी निर्मलका लिखा था। हमें नहीं मालूम, कि राजकुमारीको यह बात मालूम थी या नहीं। पत्रमें जो कुछ लिखा था वह यह है :—

"महाराज! इस विषयको लिखते लज्जा मालूम होती है; किन्तु लिखे बिना रहा भी नहीं जाता। मैंने यह निश्चय कर लिया है—मैंने कसम खाई है, कि यदि कोई वीर मुझे मुगलोंके पञ्जेसे बचा सका तथा वह वीर राजपूत हुआ और यथाशास्त्र मुझे ग्रहण करनेपर राजी हुआ, तो मैं उससे अवश्य विवाह करूंगी। आप वीरोंके शिर-ताज हैं। युद्ध करना वीरोंका धर्म्म है। पाण्डवोंने कुल क्षत्रियोंसे युद्ध-कर द्रौपदीसे विवाह किया था। भीष्म काशीराज्यमें समस्त राजाओंसे युद्धकर वहांकी राजकन्याओंको छीन लाये थे। महाराज! शायद आप रुक्मिणीके विवाहको भूले न होंगे। महाराजाधिराज! आपजैसा वीर पृथिवीपर कोई नहीं। क्या आप वीरोंका धर्म्मपालन न करेंगे?

"यद्यपि मैं आपके योग्य नहीं; आपके योग्य होनेकी इच्छा करना भी मेरे लिये दुराशा मात्र है, तथापि आपसे यह विनती है, कि आप मुझे बचाइये। आप मुझसे दूसरा सम्बन्ध भी स्थापन कर

सकती हैं। यदि मैं इसके योग्य भी न हुई, तो आपजैसा चाहें वैसा कर सकते हैं। मैंने बड़ी आशासे आपके पास रखा भेजी है। गुरूजी आपके हाथोंमें रखा बांधेंगे। गुरूजी रखा बांध देंगे, इसके बाद राज-धर्म्म आपके हाथों है, जो वह कहें, कीजिये। मेरी जान मेरे हाथ है, यदि मुझे दिल्ली जाना पड़ा, तो दिल्ली पहुंचनेसे पहले ही मैं विष खा मर जाऊंगी।"

पत्र पढ़कर महाराणा कुछ चिन्तित हुए। अन्तमें उन्होंने कहा,—"इन पत्रोंका हाल तुम्हारे सिवा और किसको मालूम है?"

माणिकलालने कहा,—"जिन्हें इन पत्रोंका हाल मालूम था, महाराणा उनकी जान ले चुके; उनकी लाशें गुफामें पड़ी हैं।"

महाराणा। बहुत ठीक; तुम घर जाओ। उदयपुरमें आ मुझसे मिलना। सावधान! इस पत्रका हाल किसीसे न कहना।

इतना कहकर महाराणाने माणिकलालको कई अशरफियां दीं। माणिकलाल प्रणामकर चलता बना।

छठां परिच्छेद।

माताजीकी जय।

महाराणा अनन्त मिश्रको ठहरनेके लिये कह गये थे; किन्तु चित्त उनका चञ्चल था। हथियारबन्द सवारको देख वह कुछ भय-भीत हुए थे। इनपर एकबार आफत आ ही चुकी थी, किसी तरहसे इनकी जान बची थी; किन्तु चञ्चलकुमारीका पत्र आदि सब खो बैठे

थे। यही सोचते थे, कि कैसे उसे मुंह दिखाऊंगा। ब्राह्मण यही सोच रहे थे, कि उनकी दृष्टि पर्व्वतके शिखरपर पड़ी। उन्होंने देखा, कि दो-तीन मनुष्य खड़े परामर्श कर रहे हैं। ब्राह्मण बहुत डरे। उन्होंने सोचा, कि डाकुओंका एक दल आ गया। पहले तो मेरे पास कुछ था, इसलिये मेरी जान बच गई ; किन्तु अब जान कैसे बचेगी ? वह यही सोच रहे थे, कि पर्व्वतपर खड़े हुए मनुष्य इनकी ओर सङ्केतकर आपसमें बातचीत करने लगे। ब्राह्मणमें जो कुछ साहस था, वह भी जाता रहा। वह भागनेके लिये उठे। ठीक उसी समय पर्व्वत-शिखरसे एक मनुष्य उतरने लगा। उसे उतरते देख ब्राह्मण बेतहाशा दौड़े।

ब्राह्मणको भागते देख "पकड़ो, पकड़ो" कहकर कई मनुष्य उसके पीछे दौड़े। ब्राह्मणकी धोती तक खुल गयी ; किन्तु वह नारायणको स्मरण करते-करते जान लेकर भागे। पीछा करनेवाले उन्हें न पा लौट गये।

ब्राह्मणका पीछा करनेवाले और कोई नहीं, महाराणाके नौकर थे। अब पाठक पूछ सकते हैं, कि महाराणा वहां कैसे आये ? राजपूत राजा-महाराजोंको शिकारका बहुत शौक रहता है ; इस लिये वह कोसों शिकारके लिये निकल जाया करते हैं। महाराणा सौ सवार तथा कई नौकरोंको ले शिकार खेलने आये थे। अब वह शिकार खेल उदयपुरकी ओर लौट रहे थे। उनके साथ अक्सर सवार रहा करते थे। कभी-कभी वह वेष बदलकर प्रजाके सुख-दुःखका हाल जाननेके लिये अकेले इधर-उधर चले जाया करते थे। इसी व्यवस्थाके कारण आपकी प्रजा बहुत सुखी थी। कारण वह खुद उनका दुःख दूर करनेके लिये दिलोजानसे चेष्टा करते थे।

शिकार समाप्तकर महाराणा अपने 'विजय' नामक तेज घोड़ेपर सवार हो आगे बढ़े। कोई सवार या नौकर उनके साथ न था।

इस समय मिलनेपर अनन्त मिश्रसे उनसे जो बातें हुई थीं, वह ऊपर कही गई हैं। डाकुओं द्वारा ब्राह्मणके लुट जानेकी बात उनके जीमें उठते ही लुटी हुई चीजें छीन लानेके लिये महाराज स्वयं उद्योगी हुए। महाराणा आपदाके कामोंमें ही हाथ डालते थे।

बहुत देर होनेपर नौकर-चाकर महाराणाको तलाश करने लगे। पहाड़के शिखरसे उतरकर उन्होंने देखा, कि महाराणाका घोड़ा खड़ा है—घोड़ेको खड़ा देखकर वह विस्मित तथा चिन्तित हुए। वह सोचने लगे, कि महाराणा कहां गये ; कहीं उनपर कोई आफत तो नहीं आई? नदीकिनारे एक पत्थरपर अनन्त मिश्रको बैठे देख उन्होंने सोचा, कि शायद इन्हें महाराणाकी खबर मालूम हो। इसलिये वह पहाड़के शिखरसे मिश्रजीको ओर इशारा करने लगे। अन्तमें वह मिश्रजीसे महाराणाका हाल पूछनेके लिये पहाड़से नीचे उतरे; परन्तु मिश्रजी उन्हें डाकू समझ नारायणको स्मरण करते-करते भागे तथा पहाड़की एक गुफामें जा छिपे।

महाराणा चञ्चलकुमारीका पत्र पढ़ और माणिकलालको विदाकर मिश्रजीकी खोजमें नदीकिनारे आये। ब्राह्मणका कुछ पता न लगा ; किन्तु अपने सवार तथा नौकरोंको उन्होंने वहां देखा। महाराणाको देखते ही नौकरोंने चिल्लाकर कहा,—"जय महाराणा राजसिंहकी जय।" विजय महाराणाको देख दौड़ता हुआ उनके पास आ खड़ा हुआ। महाराणा उसपर सवार हुए। महाराणाके कपड़ेपर खूनका दाग देख सवार समझ गये, कि महाराणाने किसीसे युद्ध किया है। किन्तु राजपूतोंका युद्ध रात दिनका काम है ; इसलिये किसीने महाराणासे कुछ न पूछा।

महाराणाने पूछा,—"यहां एक ब्राह्मण बैठे थे, वह कहां गये।"

जिन्होंने ब्राह्मणका पीछा किया था, उन्होंने कहा,—"वह भाग गये।"

महा०। उन्हें शीघ्र ढूंढ़ लाओ।

नौकरोंने सब बातें जान कहा,—"हमने उनको बहुत तलाश किया; किन्तु उनका कहीं पता न चला।"

सवारोंमें महाराणाके दो पुत्र तथा सचिव आदि थे। पुत्र तथा सचिवोंको साथ ले महाराणाने कुछ आगे बढ़कर उनसे कहा,—"आज बहुत देर हो गई है; भूख भी लगी है; परन्तु उदयपुरमें लौटनेकी सम्भावना नहीं। कारण हमें एक छोटासा युद्ध करना होगा। जो युद्ध करना चाहते हों; वह हमारे साथ आयें और जिन्हें भूख तथा प्यासने सताया हो वह उदयपुर चले जायें।"

इतना कहकर महाराणा फिर पहाड़के शिखरपर चढ़ने लगे। "जय महाराणाकी जय! जय, माताजीकी जय!" कहते हुए कुल सवार राणा के पीछे हो लिये। पर्व्वतके शिखरपर चढ़ सवार "हर, हर, बम, बम" कहते हुए रूपनगरकी ओर दौड़े। घोड़ोंकी नालोंके आघातसे पत्थरोंसे चिनगारियां निकलने लगीं।

सातवां परिच्छेद।

निराशा।

रूपनगरसे अनन्त मिश्रके विदा होतेही रूपनगरमें खूब धूमधाम होने लगी। दो हजार मुगल-सिपाही रूपनगरमें आ पहुंचे। वह चञ्चलकुमारीको ले जानेके लिये आये थे।

निर्म्मलका मुंह कुम्हला गया। उसने चञ्चलकुमारीसे कहा,—"अब क्या करोगी?"

चञ्चलकुमारीने मुसकराकर कहा,—"जो होना होगा सो होगा।"

निर्म्मल। तुम्हें दिल्ली लेजानेके लिये दो हजारसे भी अधिक सिपाही आये हैं; किन्तु गुरुजी अभी उदयपर पहुंचे भी न होंगे। राजसिंहका जवाब मिलनेसे पहले ही तुम्हें दिल्ली जाना पड़ेगा। अब क्या होगा?

चञ्चल०। जो होना होगा, सो होगा; अब तो केवल एक ही उपाय बाकी है। मैंने निश्चयकर लिया है, कि रास्ते हीमें विष खा मर जाऊंगी। मैं केवल पितासे यह अनुरोध करूंगी, कि वह सेनापतिसे कहकर मुझे सात दिनकी मुहलत दिलवादें।

पितासे मुलाकात होनेपर चञ्चलकुमारीने कहा,—"मैं अब रूपनगरसे चली। आपके श्रीचरणकमलोंके दर्शनका भी अवसर न मिलेगा। मुझे केवल सात दिनका अवसर दिया जाये। सात दिनके भीतर मैं आप, माता तथा सखियोंसे विदा हो दिल्ली रवाना हूंगी। आप सात दिनकी मुहलत सेनापतिसे मांग दीजिये।"

राजाकी आंखोंसे आंसू टपकने लगे। उन्होंने कहा,—"मैं सेनापतिसे अनुरोध करूंगा। किन्तु मैं कह नहीं सकता, कि वह मुहलत देंगे या नहीं।"

राजाने कुल हाल सेनापतिसे कहा तथा मुहलत मांगी। सेनापतिने सोचा, कि बादशाहने तो यह निश्चय कर ही नहीं दिया है, कि अमुक दिन तुम्हें दिल्ली लौटना पड़ेगा। किन्तु सात दिन ठहरनेका भी उन्हें साहस न हुआ। भविष्यत् बेगमका एकदम वह अनुरोध भी न टाल सके। पांच दिन ठहरनेपर राजी हुए। चञ्चलकुमारीके हृदयमें आशाकी झलक दिखाई दी।

उदयपुरसे पांच दिनके भीतर भी कोई समाचार न आया; मिश्रजी भी न लौटे। चञ्चलकुमारीने हाथ जोड़कर कहा—"हे अनाथ नाथ देवादिदेव! अबलाको मार न डालना।"

चञ्चलकुमारी रातको निर्म्मलके साथ सोई। सारी रात दोनो रोती

रह गईं। निर्म्मलने कहा,—"मैं तुम्हारे साथ चलूंगी।" निर्म्मल कई दिनोंसे यह बात कह रही थी। कुमारीने कहा,—"तुम मेरे साथ कहां जाओगी? मैं जानपर खेल रही हूं। मैं मरने जा रही हूं।" निर्म्मलने कहा,—"मैं भी मरूंगी। तुम्हारे चले जानेपर मैं कैसे जीऊंगी?" कुमारीने कहा,—"मुझपर दुःख पर दुःख क्यों डाल रही हो?" निर्म्मलने कहा,—"चाहे मुझे साथ ले चलो या न ले चलो, किन्तु मैं अवश्य चलूंगी? कोई मुझे रोक न सकेगा।" दोनों होने रोते-रोते रात काटी।

आठवां परिच्छेद।

मेहेरजान।

जबतक मुगल-सिपाही रूपनगरमें रहे, तबतक उन्होंने खूब गुलछर्रे उड़ाये। मुगलोंकी फौजके साथ डेरेदारिनें जाया करती थीं। जब युद्ध न होता था, तब सिपाही नाच-रङ्गमें समय व्यतीत करते थे। सिपाही केवल आनन्द लूटने रूपनगर आये थे। खेमोंमें सारी रात नाच-गाना होता रहता था।

डेरेदारिनोंमें मेहेरजानका नाम सहसा प्रसिद्ध हुआ। दिल्लीसे कई तवायफें आई थीं; किन्तु कोई भी मेहेरजानकी बराबरी कर न सकी। इसपर तुर्रा यह था, कि मेहेरजान नाचनेवाली होकर भी सच्चरित्रा थी।

मुगलोंके सेनापति सैयद हसनअलीने उसका मुजरा सुनना चाहा; किन्तु मेहेरजान पहले राजी न हुई। मेहेरजानने कहला भेजा,—"मैं बहुत लोगोंके सामने मुजरा कर न सकूंगी।" मुग-

लोंके सेनापति सैयद हसनअली राजी हुए। उन्होंने कहा,—"मैं किसी मित्रको निमन्त्रित न करूंगा।" मेहेरने आकर गाना सुनाया। मेहेरजानका मुजरा सुन सेनापति बहुत ही खुश हुए तथा उन्होंने उसको पुरस्कार देना चाहा; किन्तु मेहेरजानने कहा,—"मुझे धन की लालसा नहीं। यदि आप सन्तुष्ट हुए हों, तो मैं जो पुरस्कार मांगूं, वह दें; इसके सिवा मैं कुछ इनाम नहीं चाहती।"

सैय्यद हसनअलीने पूछा,—"तुम क्या चाहती हो?"

मेहेरजानने कहा,—"मैं आपकी घुड़सवार फौजमें भर्त्ती हुआ चाहती हूं।"

सय्यद हसनअली विस्मित तथा अचम्भित हुए। वह मेहेरजानकी ओर देखने लगे। मेहेरजानने कहा,—"मैं घोड़े हथियार तथा पोशाकका मूल्य दूंगी।"

सय्यद हसनअलीने कहा,—"मैं स्त्रीको कैसे फौजमें भर्त्ती करूंगा?

मेहेरजानने कहा,—"क्या हर्ज है? युद्ध तो होगा ही नहीं; और यदि हुआ, भी तो मैं युद्धसे भागनेवाली नहीं।

सय्यद हसनअलीने कहा,—"लोग क्या कहेंगे?"

मेहेर०। आप इस बातको गुप्त रखियेगा। किसीसे कोई बात न कहियेगा।

हसन०। तुम क्यों फौजमें भर्त्ती हुआ चाहती हो?

मेहेर०। मेरी इच्छा चाहे कुछ ही क्यों न हो, पर इससे बादशाहको कुछ नुकसान न पहुंचेगा।

पहले तो हसनअली राजी न हुए; किन्तु अन्तमें उन्हें राजी होना पड़ा। मेहेरजान सिपाही बनी।

पाठक! क्या आप जानते हैं, कि यह मेहेरजान कौन है? मेहेरजान वही आपकी पूर्व्व परिचिता दरिया बीबी हैं।

नवां परिच्छेद ।

महाराणा और माणिकलाल ।

अब फिर माणिकलालकी आवश्यकता हुई; इसीसे उसके विषयमें कुछ लिखना पड़ता है। महाराणासे विदा हो माणिकलाल फिर उस गुफामें लौट गया। अब उसकी यह इच्छा न थी, कि फिर डाकुओंका साथ दे; किन्तु, वह पुराने मित्रोंको भूल न सका। वह मित्रोंको खोजमें गुफाके भीतर गया था। उसने निश्चय कर लिया था, कि जो जीते हों, उनकी जान बचानी चाहिये; उनकी दवादारूकी व्यवस्था करनी चाहिये।

गुफामें जाकर माणिकलालने देखा, कि दोकी लाशें पड़ी हुई हैं। जो केवल मूर्छित हो गया था, वह कहीं चला गया है। शायद होशमें आते ही वह वहांसे भाग गया। माणिकलाल दुःखित हो जङ्गलसे सूखी लकड़ियां बीन लाया। उन लकड़ियोंसे चिता रचकर, पत्थर तथा लोहेकी सहायतासे अग्नि उत्पादनकर लाशोंको जलाया। अब वह सोचने लगा, कि जिस ब्राह्मणका सर्वस्व छीन लाये थे, उसे उस वृक्षसे खोलना चाहिये। वह बेचारा अबतक बंधा पड़ा होगा। वह जहां उस ब्राह्मणको वृक्षसे बांध गया था; वहां गया; किन्तु ब्राह्मणका कुछ पता न लगा। वहां जाकर देखा, कि वृक्षोंकी शाखाएं जमीनपर पड़ी हुई हैं। नदीका जल कुछ मैला हो गया है। इन चिन्होंको देख माणिकलाल समझ गया, कि यहां बहुतसे मनुष्य आये थे। पत्थरोंकी ओर दृष्टि डालनेसे उसे मालूम हुआ, कि यहां घोड़े भी आये थे। बहुत

सोच-विचारकर माणिकलालने यह स्थिर किया, कि निश्चय ही यहां सवार आये थे।

चतुर माणिकलाल यह चेष्टा करने लगा, कि देखें सवार किधरसे आये थे। चिन्ह देखनेसे मालूम हुआ, कि कुछ तो दक्षिणकी ओरसे और कुछ उत्तरकी ओरसे आये थे। अन्तमें उसको यह निश्चय हो गया, कि कुल सवार उत्तरकी ओरसे आये थे तथा उत्तरहीकी ओर चले गये।

यह सब निश्चयकर माणिकलाल घर चला गया। वहांसे माणिकलालका मकान चार पांच कोस था। वहां पहुंच वह खाने-पीनेके बाद पूर्व्वकथित अपनी कन्याको ले वहांसे विदा हुआ। मकानमें ताला लगा दिया।

माणिकलालके और कोई न था। केवल एक विधवा स्त्री उसके मकानके पास रहा करती थी; माणिकलाल उसे बुआ कहा करता था।

माणिकलालने बुआके पास जाकर कहा,—"क्या मेरी इस कन्याका पालन-पोषण कर सकती हो?"

बुआने पूछा—"कब तक?"

माणि०। दो महीने तक।

बु०। मैं बहुत गरीब हूं, कैसे इसका पालन कर सकूंगी?

मा०। क्या एक बालिकाका पालना तुम्हारे लिये कठिन है?

बु०। दो महीनेमें इसके लिये एक अशरफीसे कम खर्च न होगा

मा०। मैं एक अशरफी देता हूं, मेरी बेटीको अपने पास रखो। मैं उदयपुर जाता हूं। वहां मुझे एक बड़ी नौकरी मिली है।

इतना कहकर माणिकलाल महाराणाकी दी हुई अशरफियों—मेंसे एक अशरफी दे तथा कन्याको बुआकी गोदमें बिठा वहांसे चलता बना।

बुआ बड़ी लालची थी। वह भलीभांति जानती थी, कि एक अशरफी इस बच्चीके लिये सालभरतक काफी होगी। माणिकलाल इसे केवल दो महीनेका खर्च कह दे रहा है; इसलिये इसमें लाभकी सम्भावना है। इसके सिवा उसे बड़ी नौकरी मिली है। जब उसके पास बहुतसा धन होगा, तब क्या वह मुझे कुछ भी न देगा? माणिकलालको हाथमें रखना अच्छा है।

बुआने अशरफी उठा ली तथा उस बच्चीको पुचकारते हुए गोदमें ले उसने कहा,—"मैं अवश्य तुम्हारी बेटीका पालनपोषण करूंगी। अब तुम जहां चाहो, वहां जा सकते हो।"

कन्याके पालन-पोषणका बन्दोबस्तकर माणिकलाल गांवसे चला गया। किसीसे कुछ न कह रूपनगरकी ओर रवाना हुआ।

माणिकलाल अपने दिलमें यह सोच रहा था,—"रूपनगरकी ओरसे क्यों इतने सवार आये थे। महाराणा भी अकेले टहल रहे थे; महाराणा क्यों इतनी दूर निकल आये थे? मालूम होता है, कि सवार महाराणाके साथ आये होंगे। वह उदयपुरकी ओरसे आये थे। शायद जङ्गलकी सैर करने या शिकार खेलने आये होंगे। इसके बाद मालूम हुआ, कि वह उदयपुर नहीं, उत्तरकी ओर गये हैं। शायद चञ्चलकुमारीका पत्र पा महाराणा सिपाहियोंको साथ लेकर उसीकी खोजमें गये हैं। यदि उन्होंने ऐसा न किया हो, तो उनका राजपूतपति कहलाना वृथा है। मैं महाराणाका नौकर हूं। मुझे भी उनका साथ देना चाहिये; किन्तु वह सवार हैं और मुझे पैदल जाना पड़ेगा। केवल आशा इतनी ही है, कि पहाड़पर घोड़े उतनी तेजीसे चल नहीं सकते, जितनी तेजीसे मैं चल सकता हूं।" माणिकलाल रात दिन चल ठीक समयपर रूपनगर पहुंचा। उसने रूपनगरमें पहुंच देखा, कि मुगल फौजके तम्बू तने हैं; किन्तु राजपूत सवारोंका चिह्न भी

वहां कहीं दिखाई नहीं देता । रूपनगर शहरमें पहुंच सुना, कि राजकुमारीको लेजानेके लिये दिल्लीसे फौज आई है ।

माणिकलालको सामान्य सेनापति कहना चाहिये। कारण, वह न केवल चालाक ही था वरं साहसी तथा धूर्त्त भी था। वह महाराणाका पता न पा दुःखित न हुआ । उसने मन ही मन कहा, कि मुगलोंको महाराणाका पता न लगेगा ; किन्तु मुझे उनका पता अवश्य लग जायेगा ।

रूपनगरके एक दरिद्र अधिवासीसे माणिकलालसे कहा,— "यदि तुम मुझे दिल्ली जानेकी राह बता दो, तो मैं तुम्हें ईनाम दूं।" पुरस्कारकी लालचमें पड़ उसने माणिकलालको दिल्ली जानेकी राह बता दी। माणिकलाल उस मार्गसे आगे बढ़ा। कारण, वह जानता था, कि राजपूत इसी मार्गके किसी स्थानमें छिपे होंगे ।

दो-तीन दिन माणिकलालको राजपूतोंका कोई पता न लगा ; किन्तु एक स्थानमें जहां राहको दोनो ओर ऊंचे-ऊंचे पहाड़ थे, राह-की चौड़ाई बहुत ही कम थी ; माणिकलाल अन्दाजन वहां ही जा पहुंचा ।

नेपोलियन आदि बहुत ही प्रसिद्ध सेनापति थे । जिसे राज्य मिल जाता है, वह डाकू नहीं कहलाता । माणिकलालको राज्य नहीं मिला था ; इसीलिये उसे डाकू कहा जाता है । प्रसिद्ध राजपूत डाकुओंकी तरह माणिकलाल भी डाकू-राजा था । इस राहको देखते ही उसने निश्चय कर लिया, कि यदि महाराणा इधर आयें हैं तो अवश्य यहीं कहीं होंगे । जब मुगल इधरसे होकर गुजरेंगे, तब पर्व्वत-के शिखरसे राजपूतोंके घोड़े वज्रकी तरह उनपर टूट पड़ेंगे। दक्षिण-के पर्व्वतोंपर चढ़ना तथा उतरना सवारोंके लिये कठिन है ; इसीलिये राजपूत उधर नहीं । राजपूत इस बांई ओरके पर्व्वतपर निश्चय ही छिपे होंगे। माणिकलाल जब पर्व्वतपर चढ़ने लगा, तब सूर्य्य

डूब गये थे तथा अंधियारी घूंघट काढ़कर सामने आ खड़ी हुई थी।

पर्वतके शिखरपर जा उसने देखा, कि वहां पर न आदमी हैं न आदमजात। सोचने लगा, कि महाराणाको ढूंढ़ना चाहिये; किन्तु फिर उसके दिलमें यह ख्याल उत्पन्न हुआ, कि महाराणाके सिवा मुझे और कोई नहीं पहचानता। मुझे मुगलोंका जासूस समझकर राजपूत मार सकते हैं। इतना विचार वह आगे न बढ़ा। वह वहीं खड़ा हो चिल्लाने लगा,—"महाराणाकी जय।"

यह आवाज सुनते ही चार-पांच राजपूत वहां आ पहुंचे तथा म्यानसे तलवार निकाल माणिकलालके सामने आ धमके।

माणिकलालको देख एकने कहा,—"इसकी जान न लेना।"

माणिकलालने मुंह फेरकर देखा, कि स्वयं महाराणा सामने खड़े हैं।

महाराणाने कहा,—"इसपर तलवार न चलाओ; यह हमारा ही आदमी है।"

महाराणाका कहना ही था, कि कुल राजपूत वहांसे तुरन्त गायब हो गये।

महाराणा माणिकलालको साथ ले एक पत्थरकी ओटमें चले गये वहां बैठ महाराणाने माणिकलालसे पूछा,—"तुम यहां क्यों आये हो?"

माणिकलालने कहा,—"जहां प्रभु हैं, गुलाम वहीं हाजिर होगा। मैं इस आशासे आया हूं, कि इस विपत्तिके कार्य्यमें यदि मुझसे आपकी कुछ भी सहायता हो सके, तो मैं अपनेको धन्य समझूंगा। मुगलोंकी फौजकी संख्या दो हजार है और आपके साथ केवल सौ ही सवार हैं। मैं कैसे चुप रह सकता था? आपने मेरी जान बख्शी है। मैं उसे कैसे भूल जाऊं!"

महाराणाने पूछा,—"तुम्हें कैसे मालूम हुआ, कि मैं यहां आया हूं ?"

माणिकलालने कुल हाल कह सुनाया। महाराणा बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा,—"तुम्हारा आना बहुत ही अच्छा हुआ। मुझे भी तुम्हारी जरूरत है। कहो मेरी आज्ञा मानोगे ?"

माणिकलालने कहा,—"यथासाध्य—जीवन रहते कभी आज्ञो-ल्लङ्घन न करूंगा।"

महा०। मेरे साथ केवल सौ तथा मुगलोंकी फौजमें दो हजार जवान हैं; इससे मुझे जयकी आशा नहीं। देखता हूं, कि राजकन्याको मुगलोंके पञ्जेसे छुड़ाना कठिन होगा। राजकन्याकी जान बचाकर युद्ध करना पड़ेगा। यदि कुमारी युद्धक्षेत्रमें रहीं, तो वह जखमी हो सकती हैं। उनको बचाना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है।

माणिकलालने कहा,—"मैं मूर्ख हूं; मेरी समझमें यह बात नहीं आती। मुझे आज्ञा दीजिये, कि अब मैं क्या करूं ?"

महाराणाने कहा,—"कल तुम मुगल-सिपाहियोंके वेषमें मुगल-फौजके साथ यहां आना। राजकुमारीकी पालकीके साथ-साथ तुम्हें रहना चाहिये।"

इसके बाद महाराणाने उसे समझा दिया, कि उसे और क्या क्या काम करना पड़ेगा। माणिकलालने कुल हाल सुनकर कहा,—"महाराणा राजसिंहकी जय हो। मैं आपका यथासाध्य कार्य्य करूंगा। मुझे एक घोड़ा ईनाम दीजिये।"

महा०। मेरे साथ सौ सिपाही तथा सौ ही घोड़े हैं। मैं और किसीसे घोड़ा मांग न सकूंगा; हां मेरा घोड़ा खुशीसे ले जाओ।

माणिक। मैं घोड़ा न लूंगा। मुझे हथियार दीजिये।

महा०। हथियार भी मेरे पास नहीं; किसे निरस्त्रकर तुम्हें

हथियार दूं ? मेरा ले सकते हो ?

माणिक। ऐसा हो नहीं सकता ; अच्छा, पोशाक दीजिये ।

महा०। शरीरके ऊपरके कपड़ोंके सिवा यहां और कोई कपड़ा नहीं। मैं कुछ दे न सकूंगा।

महा०। मुझे आज्ञा दीजिये, कि मैं जैसे चाहूं, आवश्यक चीजें संग्रह कर लूं।

महाराणाने मुस्कराकर कहा,—"क्या चोरी करोगे ?"

माणिक। मैंने प्रतिज्ञा की है, कि अब मैं यह कार्य्य न करूंगा।

महा०। तब क्या करोगे ?

माणिक। ठगकर लूंगा।

महाराणाने मुस्कराकर कहा,—"युद्धके समय सब लोग चोर तथा सब लोग वञ्चक हैं। मैं बादशाहकी बेगमको चुराने आया हूं ; चोर-डाकुओंकी तरह छिपकर बैठा हुआ हूं ; तुम जैसे चाहो, आवश्यक चीजें संग्रह कर लो।"

माणिकलाल प्रणामकर आनन्दित होता हुआ चला गया।

दशवां परिच्छेद ।

रसिका तम्बोलिन ।

घूंघट काढ़े मुस्कराती हुई सन्ध्या देवीने दर्शन दिया। रूपनगरके बाजारमें पहुंच माणिकलालने देखा, कि बाजारकी शोभा अवर्णनीय है। दीपावलीकी चमकसे आंखें चौंधिया जाती थीं; सजी हुई मिठाइयोंको देख मुंहमें पानी भर आता था। फूलोंकी खूबसूरती तथा सुगन्धसे मन-प्राण प्रफुल्लित होता था। माणिकलाल इसी

खोजमें था, कि किसी तरह घोड़ा तथा हथियार मिले ; किन्तु माणिकलाल चाहता न था, कि पेट भरनेसे पहले वह उक्त द्रव्यों-को खोज करे। माणिकलाल एक हलवाईकी दूकानपर गया। कुछ मिठाई खरीद खाने लगा ; किन्तु थोड़ी सी मिठाईसे उसका काम कब चलता था। मणिकलाल डेढ़ सेर मिठाई खाकर एक लोटा जल, जिसमें दो सेरसे भी अधिक पानी समाता था, पी गया। अब पानकी तलाशमें माणिकलाल इधर-उधर फिरने लगा।

कुछ दूर आगे बढ़ उसने देखा, कि एक दूकानपर खूब भीड़ लगी हुई है। दीपोंकी रोशनीसे मालूम होता है, मानो फिर दिन उगने वाला है। तसवीरोंकी भी अजीब बहार है। चित्र सब अश्लील हैं ; दीवारोंपर भांति-भांतिके कागज चिपके हुए हैं। दूकानके ठीक बीचोबीच सुन्दर गालीचेपर बैठ एक नमकीन तम्बोलिन पान बेंच रही थी। उसकी अवस्था तीससे कम न थी ; किन्तु रंग गनदमी, आंखें विशाल तथा शर्बती थीं ; चित्त चञ्चल और नयन सुहावने थे। उसका मुस्कराना बहुत ही सुन्दर था। वह जिधर कटीले नयनोंको फेरती थी, उधर होके दर्शक तथा खरीदार घायल होते थे। जेवरोंकी आवाज तथा उसकी मुस्कराहट होपर लोग सब-कुछ दे डालनेको तय्यार हो जाते थे। माणिकलाल भी वहां जा पहुंचा और बोला, "अच्छा पान बना कर, खिलाओ।"

तम्बोलिन खुद पान बेचती नहीं थी ; एक और स्त्री जो उसके सामने बैठी हुई थी, वही बीड़ा लगाती तथा पान बेंचती थी। तम्बोलिन केवल मुस्कराकर खरीदारोंको घायल करती तथा पैसा बटोरती थी।

उस स्त्रीसे पान लेकर माणिकलालने दुगना मूल्य दिया तथा फिर पान मांगा। इधर पान तय्यार होने लगा, उधर माणिकलाल

तम्बोलिनसे बातें करने लगा। अन्तमें उसने भोली-भाली मीठी-मीठी बातें बना तम्बोलिनको खुश कर लिया। जब तम्बोलिनको कुछ राजी कर लिया, तब माणिकलाल दूकानपर जा बैठा। दूकानकी शोभा वर्णन करते हुए माणिकलालने उसके जेवरकी खूबसूरती तथा तम्बोलिनके नमकीनपनका उल्लेख किया; तम्बोलिन बहुत ही सन्तुष्ट हुई। माणिकलालने कुल इलाइचियोंको खरीद लिया। जो स्त्री पान बना रही थी, वह इलायची लेने कहीं अन्यत्र गई। अवसर पा माणिकलालने तम्बोलिनसे कहा, कि मुगलोंकी फौजमें मेरा एक दुश्मन है; मैं उसकी खबर लेना चाहता हूं। यदि तुम मेरी सहायता करो, तो मैं उससे कुछ बदला लूं। कारण, तुम चतुर हो तथा इस कार्य्यमें एक चतुर नारीकी आवश्यकता है। इतना कहकर माणिकलाल गाने लगा।

"एक चतुर नारि करके सिंगार, ठाढि अपने द्वार, मोर मन हरि लीनो हो।" इत्यादि।

माणिकलालका गाना सुनकर तम्बोलिन मोहित हो गई। उसने माणिकलालसे कहा, कि तुम जो हुक्म करोगे, मैं उसे पूरा करूंगी। माणिकलालने उसे एक अशरफी देना चाही; पर वह अशरफी लेनेपर राजी न हुई। उसने कहा, कि मैं अशरफी न लूंगी। मैं यों ही तुम्हारी सहायता करूंगी; अब बताओ, कि मैं किस तरह तुम्हारी सहायता कर सकती हूं।

माणिकलालने धीरेसे उससे कुछ कहा। पानवाली दूसरोंको दिक करना पसन्द करती थी; इसलिये उसने राजी हो कर कहा, कि आप बन्दोबस्त कीजिये।

माणिकलालने दावात, कलम और कागज मांगा। तम्बोलिनने निकटकी दूकानसे दावात, कलम और कागज मंगवाया। माणिकलालने पानवालीसे परामर्शकर यह पत्र लिखा—

"प्राणप्यारे !"

उस दिन आप जब बाजारको सैर करने आये थे, तब मैं आपको देख बहुत ही मुग्ध हुई थी। यदि आप मुझसे मुलाकात न करेंगे, तो मैं विष खा मर जाऊंगी । पत्रवाहकके साथ आप बेखटके चले आइये । यह आपको मेरे पास लिवा लायेगा ।

तुम्हारी मेहर ।"

पत्र लिख जानेपर उसके शिरहानेपर मणिकलालने लिखा,—"मुहम्मदखां" तम्बोलिनने पूछा,—"यह कौन है ?"

माणिक०—एक मुगल सवार है ।

असलमें माणिकलाल न तो किसी सवारको पहचानता था और वह कभी मुगलोंको फौजमें भरती हुआ था। उसने यह निश्चय कर लिया, कि दो हजार मुगलोंमें अवश्य कोई न कोई मुहम्मदखां होगा । उसे भलीभांति मालूम था, कि मुगल अपनेको खां कहते हैं। इस लिये किसीका नाम न जाननेपर भी उसने पत्रमें मुहम्मदखां लिखा। पत्र लिखकर मणिकलालने कहा, कि मैं ही उसे यहां बुला लाऊंगा ।

तम्बोलिनने कहा,—"यहां लानेसे काम न चलेगा। एक अलग मकान किरायेपर लेना पड़ेगा ।"

माणिकलाल राजी हुआ। दोनोंने एक मकान किरायेपर ले लिया। मुगलकी अभ्यर्थनाके लिये ताम्बोलिन मकानको साफ करवाने लगी। माणिकलाल पत्र ले मुगलोंको छावनीमें गया । वहांका रङ्ग-रूप, चाल-ढाल कुछ निराला था। कहीं मुजरा हो रहा था, कहीं तास-चौपड़को धूम थी, कहीं दश-बीस सवार जमा हो पेटपूजन कर रहे थे । माणिकलालने वहां जा बहुतोंसे पूछा ; पर ठीक पता न चला। कोई कहता,—"मुझे नहीं मालूम ।" कोई कहता,—"यहांसे चले जाओ।" अन्तमें एकने कहा,—

"मैं मुहम्मदखांको नहीं पहचानता ; पर मेरा नाम नूरमुहम्मद अवश्य है। तुम्हारा पत्र देखें। पत्रके देखनेसे मालूम हो जायेगा, कि वह पत्र मेरा है या नहीं।"

माणिकलालने आनन्दित हो उसे पत्र दिया। माणिकलाल समझ गया, कि अब यह फन्देमें फंसा। मुगलने पत्र पढ़ मन ही मन कहा,—"पत्र चाहे किसीका क्यों न हो ; जब खुदाने मौका दिया है, तब क्यों न एक बार उस बीबीको देख आऊं ?" उसने माणिकलालसे कहा,—"हां यह पत्र मेरा ही है। ठहरो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूं।" यह कह वह पोशाक पहन, बाल संवार, इतर लगा माणिकलालके साथ हो लिया। दो चार कदम आगे बढ़ बोला,—"कितनी दूर है ?"

माणिकलालने हाथ जोड़कर कहा,—"हुजूर बहुत दूर है। घोड़े पर चलनेसे अच्छा होता।"

सवारने अपने साईसको बुला घोड़ा लानेकी आज्ञा दी। घोड़ा आया। साईसको विदाकर सवार घोड़ेपर चढ़ने होको था, कि माणिकलालने हाथ जोड़कर कहा,—"हुजूर! बड़े घरकी बात है, खाली हाथ वहां कैसे जाइयेगा ? हथियार ले लीजिये।"

मुगलने समझा, कि नौकर ठीक कहता है। हथियारबन्दकी खूबसूरती कुछ निराली ही होती है। सोच-विचारकर वह हथियार ले माणिकलालके साथ हो लिया।

बाजारमें, जहां मकान किराये-लिया गया था, वहां पहुंच माणिकलालने कहा,—"यहीं उतरना होगा, मैं आपका घोड़ा पकड़ता हूं। आप घरमें जाइये।"

मुगल-सिपाही वहीं घोड़ेसे उतरा। माणिकलालने घोड़ा पकड़ लिया। खां सशस्त्र घरमें जा रहा था ; किन्तु उसे याद आया, कि हथियार-बन्द होकर स्त्रियोंसे गुफ्तगू करना अच्छा नहीं। लौट

आया और सब हथियार माणिकलालके पास रख गया । माणिक-लालको और भी सुबीता हुआ।

मकानमें घुस खांने देखा, कि घरमें एक तख्तपोशपर सुन्दर बिछौना बिछा है और उसपर एक सुन्दरी बैठी है । गुलाबके सुगन्धसे घर गमक रहा है। चारो तरफ फूल बिखरे हुए हैं। सामने नैचा लगी हुक्केपर सुनहली चिलममें सुगन्धित तम्बाकू सजा रखा हुआ है। मुगल-सिपाही जूता उतार तख्तपोशपर जा बैठा। तम्बोलिन मीठी-मीठी बातें करने लगी ; मुगलने कपड़े उतारकर रख दिये तथा वह फूलका पङ्खा हाथमें ले हवा करने लगा ।" नैचेका नल मुंहमें लगाकर खुशीसे धुआं खींचने लगा । बीबीने भी दो ही चार प्रणयकी मीठी-मीठी बातें कर उसे मोह लिया ।

तम्बाकूके धरते न धरते ही माणिकलालने आ दरवाजेपर धक्का दिया । बीबीने पूछा,—"कौन है ?"

माणिकलालने बोली बदलकर कहा,—"मैं हूं!"

यह शब्द सुनते ही वह चालाक स्त्री खांसे डरती हुई कहने लगी—"बड़ी मुश्किल हुई । मेरा स्वामी आया है । सोचा था, कि वह आज न आयेगा। तुम इस तख्तपोशके नीचे जरा छिप जाओ । मैं उसे यहांसे अभी टाल देती हूं।"

मुगलने कहा,—"ऐसा क्यों ? मर्द होकर उससे छिपूंगा ? आने दो ; मैं अभी उसे काट डालूंगा।"

पानवालीने जीभ काटकर कहा—"यह क्या ? मेरे पतिको मार कर, मेरे अन्न-वस्त्रका द्वार बन्द करोगे ? यही क्या तुम्हारे प्रेमका फल है ? शीघ्र तख्तपोशके नीचे छिप जाओ । मैं अभी इसको विदा कर देती हूं ।"

इधर माणिकलाल बारंबार द्वारपर धक्का देने लगा। लाचार मुगल-सिपाही तख्तके नीचे घुस गया । वह जरा अधिक मोटा था,

इससे सहजमें घुस न सका; उसके शरीरके चमड़े कई जगह छिल गये। क्या करे, प्रेमके लिये बहुत कुछ सहना पड़ता है। वह लम्बा चौड़ा मासपिण्ड तख्तपोशके नीचे जब जा पहुंचा, तब पानवालीने दरवाजा खोल दिया।

घरके भीतर घुसते ही पानवाली पहलेकी सिखाई हुई बात बोली,—"कहो लौट क्यों आये? तुमने तो कहा था, कि आज न आऊंगा?"

माणिकलालने पहलेकी भांति बोली बदलकर कहा,—"चाभी भूल गया था।"

पानवालीने चाभी खोजनेके बहाने मुगल-सिपाहीके उतारे हुए कपड़े हाथमें ले लिये। पोशाक लेकर माणिकलाल और पानवाली दोनो बाहर निकल आये तथा सांकल लगा बाहरसे कोठरीमें ताला बन्द कर दिया। मुगल-सिपाही उस समय तख्तपोशके नीचे बैठा हुआ मच्छरोंकी दंशन-यन्त्रणा भोग रहा था।

उसे गृह-पिञ्जरमें बन्दकर माणिकलालने उसके कपड़े पहन लिये। पीछेवह उसीके हथियारोंसे सजधज उसीके घोड़ेपर चढ़ मुगलों-कीछावनीकी ओर चला।

चौथा खण्ड ।

पहला परिच्छेद ।

चञ्चलकी विदाई ।

सूर्य्य नारायणके उदय होनेके कई घण्टे पहलेसे ही मुगल-सिपाही सफरकी तय्यारी करने लगे। पौ फटते ही सिपाही कलाह और लुङ्गी पहन, कमर कस हथियार ले और साफा बांध किलेके फाटक पर आ डटे। पांच-पांच सवारोंकी कतार बनाकर हरएक कतारके पीछे दूसरी कतार खड़ी की गई। सवारोंकी लम्बी दाढ़ी, घोड़ोंके रंग-रूप तथा चाल-ढाल बहुत ही सुहावनी थी। घोड़े बहुत ही चञ्चल थे; इससे उन्हें सम्हालकर खड़ा रखना सवारोंके लिये कठिन होगया था।

चञ्चलकुमारीने सवेरा होते ही स्नान आदि समाप्तकर जेवर पहने। निर्म्मलने जेवर पहनाये। चञ्चलकुमारीने कहा,—"सखी! मुझे अच्छी तरह जेवर पहनाओ; मैं चितापर जलनेजा रही हूं।" निर्म्मलने दृढ़तासे आंसुओंको रोककर कहा,—"तुम उदयपुरीकी महारानी बनने जाती हो; इसीलिये मैं जेवर पहना रही हूं" कुमारी-ने कहा,—"जब मरना ही है, तब राजकन्याकी तरह जेवरोंसे भूषित होकर मरना ही ठीक है। सौन्दर्य्यसे क्या राज्यकी तुलना हो सकती है?" निर्म्मल गहना पहना रोने लगी। कुमारी और निर्म्मल; दोनों खूब रोईं।

अन्तमें कुमारीने कहा, "शायद अब तुमसे फिर मुलाकात न होगी! बनके वृक्ष जहां उपजते हैं, वहीं सूखते हैं। ईश्वरने क्यों मुझे रूपनगरकी राजकुमारी बनाया? यदि बनाया ही था, तो क्यों उसने मुझे रूपनगरमें रहनेका अधिकार न दिया?"

निर्म्मल। तुम चाहे कहीं क्यों न चली जाओ; पर मैं अवश्य वहां तुमसे मिलूंगी। जबतक मैं तुमसे न मिलूंगी; तबतक तुम्हारी मृत्यु न होगी। तुम्हें देखे बिना मैं भी मर न सकूंगी।

चञ्चल। मैं दिल्ली पहुंचनेसे पहले ही मरूंगी!

निर्म्मल। तब दिल्ली पहुंचनेसे पहले ही मैं तुमसे मिलूंगी भी।

चञ्चल। तुम कैसे मिलोगी?

निर्म्मलसे कुछ कहा न गया, उसकी आंखोंसे आंसू टपकने लगे।

कुमारी जेवर आदि पहन मन्दिरमें गई। महादेवजीको प्रणाम कर बोली,—"भगवन्! मैं मौतकी बाट जोह रही हूं! पर बताइये तो सही, कि मेरी जानके आप इतने भूखे क्यों हैं? क्या मेरा बोझ आपसे सम्हाला नहीं जाता? यदि मेरी जान हीके भूखे थे, तो क्यों मुझे राजाके घर जन्म लेनेका सुअवसर दिया?"

महादेवजीका पूजनकर कुमारी मातासे मिलने गई। माताको प्रणामकर कुमारी रोने लगी। पिताजीको प्रणाम करते समय भी कुमारीकी आंखोंसे आंसू टपके। सहेलियोंसे विदा होकर कुमारी दिल्ली जानेके लिये तैयार हुई। सहेलियोंमें किसीको जेवर, किसी को कपड़े-लत्ते तथा किसीको खिलौने देकर उसने सन्तुष्ट किया। किसीसे कहा,—"क्यों रोती हो? मैं आऊंगी।" किसीसे कहा,—"रोओ मत; देखती नहीं, कि मैं भारतेश्वरी होने आ-रही हूं।"

किसीसे कहा—"रोओ मत; रोनेसे यदि कुछ होता, तोमैं रोकर रूपनगरका पहाड़तक बहा देती।"

सबसे विदा होकर कुमारी पालकीमें जा बैठी । एक हजार सवार पालकीके सामने कतार बांधकर खड़े हुए। एक हजार पालकीके पीछे खड़े किये गये। पालकी सोनेसे मढ़ी हुई थी। सुनहले परदोंपर मोतियोंकी झालरें लटकी हुई थीं। चोबदार, नकीब, लौंडियां प्रभृति पालकीके साथ थे। चञ्चलकुमारीके विदा होते ही शङ्ख आदि बजने लगे; फूल-पत्तोंकी वृष्टि होने लगी; कुमारी-की सवारी किलेसे बाहर आई।

सवार प्रातःकालकी भीनी तथा ठण्डी हवासे प्रफुल्लित होकर तान अलापने लगे। जो सिपाही पालकीके साथ थे, उनमें एकने गाया,—

> अरम भरमसे प्यारी, सुमिरत वंशीधारी।
> भरत लोचनसे बारी, तुम समझो गोपकुमारी।
> आगे बैठे कृष्णमुरारी, जोहत बाट तुम्हारी॥

राजकुमारी यह गाना सुनकर मुस्कराई। सोचने लगी,—"यदि सवारका गाना सच होता, तो कुल काम बन जाता।" कुमारी उस समय महाराणा राजसिंहको याद कर रही थी। कुमारी क्या जाने, कि महाराणाका नौकर माणिकलाल ही यह गीत गा रहा है तथा वही उसकी पालकीके साथ साथ घोड़ा दौड़ाता हुआ चला आ रहा है।

दूसरा परिच्छेद।

निर्मल भी चली।

कुमारीके चले जानेपर निर्मल बहुत घबराई। दो हजार सिपाहियोंकी कतार तथा कुमारीकी सजी हुई पालकीको याद

निर्म्मलको सताने लगी और उसकी आंखोंसे आंसुओंकी धार बंध गई। हजारों सखियोंके होते हुए भी निर्म्मल कुमारीकी यादमें बेचैन हो गई। अब कुछ बन न पड़ा, तब वह अटारीपर चढ़कर मुगल-फौजकी शोभा तथा कुमारीकी सवारी देखने लगी। फौजकी कतार दूरसे सूर्य्यकी तरह पहाड़पर चढ़ती हुई मालूम होती थी। निर्म्मल-की टकटकी बंध गई। दुःख तथा कष्टसे उसकी आंखोंके आगे अन्धकार छा गया। आंखोंमें आंसू भर आये। अन्तमें निर्म्मल अपने मनमें कुछ ठान अटारीसे नीचे उतरी। जेवर उतारकर न मालूम कहां छिपा दिये तथा सन्दूक खोलकर कुछ धन लिया। फाटकपर जो सिपाही पहरा दे रहा था, उसे एक नौकरकी सहायतासे कुछ अर्थ देकर निर्म्मल उसी पहाड़की ओर चली, जिधर कुमारीकी सवारी गई थी।

तीसरा परिच्छेद।

रणपण्डित मुबारक।

मुगलोंकी फौज कभी तो पहाड़के उच्च शिखरपर चढ़ जाती थी; कभी जमीनकी शोभा देखनेके लिये उतर आती थी। सिपाही आपस-में हंसी करते हुए आगे बढ़ रहे थे। उस राहकी दोनो ओर पहाड़ था, जहां माणिकलालसे महाराणाकी बातचीत हुई थी तथा जहांसे माणिकलाल रूपनगरकी ओर रवाना हुआ था। अब मुगलोंकी फौज वहीं जा पहुंची। घोड़ोंकी टापोंकी आवाजसे पहाड़ गूंज उठा। वहांकी शोभा देख सिपाही मुग्ध होगये।

किसीने ईश्वरकी महिमाकी प्रशंसा की, कोई प्यारीकी यादमें तान अलापने लगा। जिन पक्षी-पखेरुओंने वहां घोंसला बनाया था, वह घोंसला छोड़ उड़ गये। यह राह खैबर या बोला-नपासकी भांति थी। जब सवारोंकी कतार इस राहके भीतर घुस गई, तब धमाकेकी आवाज आई। जिधरसे आवाज आई, उधरके सवार तितर-बितर होगये। सवार घबराये, जब कुछ शान्त हुए, तो मालूम हुआ, कि पहाड़की चोटीसे किसीने एक भारी पत्थर सेनाके बीच गिरा दिया है, जिससे एक सिपाही मरा तथा दूसरेको कुछ चोट लगी है।

पत्थर गिरते ही सवार तितर-बितर हो भाग निकले। अब खूब पत्थर गिरने लगे अर्थात् पत्थरकी वर्षा होने लगी, तब मुगलोंको अल्लाह ही याद आने लगे। घोड़ों तथा सिपाहियोंके मरनेपर तङ्ग रास्ता बिलकुल बन्द हो गया। सवारोंको जब वहांसे भागनेकी कोई राह दिखाई न पड़ी, तब वह एक दूसरेको ढकेलकर भागनेकी चेष्टा करने लगे। जब इससे भी काम न चला, तब सिपाही एक दूसरे-पर तलवार झाड़ने लगे। कहारोंमें खूब हलचल मची।

माणिकलालने कहारोंसे कहा,—"बड़ी सावधानीसे बाईं ओर चलो।" जहां पालकी तथा माणिकलाल थे, पहले-पहल वहीं पत्थर गिरा। कहार बेचारे कैसे आगे बढ़ते; क्योंकि सवार जान बचानेके लिये घोड़ा उन्हींपर दौड़ानेकी चेष्टा कर रहे थे। शायद पाठकों को याद होगा, कि इस राहके सिवा यहां और एक राह थी। यह राह वहींसे थी, जहां इस समय पालकी पहुंची थी। यह राह इतनी तङ्ग थी, कि केवल एक सवार उस राहसे जा सकता था। राजसिंहने पहलेसे ही यह व्यवस्था की थी, कि ज्यों ही उस राहके किनारे पालकी पहुंचे, त्यों ही राजपूत पहाड़की चोटीसे पत्थर लुढ़-काना शुरू करें। चतुर माणिकलालने कहारोंको इस तङ्ग राहसे

पालकी ले चलनेका हुक्म दिया। मारे डरके कहारोंका भगवा ढोला हो गया था ; माणिकलालका हुक्म पाते ही उनका उस राहकी ओर जाना ही था, कि एक भारी पत्थर लुढ़कता हुआ राहपर आ पड़ा। अब अन्यान्य सवारोंका उस ओर जाना न केवल कठिन वरं असम्भव हो गया। माणिकलाल राजकुमारीकी पालकी सहित फौजसे अलग हो गया।

सेनापति हसनअलीखां मनसबदार फौजके पीछे थे। पहाड़के किनारे खड़े हो वह सिपाहियोंको उस तङ्ग राहमें जानेका हुक्म दे रहे थे। कुल फौज आगे बढ़नेपर आप भी पहाड़का सौन्दर्य्य देखते हुए आगे बढ़े। दो-चार कदम आगे बढ़ देखते क्या हैं, कि सवार तितर-बितर हो भागनेकी चेष्टा कर रहे हैं। कारण पूछनेपर कोई सवार ठीक बता न सका। जब कुछ पता न लगा, तब स्वयं बिगड़-कर सवारोंको भला-बुरा कहते हुए कारण जाननेके लिये आगे बढ़े।

परन्तु आफत आ पड़नेपर सिपाही कब ठहरते हैं ; वह जान बचानेकी चेष्टा करने लगते हैं। हम पहले ही कह चुके हैं, कि दक्षिणकी ओरका पहाड़ बहुत ही ऊंचा था तथा उसपर चढ़ना कठिन था। उसकी चोटी राहपर लटकती हुई दिखाई देती थी। महाराणाके साथियोंमें पचास राजपूत मुश्किलसे उस पहाड़पर चढ़ गये; अपने आगे पत्थरोंका ढेर लगा बैठ गये और मुगलोंकी बाट जोहने लगे। पहली बार पचास सवारोंको हताहत होना पड़ा; परन्तु किसी को मालूम न हुआ, कि कौन पत्थर लुढ़का रहा है। यदि मालूम भी हो जाता, तो उनको बन्दूक या तोपका निशाना बनाना कठिन था। जब कुछ न बन पड़ा, तब मुगलोंने भागना ही निश्चय कर लिया। जो हजार सवार पालकीके सामने थे, उनमें अधिक हताहत हुए, बचे-खुचोंने भागकर जान बचानेकी चेष्टा की।

पचास राजपूत दक्षिण ओरके पहाड़की ऊंची चोटीसे पत्थर

लुढ़का रहे थे; पचास सिपाही राजसिंहके साथ बाईं ओरके पर्व्वतकी ऊंची चोटीपर छिपे हुए चुपचाप दबके बैठे थे; किन्तु अब उनके कार्य्य करनेका समय आया। जहां पत्थर गिरनेसे बड़ी आफत थी, वहीं मुबारक था। उसने पहले सुश्रृङ्खलतासे पार्श्व-स्थ पथसे निकलनेकी चेष्टा की; किन्तु एक बहुत छोटी सुरङ्ग-में कुमारीकी पालकी जाते ही, उस सुरङ्गका मुहाना ऊपरसे लुढ़ककर आये हुए एक पत्थरसे बन्द हो गया। मुबारकने देखा, कि पालकीके साथ एक सिपाही भी गया है। यह सब सोचने-पर मुबारकके मनमें सन्देह हुआ, कि हो न हो, किसी दुरात्माने कुमारीको हरनेके लिये ही यह उद्योग किया है। तुरत उसने निक-टस्थ सिपाहियोंसे कहा,—"प्राण जाये, तो जाये; किन्तु सौ सवार पालकीका अवश्य पीछा करो। घोड़े छोड़ दो; पैदल इस पत्थरको लांघ चलो; चलो मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं।" इतना कहकर मुबारक घोड़े से कूदा और उस पत्थरपर चढ़ एक तङ्ग गलीमें कूद पड़ा। सौ सवार भी उसके पीछे पीछे चले।

राजसिंह पहाड़की चोटीसे कुल हाल देख रहे थे। जब-तक मुगल पत्थर डांककर तङ्ग गलीमें उतर रहे थे, तबतक राजसिंह छिपे बैठे रहे; किन्तु ज्यों ही कुल मुगल-सिपाही उस तङ्ग गलीमें आये, त्यों ही पचास राजपूत घोड़ेपर सवार हो "हर-हर, बम-बम" कहते हुए मुगलोंपर टूट पड़े। मुगल तितर-बितर हो भाग निकले। बहुतोंको जान देना पड़ी। बहुतसे मुगल सिपाही घोड़ोंके नीचे दब-कर मर गये। बचे-बचाये मुबारकके साथ भागे। राजपूतोंने उनका पीछा न किया। मुगल जिस राहसे तङ्ग गलीमें घुसे थे, उसी राहसे जान लेकर भागे।

मुगलोंके साथ माणिकलाल भी बाहर आया तथा एक मृत सवारके घोड़ेपर चढ़ भीड़में गायब हो गया।

उधर होसे मुगल तङ्ग राहमें घुसे थे, जिधरसे माणिकलाल भागा था। जिसने उसे भागते देखा, उसने खयाल किया, कि वह जान लेकर भाग रहा है। माणिकलाल घोड़ा दौड़ाता हुआ रूपनगरकी ओर चला।

मुबारक फिर पत्थर लांघकर लौट आया। आते ही उसने आज्ञा दी,—"बहादुरो! इस पहाड़पर चढ़ना मुश्किल नहीं। सब लोग घोड़ों सहित पहाड़पर चढ़ो।" मुबारककी आज्ञा सुनते ही 'दीन, दीन' करते हुए पांच सौ मुगल-सवार घोड़ों सहित बाईं ओरके पहाड़-पर चढ़ने लगे। मुबारक इस फौजका अधिनायक है। मुगलोंके साथ दो तोपें भी थीं। एक वह बड़े श्रमसे पहाड़पर चढ़ाने लगे; दूसरी तोप मुगलोंने हाथियोंके सहारे उस पत्थरपर उठाकर रखी, जिसने सुरङ्गका दरवाजा बन्द कर रखा था।

चौथा परिच्छेद।

चञ्चलकुमारीको जय।

फिर क्या था; 'अली, अली' कहते हुए पांच सौ सवार यमकी भांति पहाड़पर चढ़ने लगे। पहले ही कह चुके हैं, कि पहाड़ बहुत ऊंचा न था; इससे शिखरपर चढ़नेमें देर न लगी। वहां पहुंच देखा गया, कि वहां न आदमी हैं न आदमजात। जिस तङ्ग राह-से घुसनेपर राजपूतोंने मुगलोंको कुन्दी की थी, मुबारकने निश्चय कर लिया, कि डाकू उसी राह गये हैं। मुबारक उन्हें डाकू समझता था। मुबारकने समझा, कि गलीका दूसरा मुंह रोकनेसे डाकुओंका

सर्व्वनाश सहज ही हो सकेगा। यह सोचकर उस सुरङ्गके किनारे-किनारे मुबारक फौजको लिये हुए आगे बढ़ा। हसनअली इस तङ्ग राहके दूसरे मुहानेपर फौज जमाये बैठे हुए थे। थोड़ी दूर आगे बढ़ मुगलोंने देखा, कि राहकी चौड़ाई बढ़ती जाती है। मुबारकने पहाड़के किनारे जाकर झांका; देखता क्या है, कि रत्नोंसे सने हुए केवल चालीस राजपूत पालकीके साथ-साथ जा रहे हैं। मुबारक समझ गया, कि राजपूतोंको मालूम है, कि इस राहका मुंह किधर है। मुबारकने मन ही मन निश्चय कर लिया, कि यदि मैं इनका पीछा करूं तो मैं भी राहके मुंहपर पहुंच जाऊंगा। ऐसा करनेपर इस राहका भेद खुल जायेगा। ऐसे हजारों चिन्ह मौजूद हैं, कि राजपूत पहाड़के शिखरसे उतरकर उस राहमें गये हैं। आगे बढ़कर देखा, कि पहाड़ ढालुआ है। मुबारक राजपूतोंका पीछा करने लगा। कुछ दूर चलकर राहके मुंहपर आया तथा फौजको एकत्र-कर राजपूतोंकी बाट जोहने लगा। तोपको राहके मुंहपर स्थापित-कर राजपूतोंका उपहास करनेके लिये उसने तोप दागी। राजपूत तोपकी आवाज सुन होशमें आये और ठहर गये। मुबारककी तोपकी आवाज सुन हसनअलीने भी, जो राहका दूसरा मुंह घेरे हुए थे, तोप दागी। राजपूत राहकी दोनो ओरसे तोपकी ध्वनि सुन चौंके; क्योंकि उनके पास तोप न थी।

अब राजसिंहने देखा, कि बचनेका कोई उपाय नहीं। राजपूतोंसे बीसगुने सिपाही राहके दोनो मुहानोंको घेरे खड़े हैं; राजपूतोंके लिये केवल यमपुरका दरवाजा खुला है। महाराणाने मरना निश्चयकर तथा साथियोंको एकत्रकर कहा,—"आज मैं आप सब लोगोंसे शुद्धान्तःकरणसे क्षमा मांगता हूं। मेरी ही गलतीसे तुमपर यह आफत आई है। यदि मैं पहाड़के शिखरसे उतरनेकी आज्ञा न देता, तो मुगल हमारा कुछ कर न सकते; अब इस गलीके दोनों

मुहानोंपर मुगलोंकी फौज खड़ी है ; दोनों मुखोंपर तोपें लगी हैं। अब जान बचाना कठिन है। राजपूत मौतसे बिलकुल नहीं डरते। जो राजपूत कमसे कम दो मुगलोंको मारकर जान न देगा, वह राजपूत कहलानेके योग्य ही नहीं। भाइयो ! घोड़ेसे उतर पड़ो। तलवारको म्यानसे निकालकर 'हर-हर, महादेव' कहते हुए दुश्मनों पर टूट पड़ो ; जो होना होगा, होगा।"

राजपूत म्यानसे तलवार निकालकर घोड़ेसे कूद पड़े। महाराणाने सबको कतार बांध खड़े होनेकी आज्ञा दी। स्वयं तलवार लेकर सबके सामने जा खड़े हुए। स्वयं आगे बढ़े तथा औरोंको आगे बढ़नेका हुक्म दिया। मृत्युको सामने देख महाराणा बहुत ही प्रफुल्लित हुए।

महाराणाका दो-चार पग आगे बढ़ना ही था, कि राजपूतगण पर्व्वत कम्पित करते हुए चिल्लाये,—"माताजीकी जय!" "कालीमाई-की जय" ! "महाराणाकी जय !"

इस ध्वनिको सुन महाराणाने हर्षित हो मुंह फेर उधर देखा। देखते ही उनकी टकटकी बंध गई। उन्होंने देखा, कि राहके दोनों किनारे राजपूत वीर कतार बांधे खड़े हैं और बीचमें जादूकी पुतली-की भांति एक मृगनयनी मुस्करा रही है। ऐसा मालूम होता था, कि या तो स्वयं कोई देवी स्त्रीका रूप धर राजपूतोंको बचाने आई हैं और नहीं तो ईश्वरने किसी स्त्रीको प्रसन्न होकर देवीकी खूबसूरती प्रदान की है। राजपूत समझे, कि चित्तौरकी महारानी भगवती राजपूतोंकी जान बचानेके लिये स्वयं आ खड़ी हुई हैं ; इसीलिये वह "माताजीकी जय" कह कर चिल्लाये थे।

राजसिंहको मालूम हो गया, कि यह कोई साधारण स्त्री नहीं ; इसके बाद उन्होंने सिपाहियोंसे पूछा,—"देखो, वह पालकी कहां है ?"

एक राजपूतने कहा,—"पालकी इधर है।"

महाराणाने पूछा—"क्या पालकी खाली है?"

सिपाहीने कहा,—"जी हां,! कुमारी आपके सामने खड़ी हैं।"

राजकुमारीने महाराणाको प्रणाम किया। महाराणाने पूछा,—"राजकुमारी! तुम पालकीसे क्यों उतर आईं?"

राजकुमारीने कहा,—"मैं आपको प्रणाम करने आई हूं। प्रणाम कर चुकी; अब एक विनय है। मुझमें लज्जा कुछ कम है, इसलिये मुझे क्षमा कीजियेगा। आशा है, कि आप मुझे निराश न करेंगे।"

चञ्चलने हाथ जोड़कर दुःखित स्वरसे यह बात कही। महाराणाने कहा,—"तुम्हारे ही लिये मैं यहां आया हूं, जो चाहो, कह सकती हो।"

चञ्चलने फिर हाथ जोड़कर कहा;—"मेरी समझ बहुत कच्ची है; मैं नादान हूं; इसीलिये मैंने आपको पत्र लिखकर बुलवाया है; मैं मुगल-बादशाहके धन-दौलतकी बात सुन बहुत प्रसन्न हुई हूं। आप मुझे दिल्ली जानेकी आज्ञा दीजिये।"

राजसिंह विस्मित तथा सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा,—"दिल्ली जा सकती हो; किन्तु इस समय मैं तुम्हें दिल्ली जानेकी अनुमति दे नहीं सकता। यदि इस समय तुम्हें अनुमति दूं, तो मुगल समझेंगे, कि मैंने भयभीत होकर तुम्हें दिल्ली जानेकी अनुमति दी है। युद्ध समाप्त होनेपर जहां इच्छा हो, जाना। मैं तुम्हारी इच्छाको जानता हूं। जबतक मैं जीवित रहूंगा, तबतक तुम्हें दिल्ली जाने न दूंगा। (राजपूतोंसे) जवानो! चलो, मुगलोंपर टूट पड़ें।"

यह सुन दहने हाथकी अंगूठी दिखाती हुई चञ्चल बोली,—"इसमें विष है; यदि आप मुझे दिल्ली न जाने देंगे, तो मैं विष खा लूंगी।"

राजसिंहने हंसते हुए कहा,—"मैं जानता हूं, राजकुमारी ! तुम्हारी प्रशंसा हो ही नहीं सकती ; किन्तु तुमने जो सोचा है, वह न होगा। आज राजपूत जान बचानेकी चेष्टा न करेंगे । आज वह जान देनेपर तय्यार हुए हैं । यदि राजपूत भागें, तो उनके नाम-पर बट्टा लगेगा। जबतक मैं युद्धमें प्राण न दे लूं, तबतक तुम्हें नजरबन्द रहना पड़ेगा। मेरे मरनेपर तुम्हारी जिधर इच्छा हो, चली जाना ।"

चञ्चलकुमारी मुस्कराती हुई प्यार-भरी निगाहोंसे महाराणाकी ओर देख मन ही मन कहने लगी,—"वीरवर ! आजसे मैंने तुम्हारे चरणोंका आश्रय लिया। यदि तुम्हारा पैर पूजनेका सुअवसर न मिला, तो मैं इस पृथिवीसे विदा हो जाऊंगी।" इसके बाद महाराणासे बोली,—"महाराणा ! जिसे दिल्लीका बादशाह बेगम बनाना चाहता है, भला किसमें यह ताब है, कि वह उसे रोके ; मैं मुगलोंके पास जाती हूं । देखूं कौन मुझे रोकता है ?"

इतना कहकर कुमारी मृदु-मन्द गतिसे आगे बढ़ी । किसमें यह ताकत थी, कि उसे बाधा दे ? मुस्कराती हुई कुमारी गुफाके मुहानेकी ओर चली ।

चञ्चलकुमारी अकेली पांच हजार मुगलोंके सामने जा खड़ी हुई। जहां तोप लगी हुई थी, कुमारी वहां जा खड़ी होनेसे बिलकुल न झिचकी। मुगलोंने समझा, कि पहाड़की चोटीसे कोई परी उतर आई है !

चञ्चलकुमारीने मुगलोंको पुकार कहा,-"तुम्हारा सेनापति कौन है"? मुबारक स्वयं रास्तेके मुहानेपर खड़ा था, उसने कहा,—"फौज मुझ खाकसारके अधीन है ; आप कौन हैं ?"

कुमारीने कहा,—"मैं सामान्य स्त्री हूं। आपसे कुछ कहना है। यदि मेरे पास आयें तो, मैं कहूं ।"

मुबारकने कहा,—"जरा और अलग चलिये ।" मुबारक चञ्चल-कुमारीके साथ तङ्ग गलीमें थोड़ी दूर गया ।

चञ्चलकुमारीने मुबारकसे कहा,—"मैं रूपनगरकी राजकुमारी हूं । क्या आप कह सकते हैं, कि बादशाहने मेरे साथ विवाह करनेकी इच्छासे मुझे दिल्ली बुला भेजा है ?"

मुबारक,—"आपको देखनेसे तो यही विश्वास होता है ?"

चञ्चल । मैं मुगलसे व्याह करना नहीं चाहती ; क्योंकि मुगलसे व्याह करनेसे मैं बेधर्म्म हो जाऊंगी ; किन्तु मेरे पितामें यह शक्ति नहीं, कि वह आपका सामना कर सकें ; इसीलिये उन्होंने मुझे आपके साथ भेज दिया । जब उनकी किसी तरहकी आशा न रही, तब मैंने राणा राजसिंहके पास खबर भेजी । न मालूम क्यों महाराणा केवल पचास सिपाही लेकर मेरा उद्धार करने आये हैं ? उनका बल तो आप देख ही चुके हैं ।

मुबारकने विस्मित होकर कहा,—"किसप्रकार और कैसे पचास राजपूतोंने इतने मुगलोंकी जान ली !"

चञ्चल । आश्चर्य्य क्या है ? सुना है, कि हलदीघाटमें भी ऐसा ही हुआ था ।

मुबारक । अब मैं समझ गया, कि आप अपने सुखको परित्याग-कर राजपूतोंको बचाना चाहती हैं । क्या उनकी भी यही इच्छा है ?

चञ्चल । यह क्या सम्भव है ? मेरे चलनेकी तय्यारी करनेपर भी वह युद्धसे मुंह न मोड़ेंगे । मेरा यह अनुरोध है, कि उनकी जान न जाये ।

मुबारक । मैं उन्हें क्षमा कर सकता हूं ; पर मैं उन्हें कैद जरूर करूंगा ।

चञ्चल । आप उनकी जान ले सकेंगे ; पर उन्हें कैद कर न सकेंगे । वह सब मरने के लिये प्रस्तुत हैं और मरेंगे ।

मुबारक । मैं भी यही विश्वास करता हूं । क्या आप दिल्ली जाना चाहती हैं ?

चञ्चल । इस समय आपके साथ जाना ही निश्चय किया है; किन्तु मैं कह नहीं सकती, कि मैं दिल्लीं पहुंच सकूंगी या नहीं ।

मुबारक । क्यों ?

चञ्चल । आपलोग युद्ध कर मारना जानते हैं। हम स्त्रियां भी मरना जानती हैं ।

मुबारक । हमारे बहुत शत्रु हैं ; इससे हमें जान देना पड़ती है ; परन्तु दुनियामें क्या कोई आपका भी शत्रु है ?

चञ्चल । मैं खुद अपनी शत्रु हूं ।

मुबारक । हमारे शत्रुओंके पास भांति-भांतिके अस्त्र-शस्त्र हैं—आपके पास क्या है ?

चञ्चल । विष ।

मुबारक । कहां है ?

यह कह मुबारकने चञ्चलकुमारीकी ओर देखा । यदि और कोई होता, तो शायद कह देता, कि आपके पास यदि कहीं विष है, तो वह आपकी आंखोंमें है । परन्तु मुबारककी चालचलन बहुत अच्छी थी तथा वह मनुष्य कहलानेके योग्य था । उसने कहा,—"माता ! आप क्यों आत्मघातिनी बनना चाहती हैं ? यदि आप जानेपर राजी न हों, तो हममें यह शक्ति कहां, कि हम आपको ले जा सकें ? यदि खुद बादशाह-सलामत यहां होते, तो वह भी आपपर जबरदस्ती कर न सकते । आप निश्चित रहें ; किन्तु राजपूतोंने बादशाहकी फौजपर चढ़ाई की है ; हम उन्हें क्षमा कर नहीं सकते ।"

चञ्चल । क्षमा करनेके लिये कौन अनुरोध करता है—आप युद्ध कीजिये ।

इसी समय राजपूतों सहित महाराणा वहां आ पहुंचे । कुमारीने

राणा से कहा,—"युद्ध कीजिये ; राजपूत स्त्री मौतसे कभी नहीं डरती ।"

महाराणा यह जानना चाहते थे, कि चञ्चलकुमारी लज्जा-वज्जा को तिलाञ्जलि दे मुगलोंसे क्या कह रही है। राजसिंह चञ्चलकुमारीके पास जा खड़े हुए। चञ्चल उनकी ओर मुंह फेर तथा हाथ जोड़ कर बोली,—"महाराजाधिराज ! आपकी कमरमें जो तलवार लटक रही है, उसे म्यानसे निकाल मुझे दीजिये।"

राजसिंह। राजपूतनीको तुम्हारी ही भांति होना चाहिये।

इतना कह राजसिंहने तलवार म्यानसे निकाल कुमारीको अर्पण किया।

मुबारक मुखारावा। चञ्चलकुमारीकी ओर देखकर उसने महाराणा राजसिंहसे कहा,—"कबसे उदयपुरके वीर युद्धमें स्त्रियोंकी सहायता लेने लगे हैं ?"

राजसिंहकी आंखोंमें खून उतर आया। उन्होंने कहा,—"जबसे मुगल-स्त्रियोंपर अत्याचार करने लगे, तबसे राजपूत स्त्रियोंकी भुजाओंमें बल आ गया है!" सेनाकी तरफ मुंह फेरकर राजसिंहने अपने साथियोंसे कहा,—"राजपूत बात बनाना नहीं जानते ; वृथा समय खोना भी उचित नहीं ; चीटियोंकी तरह मुगलोंको मसल डालो।"

अबतक दोनों ओरके सिपाही चुपचाप खड़े थे। सेनापतिका हुक्म न पाने से कौन युद्ध कर सकता है ? महाराणाका हुक्म पा राजपूत 'माताजीकी जय' कहते हुए आगे बढ़े। मुबारकका हुक्म पा मुगल 'अल्लाहो—अकबर' कहते हुए राजपूतोंपर टूट पड़े ; परन्तु चञ्चलकुमारी नङ्गी तलवार हाथमें लिये हुए देवीकी तरह दोनो फौजोंके बीचमें आ खड़ी हुई।

चञ्चलकुमारीने बीच में खड़े हो कहा,—जबतक मुगल तथा

राजपूत यहांसे चले न जायेंगे, तबतक मैं यहांसे न हटूंगी। जिसकी खुशी हो पहले मुझे मार डाले, पीछे युद्ध करे।

राजसिंहने बिगड़कर कहा,—"कुमारी! बहुत ही अन्याय हो रहा है। क्या आप राजपूतोंके नामपर धब्बा लगाना चाहती हैं? मुगल कहेंगे, कि राजसिंहने स्त्रीकी सहायतासे जान बचाई।"

चञ्चल। महाराज! कौन आपको मरनेसे मना करता है? मैं केवल पहले मरना चाहती हूं। मेरे कारण ही युद्ध हुआ है; इसलिये मुझे जान देनेका सबसे पहले अधिकार है।

चञ्चल एक पग भी पीछे न हटी। मुगलोंने बन्दूक तानी थी; पर वह उसे दाग न सके। मुबारक चञ्चलकी वीरता देख हैरान हो गया। उसने चिल्लाकर कहा,—"मुगल स्त्रियोंसे युद्ध नहीं करते; हम इस स्त्रीसे हार स्वीकार करते हुए युद्ध बन्द करते हैं। आशा है, कि अबके जब महाराणा युद्ध करने आयेंगे, तब स्त्री साथ न लायेंगे—उस समय उनसे बलकी परीक्षा की जायेगी।"

चञ्चलकुमारी मुबारकके लिये सोचने लगी। मुबारक घोड़े-पर चढ़ रहा था, कि कुमारीने उससे कहा,—"जनाब! मुझे क्यों छोड़ जाते हैं? मुझे साथ ले जानेके लिये बादशाहने आपको भेजा था। यदि मुझे आप साथ न ले गये, तो बादशाह आपको क्या कहेंगे?"

मुबारकने कहा,—"बादशाहके भी बादशाह हैं। मैं उनसे सवाल-जवाब कर लूंगा।"

चञ्चल। यह तो परलोककी बात है; किन्तु इस लोककी कहिये?

मुबारक। मैं इस लोकमें किसीसे नहीं डरता। ईश्वर आपको कुशल रखें; मैं चला।

इतना कह कर मुबारक घोड़ेपर सवार हुआ। फौजको लौटने-

का हुक्म दे ही रहा था, कि पीछेसे एक बार ही हजार बन्दूकोंकी आवाज आई। सौसे भी अधिक मुगल-सिपाही मरे। मुबारकने देखा, कि बड़ी आपदा है!

पांचवां परिच्छेद ।

माणिकलालकी चालाकी ।

माणिकलाल पहाड़ी दर्रेसे निकल घोड़ा फेंकता हुआ रूपनगर पहुंचा। रूपनगरके राजाके कुछ ऐसे सिपाही थे, जिन्हें वेतन मिलता न था; जागीर मिली थी। बुलाये जानेपर ढाल, तलवार, लाठी प्रभृति लेकर राजधानीमें आ जाया करते थे। मुगलोंकी फौज आनेपर रूपनगरके राजाने उन्हें बुलवाया था। मुगल समझे, कि यह उनकी खातिरीदारीके लिये बुलाये गये हैं; किन्तु असल बात यह थी, कि यदि मुगल अन्याय करें, तो इनके द्वारा उनकी खबर ली जाये। ज्यों ही राजाके सिपाही रूपनगर आये; त्यों ही राजाने अस्त्रागारसे अस्त्र दे उन्हें सुसज्जित किया। वह अपने साथ घोड़ा लाये थे। मुगल-सिपाहियोंके साथ हंसी-मजाकमें इनके कई दिन अमन-चैनसे व्यतीत हुए। जब मुगलोंकी फौज राजकुमारीको लिवा चली गई, तब उन्होंने भी घर लौट जानेका हुक्म पाया। उन्होंने घोड़े कस, हथियार अस्त्रागारमें देने आये; राजा जिस समय उन्हें एकत्रकर स्नेहपूर्ण वचनसे विदा कर रहे थे, उसी समय माणिकलाल हांफता हुआ पसीनेसे तरबतर वहां आ पहुंचा।

माणिकलाल मुगल-सिपाहियोंकी पोशाक पहने हुए था। एक मुगल-सिपाहीको इस तरह किलेमें आते देख राजा विस्मित हुए। उन्होंने पूछा,—"क्या खबर है?"

माणिकलालने सलामकर कहा,—"महाराज! बड़ी आफत है। पांच हजार डाकुओंने राजकुमारीको घेर लिया है। जनाब हसनअलीखांने मुझे आपके पास भेजा है। मुगल युद्ध कर रहे हैं; पर और सिपाहियोंकी सहायताका प्रयोजन है। आप सहायता कीजिये।" राजाने कहा,—"अच्छा; सौभाग्यसे मेरे सिपाही अभी गये नहीं।" इसके बाद सिपाहियोंसे कहा,—"तुम लोग फिर तय्यार हो जाओ; मेरे साथ लड़ाईमें चलना होगा।"

माणिकलालने हाथ जोड़कर कहा,—"गुस्ताखी माफ हो, तो मैं कुछ अर्ज करूं। यदि हुक्म हो, तो मैं इन सिपाहियोंको ले आगे बढ़ूं। आप कुछ और सिपाहियोंको एकत्रकर पीछे आइये; क्योंकि डाकुओंकी संख्या पांच हजारसे कम नहीं।"

राजा माणिकलालके कहनेपर राजी हुए। राजाके सिपाहियों-को ले माणिकलाल आगे बढ़ा। राजा सिपाही एकत्र करनेकी चेष्टा करने लगे। माणिकलालने सिपाहियोंको साथ ले पहाड़ी राह पकड़ी।

राहमें माणिकलालको कुछ लाभ हुआ। राहके किनारे एक वृक्षके सायेमें एक स्त्री लेटी हुई थी, उसे देख माणिकलालने समझा, कि यह बीमार है। सवारोंको देख वह स्त्री उठ बैठी; खड़ी होनेकी चेष्टा करने लगी; पर खड़ी हो न सकी। शायद वह भागना चाहती थी। माणिकलाल उसके पास जा घोड़ेसे उतर पड़ा। देखा, कि स्त्री बहुत ही सुन्दरी है।

माणिकलालने पूछा,—"तुम कौन हो? यहां क्यों पड़ी हो?"

युवतीने कहा,—"आप किसके सिपाही हैं?"

माणिकलालने कहा,—"मैं महाराणा राजसिंहका सेवक हूं।"

युवतीने कहा,—"मैं रूपनगरकी राजकुमारीकी दासी हूं।"

माणिक। यहां इस दशामें क्यों?

युवती। मुगलोंकी फौज कुमारीको दिल्ली ले जा रही है। मेरी भी उनके साथ जाने को इच्छा थी; पर वह साथ ले न गई। इसलिये मैं उनके पीछे-पीछे जा रही हूं।

माणिक। शायद इसीसे थककर बैठ गई हो।

निर्मलने कहा,—"जी हां, चला नहीं जाता; क्या करूं।"

निर्मल दो-तीन कोस चलकर ही थक गई थी, क्योंकि उसे चलनेका अभ्यास न था।

माणिक। अब क्या करोगी?

निर्मल। अब क्या करूंगी? यहीं मरूंगी।

माणिक। छिः मरोगी क्यों? मेरे साथ चलो; मैं राजकुमारीके पास तुम्हें पहुंचा दूंगा।

निर्मल। मुझसे चला नहीं जाता; मैं कैसे चल सकूंगी?

माणिक। क्यों घोड़े पर चलो?

निर्मलने हंसकर कहा,—"घोड़े पर"?

माणिक। घोड़े पर हर्ज क्या है?

निर्मल। मुझे घोड़े पर चढ़ना नहीं आता।

माणिक। मेरे घोड़े पर सवार हो लो, मैं तुम्हें पकड़े रहूंगा।

अबतक निर्मल दिल्लगी कर रही थी; किन्तु माणिकलालकी बात सुन उसने बिगड़कर कहा—"मैं आपके साथ न जाऊंगी। राजकुमारीसे मिलनेकी जरूरत नहीं। मैं यहीं पड़ी रहूंगी।"

माणिकलाल अब उसका पीछा छोड़नेवाला था; क्योंकि वह सुन्दरी थी। फिर उसने पूछा—"क्या तुम्हारा विवाह हो चुका है?"

निर्म्मल बड़ी दिल्लगीबाज थी, उसने मुस्कुराकर कहा,—"नहीं।

माणिक। तुम्हारी जाति क्या है?

निर्म्मल। मैं राजपूतकी बेटी हूं।

माणिक। मैं भी राजपूत हूं, मेरे भी स्त्री नहीं; केवल एक बेटी है। उसकी अवस्था बहुत कम है; उसे एक माकी जरूरत है। तुम उसकी मा हो सकोगी? मुझसे विवाह करोगी; यदि ऐसा कर सको, तो मेरे साथ घोड़ेपर सवार हो चलने में कोई हर्ज नहीं।

निर्म्मल। कसम खाओ।

माणिक। किस बातकी?

निर्म्मल। तलवारकी कसम खाओ, कि मुझसे व्याह करोगे।

माणिकलालने तलवार छूकर यह कसम खाई—"यदि आजके युद्धमें जान बची, तो मैं तुमसे विवाह करूंगा।"

निर्म्मलने कहा,—"तब मैं तुम्हारे घोड़ेपर चढ़ूंगी।"

माणिकने निर्म्मलको घोड़ेपर चढ़ाया। आगे निर्म्मल और पीछे माणिक; दोनो एक ही घोड़ेपर चढ़ चले।

शायद इस 'कोर्टशिप' को पाठक पसन्द न करें; किन्तु क्या करें; ऐसा ही हुआ था। इसमें न तो विरह था और न दुःख। आध घण्टे में दोनो विवाह करनेपर राजी हो गये।

छठां परिच्छेद।

फलभोगी राणा।

युद्धक्षेत्रके निकटवर्ती एक छिपी हुई जगहमें माणिकलालने निर्म्मलको उतारकर कहा, कि जबतक युद्ध न हो जाये, यहां बैठी

रही। निर्म्मल वहां छिपकर बैठ गई। माणिकलालने रूपनगरके सिपाहियोंकी सहायतासे मुबारककी फौजको पीछेसे घेर लिया।

जब माणिकलाल रूपनगरकी ओर रवाना हुआ था, तब उसे यह मालूम न था, कि तङ्ग गलीके मुंहपर मुगल महाराणाको घेर लेंगे ; किन्तु लौटनेके समय उसने सोचा, कि महाराणा तो तङ्ग गलीमें घुस गये थे, कहीं मुगलोंने तङ्ग गलीका मुंह तो बन्द कर न दिया। इसी कारण उसने वहां पहुंचकर मुगलोंको पीछेसे घेर लिया। जब उसने देखा, कि राजपूतोंका सर्व्वनाश होने वाला है, तब उसने रूपनगरकी फौजसे कहा,—"डाकुओंको बन्दूकका निशाना बनाओ।"

सिपाहियोंमें किसी-किसीने कहा,—"यह तो मुसलमान हैं।"

माणिकलालने कहा,—"क्या मुसलमान डाकू या लुटेरे नहीं होते? हिन्दू ही सब अन्याय करते हैं? गोली मारो।"

माणिकलालकी आज्ञा पा सिपाहियोंने बन्दूकें दागीं।

मुबारकने मुंह फेर देखा, कि प्रायः एक हजार सिपाही मुगलोंपर चढ़ आये हैं। मुगल भयभीत होकर भाग निकले। हजार चेष्टा करनेपर भी मुबारक उन्हें भागनेसे रोक न सका। राजपूतोंने 'माताजी की जय' चिल्लाते हुए उनका पीछा किया।

मुगल पहाड़ोंपर चढ़ भागने लगे ; राजपूत उनका पीछा करने लगे। मुबारक मुगलोंको लौटानेके लिये लपका ; किन्तु न मालूम वह कहां गायब हो गया।

इसी समय माणिकलालने महाराणाके पास आ उन्हें प्रणाम किया। महाराणा हैरान थे, कि यह क्या मामला है। माणिकलालको देख उन्होंने कहा,—"माणिकलाल! यह क्या मामला है ; कुछ समझमें नहीं आता। तुम कुछ जानते हो?"

माणिकलालने हंसकर कहा,—"मुगलोंकी अधिकता देखकर

मैं समझा, कि चाहे आप उनसे कैसा ही युद्ध क्यों न करें; आपको हारना पड़ेगा। इसके सिवा आपको तङ्ग गलीमें उतरते देख मैं और भी भयभीत हुआ; क्योंकि यदि मुगलोंने गलीका मुंह घेर लिया, तो आपको जानसे हाथ धोना पड़ेगा। आपको बचानेके लिये मुझे यह जाल रचना पड़ा।"

इतना कहकर माणिकलालने कुल हाल वर्णन किया। महाराणाने आनन्दित हो माणिकलालको गलेसे लगा लिया और कहा,—"माणिकलाल! तुम यथार्थ प्रभुभक्त हो। तुमने जो वीरता दिखाई है; उसका बदला यदि मैं उदयपुर पहुंच सका, तो तुम्हें दूंगा। आज मैं मुसलमानोंको दिखाना चाहता था, कि युद्धके समय राजपूत अपनी जानको कितना तुच्छ समझते हैं।"

माणिकलालने कहा—"महाराज! मुगलोंको उचित शिक्षा देनेके लिये आपके हजारों नौकर मौजूद हैं। राजाओंके लिये यह कार्य्य बहुत तुच्छ है; अब उदयपुर चलना चाहिये। राजधानी परित्यागकर जंगल तथा पहाड़ोंमें घूमना उचित नहीं। कुमारीको साथ ले उदयपुर चले जाइये।"

महाराणाने कहा,—"हमारे कितने ही साथी राजपूत अबतक उधरके पहाड़पर हैं; उन्हें बुला लेना चाहिये।"

माणिकलालने कहा,—"आप आगे बढ़िये; मैं उन्हें साथ ले आगे मिलूंगा।"

महाराणा चञ्चलकुमारीको साथ ले उदयपुरकी ओर रवाना हुए।

सातवां परिच्छेद ।

बुआ ।

महाराणाकी विदाकर माणिकलाल रूपनगरके सिपाहियोंके साथ पहाड़पर चढ़ गया। मुगल तितर-बितर हो भाग गये। माणिकलालने सिपाहियोंसे कहा,—"अब तुम रूपनगर जा सकते हो, डाकू भाग गये हैं।" रूपनगरके सिपाही समझ गये, कि माणिकलालने उन्हें धोखा दिया है। अब उन्होंने सोचा, कि जो होना था, सो तो हो चुका ; अब कुछ माल-असबाव लूट घर चलना चाहिये। मुगलोंसे नोच-खसोट कुछ माल-असबाव ले वह बादशाहकी जय मनाते हुए रूपनगर चले गये। जब युद्धका अन्त हुआ, तब जो राजपूत पहाड़के शिखरपर चढ़कर पत्थर फेंक रहे थे, वह उतर आये। उन्होंने उतरकर देखा, कि महाराणा वहां नहीं। वह समझ गये, कि महाराणा उदयपुरकी ओर गये होंगे। उन्होंने भी उदयपुरकी राह ली। कुछ दूर आगे बढ़नेपर राजसिंहसे उनकी भेंट हुई ; किन्तु माणिकलालका कुछ पता न लगा।

माणिकलाल निर्म्मलके पास गया ; उसे कुछ भोजन करा निकटके गांवसे डोली-कहार बुला लाया। निर्म्मलको डोलीपर चढ़ा, जिधर महाराणा गये थे, उधर न जा दूसरी ओर रवाना हुआ। उसकी इच्छा न थी, कि महाराणा निर्म्मलके साथ उसे देखें।

माणिकलाल निर्म्मलको साथ ले अपनी बुआके मकानपर गया। बुआसे उसने कहा,—"बुआ! मैं एक स्त्री लाया हूं।" इस

स्त्रीको देखकर बुआ कुछ दुःखित हुई। कारण उसने सोचा, कि जो रुपये मुझे मिलनेकी आशा थी, वह अब न मिलेंगे। क्या करे ; दो अशरफी ले चुकी है। लाचार कहना ही पड़ा, कि स्त्री बहुत सुन्दर है। माणिकलालने कहा,—"इस स्त्रीसे मेरा अबतक विवाह नहीं हुआ है।"

बुआने समझा, कि शायद यह कोई वेश्या है ; इससे वह बिगड़कर बोली,—"मेरे मकानमें इसे क्यों लाये ?"

माणिकलालने कहा,—"इसके लिये क्या चिन्ता है। तुम मेरा व्याह इससे करा दो।"

निर्मल बहुत ही लज्जित हुई।

बुआ बहुत ही प्रसन्न हुई ; कारण उसने समझा, कि अब कुछ हाथ लगेगा। उसने कहा,—"मैं अवश्य तुम्हारा विवाह इससे कर दूंगी ; किन्तु खर्च चाहिये।"

शायद पाठक जानते होंगे, कि युद्ध होनेके पीछे लूट हुआ करती है। माणिकलाल आहत तथा निहत मुगलोंसे नोच-खसोट बहुत रुपये लाया था ; कुल रुपये उसने बुआके सामने रख दिये। बुआने पण्डित बुलाकर शुभ मुहूर्त्त स्थिर किया और माणिकलालका विवाह हो गया ; परन्तु बुआको अधिक रुपये खर्च करने न पड़े। बहुत सा धन बुआकी थैली हीमें रह गया। सुना, कि महाराणाने उदयपुर पहुंच माणिकलालको उच्च पद प्रदानकर उसे सम्मानित किया था।

पांचवां खण्ड।

पहला परिच्छेद।

शाहजादियोंसे गरीबजादियां ही भली !

हम लिख चुके हैं, कि पहाड़पर चढ़ते समय मुबारक घोड़े सहित गायब हो गया। उसके गायब होनेका कारण यह था, कि वह जिस राहसे पहाड़पर चढ़ रहा था, उसमें एक पुराना कुंआ था। किसीने अपने या मुसाफिरोंके आरामके लिये यह कुआं खुदवाया था; किन्तु इस समय घास-पात जम जानेसे कुंएंका मुंह बिलकुल ढक गया था। मुबारकको मालूम न हुआ, कि वहां कुंआ है। मुबारक उसमें घोड़े सहित धम्मसे जा गिरा। खैर हुई, कि कुंआ सूखा था। घोड़ा गिरते ही मर गया। मुबारकको चोट तो लगी; पर उसकी जान बच गई। कुंएंसे बाहर आनेका कोई उपाय नहीं रहा; वह सिपाहियोंको पुकारने लगा; किन्तु युद्धके कोलाहलमें किसीने उत्तर न दिया। कुछ देर बाद उसने सुना, कि कोई दूरसे कह रहा है,—"घबराओ नहीं; मैं तुम्हें निकाल लूंगी।" यह आवाज भी उसे झङ्कार जैसी मालूम हुई।

युद्ध हो जानेपर किसी स्त्रीने कुंएंके पास आकर पूछा,—"क्या अबतक जीते हो?"

मुबारकने कहा,—"हां; तुम कौन हो।"

स्त्रीने कहा—"मेरा परिचय क्यों पूछते हो? तुम्हें अधिक चोट तो नहीं लगी है?"

मुबारक। बहुत थोड़ी चोट लगी है।

स्त्री। कपड़ेकी रस्सी बटकर लटकाती हूं ; इसे तुम अच्छी तरह पकड़ लो ; मैं तुम्हें ऊपर खींच लूंगी।

मुबारकने आवाजसे पहचाना, कि यह कोई स्त्री है। उसने कहा,—"तुम्हारी आवाजसे मालूम होता है, कि तुम स्त्री हो ; तुम कौन हो ?"

स्त्रीने कहा,—"मेरी आवाज क्या तुम नहीं पहचानते ?"

मुबारक। हां, अब पहचान लिया ; दरिया ! तू यहां कहां ?"

दरिया। तुम्हारे ही लिये मैं यहां आई हूं। अब मैं चादर ढीलती हूं ; इसे अच्छी तरह पकड़ना !

दरियाने घास-फूस तलवारसे काट रस्सी कुंएमें लटका दी। मुबारकने रस्सी पकड़ ली ; दरियाने एक वृक्षके सहारे बड़ी मुश्किल-से उसे खींच कुंएसे बाहर किया। मुबारक दरियाको देखकर विस्मित हुआ। उसने पूछा,—"यह क्या ? यह वेष कैसा ?"

दरियाने कहा,—"मैं शाही-सवार हूं।"

मुबारक। क्यों ?

दरिया। तुम्हारे ही लिये।

मुबारक। मेरे लिये !

दरिया। हां ; यदि मैं न आती, तो तुम्हारा क्या हाल होता ?

मुबारक। इसीलिये दिल्ली छोड़कर यहां आई है ? क्या इसी-लिये सवार बनी है ? तेरे कपड़ेपर खून कहांसे लगा ? क्या कहीं चोट लगी है ?

दरिया। यह सब तुम्हारे ही लिये किया है। यदि मैं न आती, तो तुम्हें कौन कुंएसे बाहर निकालता ? क्या शाहजादियां मुझसे अधिक प्यार करती हैं ?"

मुबारकने गरदन नीची कर ली। कहा,—"शाहजादियां किसी-को प्यार नहीं करतीं ?

दरियाने कहा,—"हम गरीबिनियां तो अवश्य अपने प्यारेको प्यार करती हैं। ठहरो, मैं तुम्हारे लिये डोली-कहार बुला लाई हूं; घोड़ेपर चढ़नेसे तुम्हें कष्ट होगा।"

जो डोलियां फौजके साथ थीं, मुगलोंको हारते देख कहार उनमें कई डोलियां ले भागे। दरियाने भागते हुए कहारोंको एक डोली सहित रोक रखा था। मुबारकको बिठा वह एक और डोली-कहार खोज लाई। इस डोलीपर वह खुद बैठी।

मुबारकको साथ ले दरिया दिल्लीको ओर रवाना हुई। डोली पर चढ़ते समय मुबारकने दरियाका मुंह चूमकर कहा,—"अब मैं तुम्हें हृदयसे अलग न करूंगा।" एक शहरमें पहुंचकर दरियाने एक हकीमसे मुबारककी चिकित्सा कराई। मुबारक आरोग्य हो गया।

दिल्ली पहुंचकर मुबारक दरियाको अपने मकानमें लेगया। इससे दोनो बहुत सुखी हुए; किन्तु इसका फल बहुत ही खराब हुआ। इस मिलनसे बिगाड़की ऐसी आग भड़की, कि जिससे दरिया, मुबारक, जेबुन्निसा तथा औरङ्गजेब सब जलभुन राख हो गये। यह हाल हम आगे चलकर वर्णन करेंगे। पाठक अब चञ्चलकुमारी-का हाल सुनें।

दूसरा परिच्छेद।

राजसिंह हार गये।

हम पहले ही कह चुके हैं, कि राजसिंह उदयपुर चले गये चञ्चलकुमारीको मुगलोंके पञ्जे से छुड़ानेके लिये ही युद्ध हुआ

था ; इससे महाराणा कुमारीको भी उदयपुर ले गये। वहाँ जाते ही महाराणाने कुमारीको महलमें भेज दिया। दो-चार दिनके बाद महाराणा सोचने लगे, कि कुमारीको उदयपुर रखना चाहिये या रूपनगर भेज देना चाहिये। जबतक वह इसका फैसला न कर सके, तबतक चञ्चलकुमारीसे न मिले।

महाराणाका व्यवहार चञ्चलकुमारीकी समझमें न आया। सोचने लगी, कि महाराणाने अभीतक मुझसे विवाह करनेकी कोई व्यवस्था न की। यदि वह मुझसे विवाह करनेपर राजी न हों, तो मैं उनके महलमें न रहूंगी। तब मैं कहाँ जाऊंगी?

राजसिंह जब कुछ फैसला कर न सके, तब उन्होंने चञ्चलकुमारी-से मिलना निश्चय कर लिया। स्वयं कुमारीके महलमें गये। साथ वह पत्र भी लेते गये, जिसे माणिकलालसे उन्होंने पाया था।

महाराणाके बैठते ही चञ्चलकुमारी शिर झुका एक किनारे खड़ी हो गई। चञ्चलकुमारीकी खूबसूरती देख महाराणा मुग्ध हो गये; किन्तु साथ ही अपनेको सम्हालकर कहा,—"कुमारी अब तुम्हारी क्या इच्छा है? मैं तुम्हारी इच्छा जाननेके लिये ही तुम्हारे पास आया हूं। क्या तुम अपने पिताके घर जाना चाहती हो? यदि जानेकी इच्छा हो, तो कहो मैं तुम्हें सहर्ष रूपनगर भेज दूंगा।"

महाराणाकी बात सुन चञ्चलकुमारीका हृदय टूट गया; वह कुछ जवाब न दे सकी; चुप खड़ी रही।

महाराणाने वह पत्र निकाल कुमारीको दिखाया और कहा,—"यह तुम्हारा पत्र है?"

चञ्चलकुमारीने कहा,—"हाँ मेरा ही पत्र है।"

महाराणा। किन्तु पूरा पत्र एकका लिखा हुआ नहीं। इसमें दो हाथोंके अक्षर हैं। तुमने किस अंशको लिखा है?

चञ्चल। पहला अंश मेरा लिखा है।

महाराणा। तब दूसरा अंश किसी औरने लिखा है?

शायद पाठकोंको याद होगा, कि दूसरे अंशमें विवाहका प्रस्ताव था। चञ्चलकुमारीने कहा,—"मेरे हाथका लिखा नहीं।"

महाराणा राजसिंहने पूछा,—"क्या तुम्हारी सम्मतिसे यह लिखा गया था?"

प्रश्न बहुत ही कठिन था; किन्तु चञ्चलकुमारीने अपने उन्नत स्वभावके अनुसार ही जवाब दिया। कहा,—"महाराज! विवाह करनेके लिये ही क्षत्रिय-नरेश कन्या-हरण कर सकते हैं और किसी कारणसे कन्या-हरण करना महापाप है। मैं कैसे आपको महापाप करनेके लिये अनुरोध करूं!"

महाराणा। मैंने तुम्हें हरण नहीं किया; तुम्हारी जाति और कुलको बचानेके लिये मैंने तुम्हें मुसलमानोंसे छीन लिया है। अब मेरा राजधर्म्म यही है, कि मैं तुम्हें तुम्हारे पिताके पास भेज दूं।

चञ्चलकुमारी महाराणासे बातचीत करनेमें सङ्कोच त्याग चुकी थी, उसने शिर उठाकर कहा,—"महाराज! आप अपना राजधर्म्म जानते होंगे; किन्तु मैं भी अपने धर्म्मको भलीभांति जानती हूं। अब मैं आपके चरणोंमें आत्मसमर्पण कर चुकी हूं; तब मैं आपकी धर्म्मतः महिषी हो चुकी। चाहे आप ग्रहण करें या न करें; पर अब मैं दूसरेसे विवाह कर नहीं सकती। जब मैं आपके चरणोंपर आत्मसमर्पण कर चुकी, तब अवश्य आपके आज्ञानुसार काम करूंगी। यदि आप मुझे रूपनगर जानेकी आज्ञा देंगे, तो मैं अवश्य जाऊंगी। यदि आपकी यही इच्छा थी, तो लड़ाईके मैदानमें जिस समय मैंने आपसे दिल्ली जानेकी आज्ञा मांगी थी, उसी समय आप क्यों राजी न हुए?"

राजसिंह। मैंने तुम्हारी इज्जत बचानेके लिये उस समय तुम्हें दिल्ली जानेसे, रोका था।

चञ्चल। इस समय जब मैंने आपको ग्रहण की है; तब क्या आप मुझे दिल्ली जानेकी आज्ञा देंगे ?

महाराणा। यह भी हो नहीं सकता। तब तुम यहीं रहो।

चञ्चल। मुझे मेहमान होकर रहना पड़ेगा या दासी होकर। रूपनगरकी राजकन्या बिना महिषी हुए यहां रह नहीं सकती।

महाराणा। तुम्हारीजैसी सुन्दरी जिस राजाकी स्त्री हो, वह राजा अपनेको धन्य समझेगा। तुम बहुत ही सुन्दरी हो; इसीलिये मैं तुमसे विवाह करनेमें सङ्कुचित होता हूं। कहते हैं, कि सुन्दरी स्त्री शत्रु के बराबर होती है; जैसे,—

"ऋणकारी पिता शत्रु, माता च व्यभिचारिणी।
भार्य्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुर पण्डितः॥"

चञ्चलकुमारीने मुस्कराकर कहा,—"बालिकाकी चपलता क्षमा कीजियेगा; क्या उदयपुरकी सब महारानियां बदसूरत हैं ?"

राजसिंहने कहा,—"तुमजैसी कोई सुन्दरी मेरे महलमें नहीं।"

चञ्चल। मेरी विनीत प्रार्थना है, कि यह बात महारानियोंसे न कहियेगा। महाराणा राजसिंहको भी किसी-किसीसे भयभीत होना पड़ेगा।

राजसिंह खिलखिलाकर हंसने लगे। चञ्चलकुमारी अबतक खड़ी थी; पर अब एक कुरसीपर बैठ गई। मन ही मन कहा,— "अब मेरे लिये यह महाराणा नहीं; मेरे वर हैं।"

कुरसीपर बैठ चञ्चलकुमारीने कहा,—"महाराजाधिराज! मुझे क्षमा कीजियेगा; मैंने आपसे ज्ञान सीखनेके लिये ही आसन अधिकार किया है। महाराज! मेरी समझमें अबतक नहीं आया, कि रूपवती भार्य्या कैसे शत्रु होती है!"

राजसिंहने कहा,—"मैं यह बात सहज हीमें समझा सकता हूं। रूपवती भार्य्या होनेसे उसके लिये अकसर लड़ाई-झगड़ा हुआ

करता है। मुझसे तुमसे अभी व्याहकी बाततक ते न हुई; किन्तु औरङ्गजेबसे युद्ध छिड़ गया। किन्तु शायद हमारे वंशकी महारानी पद्मिनीकी बात तुमने सुनी न होगी।

चञ्चल। मैं इन बातोंपर विश्वास नहीं करती। सुन्दरी स्त्री न रहनेपर क्या राजाओंको लड़ाई-झगड़ा करना नहीं पड़ता? मेरी-ऐसी नाचीजके लिये क्यों महाराज इसका उल्लेख करते हैं। चाहे मैं सुन्दरी हूं या बदसूरत; पर युद्ध तो शुरू हो हो गया है।

राजसिंह। और भी एक बात है। सुन्दरी स्त्रीको पुरुष जानसे भी अधिक चाहते हैं; इससे राजकार्य्यमें रुकावट होनेकी सम्भावना होती है।

चञ्चल। राजा-महाराजा हजारों स्त्रियोंसे घिरे रहनेपर भी राजकार्य्य करते हैं। न मालूम मुझजैसी नाचीजके लिये क्यों महाराणाके राजकार्य्यमें रुकावट होने लगी।

राजसिंह। सब ठीक है; किन्तु कहते हैं, कि "वृद्धस्य तरुणी विषम्।"

चञ्चल। क्या महाराणा बूढ़े हैं?

राजसिंह। युवक तो नहीं हूं।

चञ्चल। महाराज बलवान तथा वीर हैं। राजपूतकी कन्या ऐसे वीरोंको ही युवा समझती हैं। दुर्ब्बल युवकको गिनती बूढ़ोंमें ही होती है।

राजसिंह। मैं खूबसूरत नहीं हूं।

चञ्चल। कीर्त्ति ही राजाओंकी खूबसूरती है।

राजसिंह। खूबसूरत तथा बलवान युवकोंकी संख्या राजपूतोंमें कम नहीं।

चञ्चल। मैं तो आपके चरणोंमें आत्मसमर्पण कर चुकी। यदि अब दूसरेसे विवाह हुआ, तो मुझे व्यभिचारिणी बनना पड़ेगा।

मैं लज्जा परित्यागकर आपसे बात कर रही हूं ; परन्तु महाराज ! सोचिये, कि जब राजा दुष्यन्तने शकुन्तलाको परित्याग किया, तब लाचार होकर शकुन्तलाको लज्जा त्यागना पड़ा था । मेरी भी आज वही दशा है । यदि आपने मुझे परित्याग किया, तो मैं महलकी खाईमें डूबकर मर जाऊंगी । राजसिंहने युक्तियोंसे हारकर कहा,—"तुम मेरी स्त्री होनेके योग्य हो ; परन्तु आफत आनेपर तुमने मुझसे विवाह करना चाहा था ; इससे यह जाननेके लिये मैं तुम्हारे पास आया था, कि यदि अब भी तुम मुझसे विवाह करना चाहती हो या नहीं ? अब मैं समझ गया, कि तुम मुझसे विवाह करना चाहती हो । मैं भी तुमसे विवाह करूंगा ; किन्तु विवाह होनेसे पहले तुम्हारे पितासे आज्ञा मांगूंगा । क्या वह अनुमति देंगे ? उनसे अनुमति बिना लिये मैं विवाह करना नहीं चाहता । तुम्हारे पिताका राज्य छोटा तथा उनके सिपाही कम अवश्य हैं ; किन्तु सब जानते हैं, कि विक्रम सोलाङ्की वीर तथा प्रसिद्ध सेना-पति हैं । मुगलोंसे युद्धकी पूरी पूरी सम्भावना है । यदि मुगलोंसे युद्ध हुआ, तो तुम्हारे पिताकी सहायतासे हमारा बड़ा लाभ होगा । यदि उनसे अनुमति न ले मैंने तुमसे विवाह किया, तो वह हमारी सहायता न करेंगे; मैं उनसे शत्रुता करना नहीं चाहता; इसीलिये मैं पत्र लिखकर उनकी सम्मति लेना चाहता हूं । क्या वह सम्मति देंगे ?"

चञ्चल । उनके सम्मति न देनेका तो कोई कारण दिखाई नहीं देता । मेरी भी यह इच्छा है, कि पिता-माताका आशीर्वाद ले आपके चरणोंकी सेवा करूं । किसीको रूपनगर भेजनेका प्रबन्ध कीजिये ।

महाराणा राजसिंहने एक विनीत पत्र लिख राजा विक्रम सोलाङ्कीके पास दूत द्वारा भेज दिया । चञ्चलकुमारीने भी अपनी माताको पत्र लिख आशीर्वादकी प्रार्थना की ।

तीसरा परिच्छेद।

युद्धका प्रयोजन।

रूपनगरके राजाने बहुत शीघ्र पत्रोत्तर दिया। उत्तर बड़ा कड़वा था। उसका आशय यह है,—"महाराणा! आप राजपूतोंमें सर्व्व प्रधान हैं; राजपूतानेके मुकटस्वरूप हैं; किन्तु इस समय आप अपने मुखपर स्याही फेरनेको तय्यार हैं। आप जबरदस्ती मेरा अपमानकर मेरी कन्या हर ले गये। मेरी कन्या पृथिवीश्वरी होती; किन्तु आपने उसमें बाधा दी। मेरा कर्त्तव्य है, कि मैं अबसे आपका शत्रु बनूं। आप मेरी कन्यासे हर्गिज विवाह न कीजियेगा।

"आप कह सकते हैं, कि उस समय भी क्षत्रिय वीर कन्याएं हरकर विवाह करते थे। भीष्म अर्जुन तथा स्वयं श्रीकृष्णने कन्या हरकर विवाह किया था; किन्तु आपमें वह बल-वीर्य्य कहां? यदि आपकी भुजाओंमें बल है, तो भारतवर्षमें मुगल-बादशाह क्यों? शृगाल हो सिंहका अनुकरण करना उचित नहीं। मैं राजपूत हूं; मैं जानता हूं कि मुगलोंको कन्यादान करनेसे गौरव न बढ़ेगा; किन्तु यदि मैं मुगलसे कन्याका विवाह न करूं, तो मुगल रूपनगरके पहाड़का एक पत्थर भी ज्योंका त्यों रहने न देंगे। यदि मैं आप आत्मरक्षा कर सकता या निश्चय होता, कि कोई मेरी रक्षा कर सकेगा, तो मैं कन्या मुगलोंको देनेमें कदापि राजी न होता। जब मुझे मालूम हो जायेगा, कि आपकी भुजाओंमें मुगलोंसे सामना करनेका बल है, तब मैं अपनी कन्याका विवाह आपसे सादर कर दूंगा।

"इसमें सन्देह नहीं, कि पहले क्षत्रिय राजा कन्या हरकर विवाह करते थे ; किन्तु धोखेबाजी झूठ आदिकी सहायता लेते न थे। आप मेरे पास सिपाही भेजकर तथा झूठ बोल धोखेसे मेरी ही फौजकी सहायतासे मेरी ही कन्या हर ले गये । यदि आपको मेरी फौजकी सहायता न मिलती, तो आप मेरी कन्याको हर न सकते। आपसे छिपा नहीं, कि आपने मेरा कितना अनिष्ट किया है। जब मुगल-बादशाह सुनेंगे, कि मेरी ही फौजने युद्ध किया है, तब वह ख्याल करेंगे, कि मैंने ही उन्हें धोखा दिया है। मुगल पहले रूपनगर ध्वंसकर तब आपपर चढ़ाई करेंगे। मुझे भी युद्ध करना आता है ; किन्तु लाखों हथियारबन्द मुगलोंका सामना कौन कर सकता है ? इसीलिये प्रायः कुल राजपूत मुगलोंकी अधीनतामें आ गये हैं ; मेरेजैसे सामान्य राजाकी तो गिनती ही क्या है ?

"न मालूम औरङ्गजेब मेरे कथनपर विश्वास करेंगे या नहीं। यदि आपने मेरी कन्यासे विवाह कर लिया और उसे दिल्ली जाने का अवसर न मिला, तो मेरी तथा मेरी कन्याकी जान न बचेगी।

"आप मेरी कन्यासे विवाह न कीजियेगा। यदि आपने मेरी कन्यासे विवाह कर लिया, तो आप दोनोंको शापग्रस्त होना पड़ेगा। मैं शाप देता हूं, कि आपने उससे विवाह किया, तो मेरी कन्या विधवा, सहगमनसे वञ्चिता, मृतप्रजा तथा चिर-दुःखिनी होगी ; आपकी राजधानी शृगाल-कुत्तोंकी वासभूमि बनेगी।"

इतना लिखकर विक्रम सोलङ्कीने केवल दो सतरोंमें नीचे यह भी लिखा,—"यदि कभी यह प्रमाणित हुआ, कि आप मेरी कन्याके योग्य पात्र हैं, तो मैं इच्छापूर्व्वक कन्याका विवाह आपसे कर दूंगा।"

चञ्चलकुमारीकी माताने पत्रका जवाबतक न दिया। विक्रम सोलाङ्कीका पत्र महाराणाने चञ्चलकुमारीको पढ़ सुनाया। चञ्चलकुमारीने पत्र पढ़कर चारो ओर अन्धकार देखा।

चञ्चलकुमारी बहुत देरतक सिर झुकाये चुप रही। अन्तमें महाराणाने पूछा,—"अब क्या करना चाहिये? विवाह उचित है या नहीं?"

चञ्चलकुमारीने आंसू पोंछकर कहा,—"पिताका यह शाप सुनकर भी कौन कन्या विवाह कर सकती है?"

महाराणा। हां, यदि रूपनगर लौट जाना चाहो, तो भेज सकता हूं।

चञ्चल। अब दूसरा कोई उपाय नहीं, तब रूपनगर जाना ही अच्छा है; किन्तु रूपनगर जाते ही दिल्ली जाना पड़ेगा; इससे विष खाना ही बुरा क्या है?

महाराणा। यदि मेरी बात मानो, तो मेरी राय यह है, कि तुम मेरी महिषी बननेयोग्य हो; मैं तुम्हें छोड़ नहीं सकता। किन्तु तुम्हारे पिताकी आज्ञा बिना मैं तुमसे विवाह भी कर नहीं सकता। अभी आज्ञा पानेकी आशा है। मुगलोंसे युद्ध करना ही पड़ेगा। भगवान हमारी सहायता करेंगे। इस युद्धमें या तो मेरी मृत्यु होगी, नहीं तो मुगल हारेंगे।

चञ्चल। मुझे पूर्ण विश्वास है, कि मुगल आपसे हारेंगे।

महाराणा। कार्य्य बहुत कठिन है; तथापि यदि मेरी जय हुई, तो तुम्हारे पिता मुझसे तुम्हारा ब्याह कर देंगे।

चञ्चल। तबतक?

महाराणा। तबतक तुम मेरे रनिवासमें रहो। रानियोंकी तरह तुम्हारे लिये भी रहने-सहनेका प्रबन्ध रहेगा। मैं सबसे कह दूंगा, कि मैं शीघ्र ही तुमसे विवाह करूंगा। इससे सबलोग तुम्हें

महारानी कह संबोधन करेंगे। अबतक तुम्हारे साथ मेरा विवाह न होगा, तबतक मैं तुमसे भेंट न करूंगा।

चञ्चलकुमारीने सोच-विचारकर ऐसा करना ही ठीक समझा।

राजसिंहने चञ्चलकुमारीके रहने-सहनेका यथेष्ट प्रबन्ध कर दिया।

चौथा परिच्छेद।

आग जलानेकी और भी जरूरत।

निर्मलने माणिकलालसे सुना, कि चञ्चलकुमारी महारानी बनी; किन्तु माणिकलाल यह बात बता न सका, कि विवाह हुआ नहीं; यदि हुआ, तो कब विवाह हुआ। निर्मल खुद चञ्चलकुमारी-को देखने आई।

बहुत दिनोंके बाद निर्मलको देख चञ्चलकुमारी बहुत प्रसन्न हुई। निर्मलसे चञ्चलने कहा, कि आज यहां रह जाओ; कल जाना। निर्मल राजी हो गई। रूपनगर परित्यागकेबाद जिसपर जैसी आफत आई थी; एकने दूसरेसे वर्णनकिया। निर्मलके विवाहका हाल सुन चञ्चलकुमारी बहुत आनन्दित हुई। निर्मलके सुखका कारण यह था, कि माणिकलालने महाराणासे बहुत पुरस्कार पाया था; रुपया जमा किया था। इसके सिवा महाराणाके अनुग्रहसे माणिकलालको फौजी विभागमें अच्छी नौकरी भी मिली थी। निर्मलके उच्च अट्टा-लिका, धन-दौलत, दास-दासी, सब है,—तथा माणिकलाल उसका खरीदा हुआ गुलाम है; किन्तु निर्मल चञ्चलकुमारका हाल सुनी बहुत दुःखित हुई। चञ्चलकुमारीके पिता-माता, राजसिंह और चञ्चलकुमारीपर वह बहुत नाराज हुई। वह चञ्चलकुमारीको

महारानी जानेपर राजी न हुई तथा निश्चय किया, कि यदि महाराणासे मुलाकात हुई, तो उन्हें दो चार बातें बिना सुनाये न रहूंगी। चञ्चलकुमारीने कहा,—"यह बात अभी जाने दो। मेरे साथ यहां परिचित आत्मीय स्वजन कोई नहीं; मुझसे अकेले रहा नहीं जाता। यदि ईश्वरने तुम्हें यहां भेज दिया है, तो मैं तुम्हें जाने न दूंगी। तुम्हें मेरे पासही रहना पड़ेगा।"

चञ्चलकुमारीकी आंखोंसे आंसू टपकने लगे। निर्म्मलकुमारी चञ्चल तथा अपने लिये दुःखित हुई। कारण, विवाह थोड़े ही दिन हुए हुआ था। वह कैसे नये सुख, नये प्रेमको विसर्जन दे चञ्चल-कुमारीके साथ रह सकती थी? निर्म्मल सोच-विचारकर राजी हो न सकी। कुछ झूठ बात भी न बोली; किन्तु असली बात भी कह न सकी। उसने कहा,—"इसका जवाब सन्ध्याको दूंगी।"

चञ्चलकुमारीने यह सुन रो दिया।" इसके बाद डबडबाई आंखों-से चञ्चलने मन ही मन कहा,—"निर्म्मलने भी मुझे त्याग दिया। भगवन्! तुम मुझे न त्यागना।" इसके बाद चञ्चलकुमारीने निर्म्मल से मुस्कराकर कहा,—"निर्म्मल! तुम मेरे लिये दिल्ली जाती थी; रूपनगर परित्यागकर मरना निश्चय कर लिया था; किन्तु आज प्रीतमको परित्याग करना कठिन है।"

निर्म्मल जवाब दे न सकी। मन ही मन लज्जित हुई। इसके बाद उसने कहा,—"इस समय जाती हूं; सन्ध्या समय आऊंगी। जिसे अपना मालिक बनाया है, उससे पूछ लेना उचित है। इसके सिवा एक बालिकाका भी भार मेरे सिर है, उसका बन्दोबस्त कर आना पड़ेगा।"

चञ्चल। उसे यहां क्यों न लाई?

निर्म्मल। वह बहुत रोती है। उसे यहां लानेकी जरूरत नहीं। एक बुआ हैं, उन्हींके पास उसे छोड़ आऊंगी।

यह सलाहकर निर्म्मल चली गई। मकानपर पहुंच उसने सब हाल माणिकलालसे कहा। माणिकलाल निर्म्मलको छोड़ना तो न चाहता था; किन्तु क्या करे, प्रभुभक्तिके कारण उसे राजी होना पड़ा। कन्याका भार बुआने लिया।

पांचवां परिच्छेद।

इसकी बड़ी जरूरत है।

निर्म्मल पालकीपर चढ़ नौकर-चाकरोंको साथ ले महाराणाके महलकी ओर रवाना हुई। उसकी सवारी चौकसे होकर गुजरी चौकमें एक जगह खूब भीड़ थी। पालकी सुनहरे उहारसे ढकी हुई थी; किन्तु भीड़की अधिकताके कारण निर्म्मलने पालकीसे झांककर देखा, कि क्या मामला है। एक दाईने पास आकर कहा,-"एक प्रसिद्ध ज्योतिषी इस मकानमें रहते हैं। हजारों मनुष्य अपना भाग्य जाननेके लिये इनके पास आते-जाते हैं। ज्योतिषी सब तरहके प्रश्नोंका जवाब देते हैं। उन्होंने जिसे जो कुछ कहा है, वह सब ठीक हुआ है।" निर्म्मलने कहा,—"नौकरोंसे कहो, कि भीड़ हटाकर मेरे वहां जानेको राह बनायें। मैं ज्योतिषीसे एक प्रश्न पूछूंगा; किन्तु ज्योतिषीसे मेरा परिचय न देना।"

नौकरोंने मुश्किलसे लोगोंको हटाकर राह साफ की। पालकी ज्योतिषीके मकानमें घुसी। जो लोग ज्योतिषीके पास थे, उनके चले जानेपर निर्म्मल पालकीसे उतर प्रश्नकर्त्ताके आसनपर जा बैठी। ज्योतिषीको प्रणामकर उसने कुछ दक्षिणा दी। ज्योतिषीने पूछा,—"क्या चाहती हो?"

निर्म्मलने कहा,—"मैं जो पूछूं, उसे गणनाकर बताइये।"

ज्योतिषी। अच्छा, प्रश्न करो।

निर्म्मल। मेरी एक प्यारी सखी है

ज्योतिषीने एक सुफ़ेद कागजपर कुछ लिखकर कहा,—"इसके बाद ?"

निर्म्मल। अभीतक उसका विवाह नहीं हुआ।

ज्योतिषीने फिर लिखकर कहा,—"इसके बाद ?"

निर्म्मल। कब उसका विवाह होगा ?

ज्योतिषी फिर लिख हिसाब करने लगे। लग्नसारिणी आदिसे विचार किया। निर्म्मलसे बहुतसा प्रश्न पूछा ; कई पन्ने काले किये ; कई पुस्तकें पढ़ीं। अन्तमें निर्म्मलको ओर देख शिर हिलाया।

निर्म्मल। क्या विवाह न होगा ?

ज्योतिषी। प्राय: वैसा ही उत्तर शास्त्रमें लिखा है।

निर्म्मल। प्राय: क्यों ?

ज्योतिषी। यदि ससागरा सम्राट्की स्त्रीने तुम्हारी सखीकी सेवा की, तो तुम्हारी सखीका विवाह होगा। यदि ऐसा न हुआ, तो विवाह होना असम्भव है। और ऐसा होना असम्भव है ; इसीलिये मैंने कहा था, कि विवाह न होगा।

"असम्भव है" कहकर ज्योतिषीको कुछ दे निर्म्मल वहांसे चलती बनी।

छठां परिच्छेद।

युद्ध होना ही ठीक है।

चञ्चलकुमारीके छिन जानेके बाद भारतवर्षमें ऐसा युद्ध ठना, कि उसमें या तो महाराणा और नहीं तो औरङ्गजेब भस्म हो जाते

किन्तु महाराणा राजसिंहकी दया तथा उदारतासे ऐसा न होने पाया। इन अजीब घटनाओंका वर्णन उपन्यासमें किया नहीं जाता। अवश्य इतनी बात लिखनेकी आवश्यकता है, कि जिसमें उपन्यास-की घटनायें समझमें आ जायें।

रूपनगरकी राजकुमारीके छिन जानेकी खबर दिल्लीमे पहुंचते ही वहां हलचल मच गई। बादशाहने बिगड़कर रूपनगरसे लौटे हुए सेनापतियोंमें किसीको पदच्युत, किसीको कैद तथा दो-चार को फांसीपर लटका दिया; किन्तु प्रधान अपराधी चञ्चलकुमारी तथा राजसिंहको दण्ड देना बादशाहके लिये कठिन हो गया। मेवाड़का राज्य छोटा था सही; किन्तु उस समय भारतवर्षमें ऐसा कोई माईका लाल न था, जो उस राज्यपर चढ़ाईकर जीता बच आये। मेवाड़के चारो ओर ऊंचे-ऊंचे पर्व्वतोंकी चहारदीवारी है; राजपूत-वीर तथा हिन्दू-राज्योंके सरताज राजसिंहकी अधीनतामें उस समम वह देश था। महाराणा प्रतापसिंह अकबरको यह दिखा चुके थे, कि राजपूतोंको बाहुमें कितना बल है तथा वह कैसे साहसी हैं। हिन्दुस्थानके बादशाहको महाराणाके सामने दुम दबाकर भागना पड़ा था।

किन्तु औरङ्गजेब किसीसे डरता न था। उसने हिन्दुओंपर अत्याचार करनेके लिये ही जन्म लिया था। महाराष्ट्रोंने तो औरङ्ग-जेबके नाकोदम कर ही रखा था, अब महाराणाने भी उन्हें अपमा-नित किया। वह महाराष्ट्रोंका तो कुछ कर हो न सके थे, राजपूतोंका सामना भी उनके लिये कठिन हो गया। इसलिये अपने सेनाप-तियोंको ही दण्ड देकर उन्होंने अपना क्रोध शान्त किया।

आजकलकी तरह टैक्सकी अधिकता तो न थी; किन्तु उस समय जो दो-चार टैक्स थे, उनका परिमाण बहुत अधिक था। इसके उपरान्त दो-एक टैक्स केवल हिन्दुओंको ही देने पड़ते थे।

इस टैक्सोंमें एकका नाम था, जिजिया। प्रसिद्ध राजनीतिविद् अकबर बादशाहने इसकी बुराई समझकर इसे बन्द कर दिया था। उस समयसे यह बन्द था! हिन्दू-शत्रु औरंगजेबने इस टैक्सको फिर जारीकर हिन्दुओंपर अत्याचार करना आरम्भ किया।

जिजिया अदा करनेका हुक्म बहुत दिन पहलेसे जारी हो चुका था; किन्तु अब वह कठोरतासे अदा किया जाने लगा। इससे हिन्दू बहुत ही भयभीत हुए। लाखों हिन्दुओंने हाथ जोड़कर औरङ्गजेबसे क्षमा मांगी; किन्तु औरङ्गजेबने क्षमा करना सीखा ही न था! जिस समय बादशाह मसजिदमें नमाज पढ़ने जाते थे, उस समय हिन्दू दुहाई देते थे। बादशाहसे हिन्दुओंका चिल्लाना सहा न गया; उन्होंने हुक्म दया, "हाथियोंके पैरतले काफिरोंको कुचलवा दो!" हुक्म पाते ही महावतोंने हाथियोंको हिन्दुओंपर दौड़ा दिया। बहुतसे हिन्दू कुचले गये!

भारतवर्षका जो अंश औरङ्गजेबकी अधीनता में था, उसे जिजिया देना पड़ा। ब्रह्मपुत्र और सिन्धुतटके बीच जितने मन्दिर थे, वह सब या तो तोड़ डाले गये और नहीं तो मसजिद बन गये। बनारसके विश्वेश्वरका मन्दिर तोड़ डाला गया; मथुराके केशवजीका मन्दिर मट्टीमें मिला दिया गया। बङ्गालसे लेकर पञ्जाबतक हिन्दुओंकी कुल कीर्त्तियां ध्वंस हो गईं।

औरङ्गजेबने यह भी हुक्म दिया, कि राजपूतानेके अधिवासी राजपूतोंको भी जिजिया देना पड़ेगा। राजपूतानेकी प्रजा औरङ्गजेबकी अधीनतामें न रहनेपर भी उसे जिजिया देनेपर मजबूर किया गया। राजपूतोंने पहले जिजिया देनेसे इनकार किया; किन्तु उदयपुरके सिवा उस समय राजपूतानेके किसी राज्यमें यह बल न था, कि वह औरङ्गजेबका विरोधी बने। जयपुरके जयसिंहका,—जो मुगलोंके प्रधान सहायक थे,—स्वर्गवास हो चुका था।

विश्वासघातक, मित्रद्रोही औरङ्गजेबकी आज्ञासे इन्हें विष खाकर जान देनी पड़ी थी। उनका एक मात्र जवान पुत्र उस समय दिल्लीमें कैद था। इस कारण जयपुरने जिजिया दिया।

योधपुरके यशोवन्तसिंहका भी स्वर्गवास हो गया था। उनकी रानी* उस समय राज्य चलाती थीं। स्त्री होनेपर भी उन्होंने बादशाहके कर्मचारियोंको अपने राज्यसे निकाल बाहर किया। औरङ्गजेबने उनपर चढ़ाई करनेकी इच्छा की। युद्धका हाल सुनकर रानी भयभीत हुईं। रानीने जिजिया तो न दिया; किन्तु राज्यका कुछ अंश औरङ्गजेबको दे डाला।

राजसिंहने जिजिया न दिया। राणा युद्ध करने पर कटिबद्ध हुए। जिजियाके बारेमें महाराणाने औरङ्गजेबको एक पत्र लिखा।

राजसिंहके पत्रके जवाबमें औरङ्गजेबने लिखा,—"तुम्हें न केवल जिजिया ही देनी होगी; बरं मन्दिरोंको तुड़वाकर मसजिदें बना देनी तथा गायकी कुरबानी करनी पड़ेगी! राजसिंह युद्धका प्रबन्ध करने लगे।

औरङ्गजेब भी युद्ध करनेपर तय्यार हुए। इस बार औरंगजेबने युद्धका ऐसा प्रबन्ध किया, कि जैसी और कभी किया न था। यदि चीनके सम्राट् या फारिसके शाहपर बादशाह चढ़ाई करते, तो भी शायद ऐसी व्यवस्था न करते, जैसा कि इस छोटे राज्यके विरुद्ध की थी। हम लोग मुसलमान, ग्रीक आदि राज्योंका हाल अच्छी तरह जानते हैं; परन्तु बड़े ही दुःख का विषय है, कि राजसिंह जैसे भारतवर्षके प्रसिद्ध वीरका कुछ हाल नहीं जानते! इसे हमारी शिक्षाका चाहे सुफल कहिये चाहे कुफल।

---

* इनका हाल जाननेके लिये हमारे यहांका 'काइनर' उपन्यास मंगाइये।

छठां खण्ड।

पहला परिच्छेद।

आग भड़की।

राजसिंहने जो कड़वा पत्र औरङ्गजेबको लिखा था, उसीसे युद्धकी आग भड़की। महाराणाके दरबारमें यह निश्चय होने लगा, कि इस पत्रको कौन औरङ्गजेबके पास ले जायेगा। अवश्य राजाओंमें यह नियम है, कि दूत मारा नहीं जाता; किन्तु इतिहासमें लिखा है, कि औरङ्गजेबने कई दूतोंको मरवा डाला था। राजपूतोंमें शायद ही कोई ऐसा जवान होगा, जो जानकी परवा करता हो; किन्तु राजसिंहकी यह इच्छा थी, कि किसी ऐसे चतुरको भेजना चाहिये, जो औरंगजेबको पत्र दे जान बचाकर भाग सके। इस विषयपर विचार हो ही रहा था, कि माणिकलालने आकर कहा,—"मुझे दिल्ली जानेकी आज्ञा दी जाये।" राजसिंह जानते ही थे, कि माणिकलाल बहुत चतुर है; इसी कारण उन्होंने उसके दिल्ली जानेका प्रस्ताव मञ्जूर किया।

यह खबर सुन चञ्चलकुमारीने निर्म्मलको बुलाकर कहा,—"माणिकलालके साथ तुम भी दिल्ली क्यों नहीं जाती?"

निर्म्मलने कहा,—"कहां? दिल्ली? किस लिये?

चञ्चल। रङ्गमहल देखनेके लिये।

निर्म्मल। सुना है, कि वह नरकके समान है।

चञ्चल । क्या कभी तुम्हें नरकमें जाना न पड़ेगा ? तुम माणिकलालकी बहुत दिक करती हो ; इसलिये मृत्युके बाद तुम्हें नरकमें जाना ही पड़ेगा ।

निर्म्मल । उन्होंने मुझसे विवाह क्यों किया ?

चञ्चल । वह क्या तुम्हें सड़कके किनारे छोड़ जाते, तो अच्छा होता ?

निर्म्मल । मैं उन्हें बुलाने नहीं गई थी । अब उनके साथ दिल्ली जाकर क्या करना पड़ेगा ?

चञ्चल । उदयपुरीको निमन्त्रित कर आना होगा ।

निर्म्मल । कैसा निमन्त्रण ?

चञ्चल । चिलम भरनेका ।

निर्म्मल । हां ठीक है । मैं इस बातको भूल गई थी । जबतक भारतेश्वरी तुम्हारे लिये चिलम न भरेंगी, तबतक तुम्हारा विवाह न होगा ।

चञ्चल । इस समय मुझपर आफत आई हुई है । जबतक बेगम चिलम न भरेंगी तबतक विवाह न होगा । यदि विवाह न हुआ, तो मुझे विष खाना पड़ेगा । ज्योतिषीने भी ऐसी ही बात कही है ।

निर्म्मल । यदि आपने पत्र लिखकर निमन्त्रण किया, तो क्या बेगम आयेंगी ?

चञ्चल । बेगम न आयेंगी ; किन्तु मैं लड़ाई लगवाना चाहती हूं । यदि युद्ध शुरू हुआ, तो महाराणाकी अवश्य जय होगी । बेगमको बांदी बनना पड़ेगा । तुम्हें भेजनेका कारण यह भी है, कि तुम बेगमोंको पहचान आओ ।

निर्म्मल । मुझे रङ्गमहलमें जानेका उपाय बता दो । मैं अवश्य जाऊंगी ।

चञ्चल—सुनो। तुम्हें मालूम है, कि जोधपुरी बेगमका पञ्जा मेरे पास है। तुम उस पञ्जेको लेती जाओ। इसीकी सहायतासे तुम जोधपुरी बेगमके पास जा सकती हो। जोधपुरी बेगमसे मुलाकात होनेपर कहना, कि वह तुम्हें उदयपुरीके पास भिजवा दें। जब तुमसे कुछ बन न पड़े, तब माणिकलालसे सलाह लेना।

निर्म्मल। बात-बातमें तो वह मुझसे सलाह पूछते हैं। वह मुझे क्या सलाह देंगे?

इतना कहकर निर्म्मल चञ्चलकुमारीसे पत्र और पञ्जा ले चली गई। मकानपर पहुंच माणिकलालके साथ दिल्ली जानेकी तय्यारी करने लगी।

दूसरा परिच्छेद।

दिल्ली-यात्रा।

माणिकलालको ही अधिक बन्दोबस्त करना पड़ा। इसका एक नमूना उसने एक दिन निर्म्मलको दिखाया। निर्म्मलने देखा, कि उसकी कटी उङ्गली फिर जुड़ गई। उसने माणिकलालसे पूछा,—"यह क्या हुआ?"

माणिकलालने कहा,—"बनवाया है।"

निर्म्मल। किस चीजसे!

माणिक। हाथीके दांतसे। इसमें छिपी कलें लगी हुई हैं। बकरेका चमड़ा मढ़ा हुआ है तथा इस चमड़ेपर मैंने ऐसा रंग करवाया है, कि उसमें तथा मेरे शरीरके रंगमें कुछ अन्तर नहीं। इच्छानुसार मैं इसे उतार-चढ़ा सकता हूं।

निर्म्मल । क्या इसकी कुछ जरूरत है ?

माणिक । दिल्ली जानेसे इसकी जरूरत मालूम हो जायेगी। जिसकी उंगली कटी होती है, वह भेष नहीं बदल सकता।

निर्म्मल यह बात सुनकर मुस्कराई। इसके सिवा माणिकलालने एक कबूतर साथ लिया। उसको माणिकलालने खूब सिखाया था। उसके गलेमें पत्र बांध देनेसे वह निर्द्धारित स्थानपर उसे पहुंचा दे सकता था। युरोपके युद्धोंमें भी कबूतर इस कामके लिये व्यवहार किये जाते हैं। एक समय भारतवर्षमें भी ऐसे कबूतरोंसे काम लिया जाता था। कबूतरका गुण माणिकलालने निर्म्मलको अच्छी तरह समझा दिया।

नियम था, कि दिल्लीके बादशाहके पास दूत भेजते समय कुछ "नजर" भी भेजी जाती थी। इङ्गलेण्ड, पुर्त्तगाल आदिके राजाओंने भी दिल्लीके बादशाहके पास "नजरें" भेजी थीं। राजसिंहने भी कुछ नजराना माणिकलालके हाथ भेजा था। शत्रुता रहनेके कारण अधिक चीजें भेजी न गईं।

अन्यान्य चीजोंके साथ सङ्गमरमरके जड़ाऊ खिलौने भी भेजे गये। इन खिलौनोंको माणिकलालने एक घोड़े पर लाद लिया।

शुभ-साइतमें माणिकलाल उदयपुरसे दिल्लीकी ओर रवाना हुआ। माणिकलालके साथ हाथी, घोड़ा, पालकी तथा फौज थी। दिल्ली पहुंचनेमें कई महीने लगे। जब दिल्ली केवल दो-चार कोस बाकी रह गई, तब माणिकलालने तम्बू ताननेकी आज्ञा दी। तम्बूमें सबको छोड़ केवल एक विश्वासी नौकर सहित माणिकलाल शहरकी ओर गया। केवल पत्थरकी चीज साथ ले गया; बनावटी उंगली निर्म्मलके पास रख गया। कह गया,—"कल आऊंगा।"

निर्म्मलने पूछा—"मामला क्या है ?"

माणिकलालने पत्थरके खिलौनोंमें से एकको दिखा निर्म्मलसे

कहा,—"ऐसा चिन्ह मैंने सब खिलौनेमें बनाया है।"

निर्म्मल। क्यों ?

माणिकलाल। दिल्लीमें हमारा तुम्हारा साथ छूट जायेगा। यदि मुगलोंको चतुराईसे फिर तुमसे मिलना कठिन हुआ, तो तुम किसीको पत्थरकी चीज खरीदनेके लिये बाजारमें भेजना। जिस दुकानपर तुम्हें ऐसे चिन्हके द्रव्य मिलें, वहीं मेरी खोज करना।

ऐसी सलाहकर माणिकलाल एक विश्वासी नौकर तथा पत्थरके खिलौने लेकर दिल्ली नगरमें चला गया। दिल्लीके बाजारमें एक दूकान किरायेपर ले एक विश्वासी नौकर तथा खिलौनोंको वहीं छोड़ वह निर्म्मलके पास लौट आया।

पीछे निर्म्मल तथा फौज आदिको साथ ले माणिकलाल दिल्लीमें गया तथा बादशाहके पास उसने अपनी खबर भिजवाई।

तीसरा परिच्छेद।

बिगाड़की चेष्टा।

सन्ध्याके समय जब औरङ्गजेब अमीर-उमरावोंसे सुशोभित हो दरबारे-आममें तख्ते-ताजस पर बैठे, तब माणिकलालने वहां उपस्थित हो कोरनिश की। दिल्लीके दरबारे-आमकी तारीफ बहुत सी पुस्तकोंमें छप चुकी है; इसलिये हम फिर उसे वर्णन करना नहीं चाहते। सीढ़ियोंपर चढ़ माणिकलालने पहली कोरनिश की। अब प्रतिपद-विक्षेपपर कोरनिश करनी पड़ी। तीन बार कोरनिश करनेके बाद माणिकलाल तख्ते-ताजसके पास पहुंचा; वहां खड़े हो माणिकलालने महाराणा राजसिंहका भेजा हुआ उपहार बाद-

शाहके सामने रख दिया। उपहार देख औरङ्गजेब मन ही मन बिगड़े ; पर कुछ बोले नहीं। उपहारमें दो तलवारें थीं,—एक म्यानमें और दूसरी नंगी थी। औरङ्गजेबने खुली तलवार ले बाकी उपहार छूकर ज्योंका त्यों परित्याग किया।

माणिकलालने राजसिंहका पत्र औरङ्गजेबको दिया। पत्रमें लिखी हुई बात पढ़ औरङ्गजेब बहुत नाराज हुए ; किन्तु इतने नाराज होनेपर भी उसे उन्होंने प्रकाश न किया। उन्होंने माणिकलालसे सादर महाराणाकी कुशल पूछी। बख्शीसे कहा, कि माणिकलालके खान-पान, रहन-सहनकी अच्छी व्यवस्था करा दो। माणिकलालसे कहा,—"मैं कल महाराणाके पत्रका जवाब दूंगा।"

दरबार बरखास्त हुआ। दरबारसे बाहर आकर औरङ्गजेबने माणिकलालको मार डालनेकी आज्ञा दी ; परन्तु जल्लाद माणिकलालका पता न लगा सका। बख्शीको भी माणिकलालका पता न मिला। बादशाही जासूसोंने सारी दिल्ली छान डाली ; पर माणिकलाल न मिला। औरङ्गजेबकी आज्ञा प्रकाशित होनेसे पहले ही माणिकलाल गायब हो गया था। जिस समय जासूस माणिकलालको ढूंढ़ते फिरते थे, उस समय माणिकलाल अपनी दूकानपर बैठा मौज कर रहा था। जासूस जब माणिकलालको न पकड़ सके, तब वह उसके तम्बूके अन्यान्य मनुष्योंको पकड़ कोतवालके पास ले गये। निर्मल भी पकड़ी गई। कुछ सुराग न मिला। धमकी तथा मारपीटसे भी काम न बना। उन्हें कुछ मालूम न था ; वह कैसे कुछ बता सकते थे ?

अन्तमें कोतवालने निर्मलको स्मरण किया। परदानशीन समझकर कोतवालने उसे एक कमरेमें बन्द रखा था। कोतवालने उसके पास आकर पूछा,—"क्या तुम महाराणाके एलचीको पहचानती हो ?"

निर्म्मल । नहीं ।

कोतवाल । क्या उसका नाम माणिकलालसिंह है ?

निर्म्मल । मैं नहीं जानती ।

कोतवाल । क्या तुम महाराणाके एलचीके साथ उदयपुरसे नहीं आई हो ?

निर्म्मल । मैं कभी उदयपुर नहीं गई ।

कोतवाल । तब तुम कौन हो ?

निर्म्मल । मैं जोधपुरी बेगमकी हिन्दू बांदी हूं ।

कोतवाल । जोधपुरी बेगमकी बांदियां महलसे बाहर नहीं आतीं ।

निर्म्मल । मैं भी कभी महलसे बाहर नहीं आई थी ; किन्तु हिन्दू-एलचीके आनेकी खबर सुन बेगम साहबाने मुझे उसके पास भेजा था ।

कोतवाल । क्यों ?

निर्म्मल । गंगाजल तथा ठाकुरजीका चरणामृत लानेके लिये । सब राजपूत गङ्गाजल अपने पास रखते हैं ।

कोतवाल । तुम अकेली महलसे बाहर कैसे आई ?

निर्म्मलने जोधपुरी बेगमका पञ्जा दिखाकर कहा,—"मैं इसकी सहायतासे बाहर आई हूं ।" पञ्जा देख कोतवालने निर्म्मलको सलाम किया । कहा,—"तुम्हारी जहां इच्छा हो जा सकती हो ; कोई तुम्हें न रोकेगा ।"

मौका पाकर निर्म्मलने कहा,—"कोतवाल साहब ! मुझपर कुछ मेहरबानी कीजिये । मैं कभी महलसे बाहर नहीं आई थी । आपके व्यवहारसे कुछ डर भी गई हूं । यदि आप अनुग्रहकर किसी सिपाहीको मेरे साथ कर दें, तो बहुत अच्छा हो ।"

कोतवालने फौरन एक हथियारबन्द कर्म्मचारीसे कहा,—

"इन्हें महलतक पहुंचा आओ।"

महलमें पहुंच निर्म्मलने सन्त्रियोंको जोधपुरी बेगमका पञ्जा दिखाया। पञ्जा देख कोई कुछ न बोला। निर्म्मल पूछ-ताछकर किसी तरह जोधपुरी बेगमके पास जा पहुंची। जोधपुरी बेगमको प्रणामकर निर्म्मलने उन्हें वह पञ्जा दिखाया। पञ्जा दिखाते ही जोधपुरी उसे एक अलग कोठरीमें ले गईं। वहां जाकर उन्होंने उससे पूछा,—"यह पञ्जा तुमने कहां पाया?"

निर्म्मलने कहा,—"मैं कुल हाल कहती हूं, सुनिये।"

सबसे पहले निर्म्मलने अपना परिचय दिया। रूपनगरसे चञ्चलका बादशाही सेनाके साथ आना, बीचमें राजसिंहसे युद्ध होना, चञ्चलका पञ्जा देना, चञ्चलकी तथा अपनी बीती—सब बातें निर्म्मलने, बेगम साहबासे कह सुनाईं। दिल्लीमें माणिकलालके साथ आने तथा चञ्चलकुमारीका पत्र लानेका हाल कहा। अपनी विपत्ति तथा कोतवालसे छुटकारा पानेकी भी बात कही। अन्तमें महलमें आनेका हाल कह चञ्चलकुमारीको उदयपुरीके नामका पत्र दिखाया और कहा, कि किसी तरह इस पत्रको उदयपुरीके पास पहुंचाना चाहिये ; इसीलिये आपके यहां आई हूं।

बेगम साहबाने कहा, कि इसके पहुंचानेकी व्यवस्थाकी जायेगी। जेबुन्निसा बेगमसे आज्ञा लेनी पड़ेगी। आज्ञा लेनेका यह समय नहीं। जब सन्ध्याके समय वह शराब पीकर मतवाली बनेगी तब सहजमें आज्ञा मिल जायेगी। इस समय तुम यहां रह सकती हो। हिन्दुओं द्वारा अन्न-जल तुम्हें मिलेगा।

निर्म्मल राजी हो गई। बेगमने भी ऐसा ही हुक्म दिया।

चौथा परिच्छेद ।

बदमस्त उदयपुरी ।

रात कुछ अधिक होनेपर जोधपुरी बेगमने निर्म्मलको उपयुक्त बातें सिखा एक तातारी बांदीके साथ जेबुन्निसाके पास भेज दिया। निर्म्मल जेबुन्निसाके कमरेमें प्रवेशकर अतर, गुलाब, फूल तथा तम्बाकू प्रभृतिकी खुशबूसे प्रफुल्लित हो उठी। भांति-भांतिके रत्नोंसे जड़ी हुई जमीन, पलङ्गकी सजावट तथा दीवालोंकी तरह-तरहकी चित्रकारियां देख वह आश्चर्य्यमें आ गई ; सबसे अधिक आश्चर्य्य उसे जेबुन्निसाको देखकर हुआ। उसने देखा, कि जेबुन्निसा विचित्र रत्न-पुष्प-मिश्रित अलङ्कार और चन्द्र-सूर्य्य-तुल्य उज्वल सौन्दर्य्यकी चमकसे चमचमा रही थी। इस सजावटसे सजी हुई पापिनी जेबुन्निसा देवलोकमें रहनेवाली अप्सराकी भांति दिखाई देती थी।

किन्तु निर्म्मल जब वहां पहुंची, तब वह मदिरा पीकर मस्त थी। उसकी आखें लाल हो रही थीं। जब निर्म्मलकुमारी उसके सामने जा खड़ी हुई, तब उसने पूछा—"तू कौन है ?"

निर्म्मलकुमारीने कहा,—"मैं उदयपुरकी राजमहिषीकी दूती हूं।"

जेबु०। मुगल-बादशाहका तख्‌त-ताजस लेने आई है ?

निर्म्मल। नहीं। चिट्ठी लेकर आई हूं।

जेबु०। चिट्ठी क्या होगी ? जलाकर रोशनाई बनायेगी ?

निर्म्मल। नहीं ; उदयपुरी बेगमको दूंगी

जेबु०। वह जीती है, या मर गई ?

निर्म्मल । शायद जीती हैं ।

जेबु० । नहीं, वह मर गई । (लौंडियोंको तरफ इशाराकर) इस दूतीको कोई उसके पास पहुंच आये ।

जेबुन्निसाकी उपर्युक्त पागलोंकी सी बातोंका यह मतलब था, कि कोई इसे मार डाले ; किन्तु तातारी लौंडियोंने इसका अर्थ न समझा। इससे वह जेबुन्निसाके आज्ञानुसार निर्म्मलकुमारीको उदयपुरी बेगमके पास ले गईं ।

वहां निर्म्मलने देखा, कि सुन्दर बड़ी बड़ी उज्ज्वल आंखों वाली उदयपुरी बेगम बड़ी प्रसन्नतासे हंस रही है । निर्म्मलने एक लम्बी सलाम की । उदयपुरीने पूछा,—"आप कौन हैं ?"

निर्म्मलने उत्तर दिया,—"मैं उदयपुरकी राजमहिषीकी दूती हूं । चिट्ठी लेकर आई हूं ।"

उदयपुरी । नहीं; नहीं ; तुम फारिस देशके बादशाह हो, मुगल-बादशाहके हाथसे तुम मुझे छीनने आये हो !

निर्म्मलकुमारीने हंसी रोकते हुए चञ्चलकुमारीका पत्र उदयपुरीके हाथमें दिया । उदयपुरी इस पत्रके पढ़नेका बहाना करती हुई कहने लगी,—"क्या लिखता है ? लिखता है—'ऐ मेरी प्यारी नाजनी ! तुम्हारी खूबसूरती और नाजोअन्दाजकी बात सुन मैं निहायत दीवाना बन गया हूं । तुम जल्द बन्देके गरीबखानेपर कदमरंजा फरमाकर बन्देको गुलाम बना लो ।' हां जरूर चलूंगी । आप जरा ठहरें—मैं जरा शराब चख लूं । आप क्या थोड़ीसी शराब पियेंगे ? यह बढ़िया शराब फिरंगियोंके एलचीने नजर दी है ! ऐसी शराब आपके देशमें नहीं बनती !"

उदयपुरीने प्याला मुंहसे लगाया । उसी समय निर्म्मलकुमारी वहांसे उठकर जोधपुरीके पास पहुंची और यहां जो जो तमाशे हुए थे उसने सब जोधपुरीसे कह सुनाये । सब बातें सुनकर जोधपुरी बेगम

हंसती हुई बोली,—"अब तुम्हारा काम ठीक हो जायेगा। तुम इसी समय यहांसे भागो। शायद कल कुछ गड़बड़ मचे। मैं तुम्हारे साथ एक विश्वासी खोजा देती हूं। यह तुम्हें महलसे बाहर तुम्हारे पतिके पास छावनीमें पहुंचा देगा। वहां यदि तुम्हारे आदमी मिलें, तो तुम उनके साथ आज ही दिल्लीसे बाहर निकल जाना। यदि डेरेमें किसीसे भेंट न हो, तो इसीके साथ दिल्लीसे बाहर चली जाना। तुम्हारे स्वामी शायद दिल्लीके बाहर तुम्हारी बाट देख रहे होंगे। यदि राहमें भी उनसे तुमसे भेंट न हो, तो यह खोजा ही तुम्हें उदयपुर पहुंचा आयेगा। खर्च आदि भी मैं तुम्हें देती हूं। किन्तु सावधान! ऐसा करना जिसमें मुझपर किसीका कुछ सन्देह न हो।"

निर्म्मलने कहा,—"बाई जी! इसके लिये आप निश्चिन्त रहें। मैं राजपूतकी कन्या हूं।"

तब जोधपुरीने अपने बनासी नामक खोजेको बुलवाया। उसे जो जो करना पड़ेगा, वह सब बातें समझा दीं। फिर पूछा—"इसी समय जा सकेगा न?"

बनासीने कहा—"जा सकूंगा। किन्तु बेगम साहबाके सहीका बिना एक परवाना पाये इतना बड़ा काम करनेकी हिम्मत नहीं होती।"

जोधपुरीने कहा,—"जैसा परवाना दरकार हो लिखवा ला। मैं बेगम साहबासे दस्तखत करा दूंगी।"

खोजा परवाना लिखा लाया। उसे एक तातारी पहरेवालिनको देकर जोधपुरी बेगमने कहा,—"इसपर बेगम साहबाका दस्तखत करा ला।"

पहरेवालीने पूछा,—"यदि पूछें, कि कैसा परवाना है?"

जोधपुरीने कहा—"कहना, कि मेरे कतल करनेका परवाना है। किन्तु कलम दावात लेती जा। पञ्जा छापना न भूलियो।"

पहरेवालिनने कलम-दवात सहित परवाना जेबुन्निसाके सामने रखा। जेबुन्निसाने पहलेकी भांति पूछा,—"कैसा परवाना है!"

पहरेवालिनने कहा,—"मेरे कतलका परवाना है!"

जेबु०। क्या चुराया था?

पहरे०। हजरत उदयपुरी बेगमका पेशवाज!

जेबु०। खूब किया था! कतलके बाद उसे पहनना!

यह कहकर बेगम साहबाने परवानेपर दस्तखत कर दिया। पहरेवालिनने मुहर छाप ली और लाकर जोधपुरी बेगमके सामने रख दिया। बनासी उस परवाने तथा निर्म्मलको साथ लेकर महलसे निकला। निर्म्मलकुमारी खुशी-खुशी खोजेके साथ चली।

किन्तु एकाएक उसकी वह प्रफुल्लता फीकी पड़ गई; रङ्गमहलके फाटकपर पहुंचते ही खोजा डरकर खड़ा हो गया। "बड़ी भारी विपद है! भागो! भागो!!" कहता और हांफताहुआ खोजा भागा।

पांचवां परिच्छेद।

स्वयं यमराज।

निर्म्मलने नहीं समझा, कि क्यों भागें। इधर-उधर देखनेपर भी उसे भागनेका कोई कारण नजर नहीं आया। केवल उसने फाटकपर एक सुफेदपोश अधेड़ मनुष्यको खड़े देखा। उसने मनमें सोचा, कि यह भूत-प्रेत तो नहीं, कि जिसे देख खोजा भाग गया है? निर्म्मल भूत-प्रेतसे जरा भी डरती न थी; इसलिये वह भागी नहीं; कुछ सोचने लगी। इतनेमें वह सुफेदपोश पुरुष उसके

निकट आ खड़ा हुआ। निर्म्मलको ओर देखकर उसने पूछा,—"तुम कौन हो ?"

निर्म्मल बोली,—"मैं चाहे कोई हूं, तुमसे मतलब ?"

सुफेदपोशने फिर पूछा,—"तुम कहां जाती हो ?"

निर्म्मल। बाहर।

पुरुष। क्यों ?

निर्म्मल। कुछ काम है।

पुरुष। यह मैं जानता हूं कि कामके बिना कोई कुछ नहीं करता ; क्या काम है ?

निर्म्मल। उसे मैं नहीं बताऊंगी।

पुरुष। तुम्हारे साथ और कौन था ?

निर्म्मल। मैं नहीं बताऊंगी।

पुरुष। तुम हिन्दू जान पड़ती हो। तुम कौन जाति हो ?

निर्म्मल। राजपूत।

पुरुष। तुम क्या जोधपुरी बेगमके यहां रहती हो ?

निर्म्मलने मनमें ठान लिया, कि जोधपुरीका नाम किसीसे न बताऊंगी ! शायद इससे उनका कुछ नुकसान हो ; इसलिये उसने कहा,—"मैं यहां नहीं रहती। आज ही आई हूं।"

उस पुरुषने पूछा,—"कहांसे आई हो ?"

निर्म्मलने मनमें सोचा, कि झूठ क्यों बोलूं ? यह मनुष्य मेरा क्या करेगा ? किसके डरसे राजपूत-कन्या झूठ बोलेगी ? इससे उसने जवाब दिया,—"मैं उदयपुरसे आई हूं ?"

तब उस पुरुषने पूछा,—"क्यों आई हो ?"

निर्म्मलने कहा,—"तुम्हें यह बात क्यों बताऊं ? इतनी पूछ-ताछ न कर यदि तुम मुझे फाटकसे बाहर पहुंचा देते, तो मेरा विशेष उपकार होता।"

पुरुषने कहा,—"तुमसे पूछताछ करके यदि मैं सन्तुष्ट हो सका, तो तुम्हें फाटकसे बाहर पहुंचवा सकता हूं ।"

निर्म्मल । जबतक मैं यह जान न लूं, कि तुम कौन हो, तबतक मैं कुछ नहीं बता सकती ।"

पुरुषने जवाब दिया,—"मैं आलमगीर बादशाह हूं ।"

उस समय निर्म्मलके हृदयमें वह तसवीर खिंच उठी, जिस तसवीरको चञ्चलने लातसे तोड़ी थी। निर्म्मलने जीभ काटकर कहा,—"हां वही तो हैं ?"

इसके बाद निर्म्मलने जमीन चूमकर बादशाहको सलाम किया। और हाथ जोड़कर बोली,—"हुक्म ! फरमाइये !"

बादशाहने कहा,—"यहां किसके पास आई हो ?"

निर्म्मल । हजरत उदयपुरी बेगम साहबाके यहां ?

बादशाह । क्या कहा ? उदयपुरसे उदयपुरी बेगमके यहां ! क्यों ?

निर्म्मल । पत्र लेकर ।

बादशाह । किसका पत्र ?

निर्म्मल । महारानी उदयपुरका ।

बाद० । वह पत्र कहां है ?

निर्म्मल । हजरत बेगम साहबाको वह पत्र दे दिया है ।

बादशाह बहुत चौंके ; बोले,—"मेरे साथ आओ ।"

निर्म्मलको साथ लेकर बादशाह उदयपुरीके महलमें गये । दरवाजेपर निर्म्मलको खड़ीकर तातारी पहरेवालियोंसे बोले,—"इसे जाने न देना ।"

बादशाहने उदयपुरीके शयनागारमें प्रवेशकर देखा, कि वह सो गई है । उसके बिछौनेपर पत्र पड़ा हुआ है । औरङ्गजेबने उसे उठाकर पढ़ा । पत्र उस समयके रिवाजके अनुसार फारसीमें लिखा हुआ था । पत्र पढ़ते ही क्रोधसे लाल होकर बादशाह घरसे

बाहर निकले और निर्म्मलसे बोले—"तुमने क्योंकर इस महलमें प्रवेश किया ?"

निर्म्मलने हाथ जोड़कर कहा,—"बांदीका कुसूर माफ कीजिये ! मैं इस बातका जवाब न दूंगी ।"

औरङ्गजेब चकित हो बोले—"किसकी इतनी हिम्मत है ? मैं दुनियाका बादशाह हूं । मैं पूछता हूं और तुम जवाब न दोगी ?"

निर्म्मलने हाथ जोड़कर कहा,—"दुनिया हुजूरकी है ; किन्तु जीभ मेरी है ; मैं जो न बोलूंगी, दुनियाके बादशाह किसी प्रकार वह मुझसे बुलवा नहीं सकते ।"

औरङ्ग० । चाहे बुलवा न सकूं ; पर जिस जीभकी तुम इतनी तारीफ करती हो, उसे इसी वक्त तातारी पहरेदारिनोंके हाथसे कटवा कुत्तोंको खिला सकता हूं ।

निर्म्मल । दिल्लीश्वरकी मरजी ! किन्तु ऐसा करनेसे तो वह खबर, जिसे आप ढूंढ़ते हैं, सदाके लिये अन्धेरेमें रह जायेगी ।

औरङ्ग० । इसीलिये तुम्हारी जीभ नहीं कटवाई । अब मैं यह हुक्म देता हूं, कि आगमें धीरे-धीरे जलाकर तातारी पहरेदारिनें तुमसे वह बात कहलायेंगी । मेरी आज्ञासे जो बात नहीं कहोगी, वह उस जलनसे आप ही आप कहोगी ।

निर्म्मलकुमारी हंसने लगी । बोली,—"हिन्दुओंकी लड़कियां आगमें जलकर मरनेसे नहीं डरतीं । हिन्दुस्थानके बादशाहने क्या कभी सुना नहीं, कि हिन्दू-स्त्रियां हंसते-हंसते पतिकी धधकती हुई चितामें प्रवेश कर मर जाती हैं ! आप मुझे मरनेका डर दिखाते हैं ! मेरी मा, मेरी दादी आदि पुश्त-दरपुश्तसे उसी आगमें मरी हैं । मैं भी इच्छा करती हूं, कि ईश्वरकी कृपासे मैं भी स्वामीकी बगलमें स्थान पाकर आगमें जीती हुई जल मरूं ।"

बादशाहने मन ही मन इसके साहसकी प्रशंसा की और फिर

प्रकाश्यमें कहा,—"इस बातका विचार पीछे होगा। इस वक्त इस महलके एक कमरेमें तुम्हें बन्द रखा जायेगा। भूख-प्यास लगनेपर कुछ खाने-पीनेको भी नहीं मिलेगा। हां, जब देखना, कि अब प्राण निकलना ही चाहता है, तब किवाड़में धक्का देना। पहिरेवालियें तुम्हें मेरे पास लायेंगी। उस समय मुझसे सब बात खोलकर कह देनेपर खाना-पीना मिलेगा।

निर्म्मल। बादशाह! क्या आपने कभी नहीं सुना, कि हिन्दू-स्त्रियां व्रत करती हैं? व्रतादिके लिये वह तीन-तीन दिन निर्जल रहती हैं? क्या आपने नहीं सुना है, कि कभी-कभी वह खुशीसे बिना अन्न-जलके प्राण परित्याग कर देती हैं? जहांपनाह! यह दासी भी वह कर सकती है। यदि इच्छा हो, तो मेरी मृत्युतक परीक्षाकर देख लीजिये।

औरङ्गजेबने देखा, कि इस स्त्रीको डर दिखानेसे काम न चलेगा; मार डालनेपर भी यह कुछ न बतायेगी। कष्ट देनेसे बतायेगी या नहीं; कुछ ठीक नहीं; किन्तु इसे पहले एक बार लोभ देकर देखना चाहिये। इसके बाद बादशाह बोले,—"अच्छा तुम्हें कष्ट न दूंगा। धन-दौलत देकर विदा करूंगा। तुम सब बातें मुझसे सच-सच कह दो।"

निर्म्मल। राजपूत-बाला जिस प्रकार मृत्युको आलिङ्गन करती है उसी प्रकार धन-दौलतपर भी लात मारती हैं। मैं सामान्य स्त्री हूं; मुझे अपनी उदारतासे आप विदा कर दें।

औरङ्ग०। दिल्लीके बादशाह सब-कुछ कर सकते हैं। उनसे क्या तुम्हें कुछ मांगनेकी इच्छा नहीं?

निर्म्मल। है! निर्विघ्न विदा चाहती हूं।

औरङ्ग०। केवल यही इस समय नहीं पा सकोगी। इसके सिवा संसारकी जो चीजें तुम्हें चाहियें, निःसङ्कोच मांग सकती हो?

निर्म्मल । कुछ मांगना तो जरूर है ? पर दिल्लीके बादशाहकी खजानेमें वह रत्न नहीं ।

औरङ्ग० । ऐसी क्या चीज है ?

निर्म्मल । मैं हिन्दू-स्त्री हूं । हमलोग संसारमें केवल धर्म्मसे डरती हैं ; धर्म्मको ही चाह रखती हैं । दिल्लीका बादशाह म्लेच्छ है ; ऐश्वर्य्यशाली है । दिल्लीके बादशाहको क्या ताकत है, कि वह मेरी मांगी हुई चीज मुझे दे सके ।

दिल्लीश्वर निर्म्मलकुमारीका साहस और चतुरता देख आश्चर्य्यसे जरा नरम हो गये थे ; किन्तु उपर्युक्त व्यङ्गको सुनकर वह फिर क्रोधमें आ गये । उन्होंने कहा—"ठीक ! ठीक ! भूल गया था ।" तब उन्होंने एक तातारीको हुक्म दिया,—"जा बावर्चीखानेसे कुछ गोमांस ला । दो-तीन स्त्रियां मिलकर उसे इसके मुंहमें ठूस दो ।" निर्म्मल इससे भी विचलित न हुई । उसने कहा,—"जानती हूं, कि आपलोगोंमें यह विद्या है । इसी विद्यासे आपने इस सोनेके हिन्दुस्थानको छीन लिया है । जानती हूं, कि गायोंके झुण्ड सामने खड़े करके आपलोगोंने हिन्दुओंसे लड़ाई की थी ; इसीसे वह परास्त भी हुए थे । नहीं तो हिन्दुओंके बलके सामने मुसलमान क्या चीज हैं ? किन्तु फिर एक बात आपको याद दिलाये देती हूं । क्या आपने नहीं सुना, कि राजपूत-कन्या विष साथ लिये विना एक पैर भी आगे नहीं बढ़तीं ? मेरे पास भी ऐसी तेज विष है, कि यदि आपकी दासियोंके गोमांस लेकर इस घरमें घुसनेके बाद भी, यदि मैं उसे खा लूं, तो कोई जीते-जी मेरे मुंहमें गोमांस डाल नहीं सकता । जहांपनाह ! आपने अपने बड़े भाई दाराशिकोहकी हत्या करके उनकी दोनो स्त्रियां छीन लेनी चाही थीं ; पर क्या आपने पाया ? नीच क्रस्तानिन आई सही ; पर क्या राजपूतिन दिल्लीके बादशाहके मुंहपर सात जूतियां लगाकर स्वर्ग नहीं चली

गई ? मैं भी अभी सात जूती मार स्वर्ग चली जाऊंगी।"

बादशाह सन्न हो गये। जो पृथ्वीपति कहे जाते हैं, जिनके इशारेसे सारा भारतवर्ष चल-विचल हो सकता है, वही शाहंशाह आज एक निःसहाय अबलासे अपमानित और परास्त हुए! औरङ्गजेबने हार मान ली। मन ही मन सोचा—"यह अमूल्य रत्न है। इसे नष्ट करना न चाहिये। मैं इसे फुसलाऊंगा।" प्रकाश्यमें बड़े मधुर स्वरसे बोले—"तुम्हारा क्या नाम है, प्यारी!"

निर्म्मलकुमारीने हंसकर कहा,—"यह क्या जहांपनाह! और राजपूत-रानियोंको इच्छा है क्या? अफसोस, कि आपको यह इच्छा भी परित्याग करनी पड़ेगी; क्योंकि मेरा व्याह हो चुका है। मेरा हिन्दू-पति जीवित है।"

औरङ्ग०। यह बात इस समय रहने दो। मेरे इस रङ्गमहलमें कुछ दिनतक रहो। यह आज्ञा, आशा है, कि तुम न टालोगी!"

निर्म्मल। क्यों मुझे रोकते हैं!

औरङ्ग०। इस समय तुम अपने देशमें जाकर मेरी बड़ी निन्दा करोगी। कुछ दिन तुम्हारे साथ ऐसा व्यवहार करूंगा, जिससे तुम मेरी प्रशंसा करो। फिर तुम्हें छोड़ दूंगा।

निर्म्मल। यदि नहीं छोड़ते, तो मैं किसी तरह भी नहीं जा सकती; किन्तु यदि आप मुझसे कई प्रतिज्ञाएं करें, तो मैं कुछ दिन रह सकती हूं।

औरङ्ग०। प्रतिज्ञाएं! वह क्या हैं?

निर्म्मल। हिन्दुओंके अन्न-जलके सिवा मैं किसीके हाथकी चीज नहीं खाऊंगी।

औरङ्ग०। ठीक है।

निर्म्मल। कोई मुसलमान मुझे छू न सकेगा।

औरङ्ग०। यह भी स्वीकार करता हूं।

निर्म्मल । मैं किसी राजपूत-बेगमके यहां ठहरूंगी ।

औरङ्ग० । यह भी हो सकेगा । मैं तुम्हें जोधपुरी बेगमके यहां रखवा दूंगा ।

निर्म्मलकुमारीके लिये बादशाहने प्रतिज्ञानुसार बन्दोबस्त कर दिया ।

छठां परिच्छेद ।

पत्थरका वर्त्तन ।

दूसरे दिन औरङ्गजेब जेबुन्निसा और निर्म्मलकुमारीको साथ ले रङ्गमहलमें तहकीकात करने लगे, कि किसने निर्म्मलकुमारीको महलमें आने दिया । अन्तःपुरके कुल खोजे और तातारी बांदियोंको बुलाकर पूछा । जिन्होंने निर्म्मलको आने दिया था, उन्होंने उसे पहचाना सही; किन्तु इसे अपराध समझकर किसीने यह स्वीकार न किया, कि मैंने आने दिया था । औरङ्गजेब और जेबुन्निसाने बहुत कुछ करनेपर भी कुछ पता न पाया ।

तब औरङ्गजेब और जेबुन्निसाने महलके अन्यान्य लोगोंको हुक्म दिया, कि इसके आनेसे उतना नुकसान नहीं हुआ है; किन्तु आगेके लिये खयाल रखना चाहिये, कि जिसमें यह हमारी आज्ञा बिना बाहर न जा सके । कोई इसे कुछ कष्ट भी न दे । बेगमोंकी भांति इसकी इज्जत करनी होगी । यह जोधपुरी बेगमकी हिन्दू-बांदियोंका अन्नजल खायेगी, कोई मुसलमान बांदी इसे छू न सकेगी ।

यह सुनकर सब लोगोंने निर्म्मलकुमारीको सलाम किया । जेबु-

जिसाने अपने घरमें बुलाकर उससे तरह-तरहकी बातें कीं पर निर्म्मलके मनकी कोई बात भी वह जान न सकी।

उसी दिन दोपहरको एक तातारी पहरेदारिनने आकर जोधपुरी बेगमसे कहा,—"एक सौदागर पत्थरकी चीजें बेचने आया है। उसने बहुतसी चीजें महलमें भेज दी हैं। अन्यान्य बेगमोंने तो उन्हें नापसन्द किया है; क्या आप कुछ लेंगी?"

माणिकलालने चुन-चुनकर बुरी चीजें इसलिये भेजी थीं; कि जिसमें बेगमें कोई चीज न खरीदें। जिस समय पहरेदारिनने यह बात कही, उस समय निर्म्मल जोधपुरीके पास बैठी थी। उसने जोधपुरीको आंखोंका इशारा कर कहा,—"मैं लूंगी।"

इससे पहले रातको निर्म्मलकुमारी और औरङ्गजेबमें जो बातें हुई थीं, निर्म्मलने वह सब ज्योंकी त्यों जोधपुरीसे कह दी थीं जोधपुरीने उसकी बातें सुनकर उसकी तारीफ करते हुए आशीर्व्वाद दिया था। इस समय निर्म्मलकी इच्छा जानकर उन्होंने पत्थरकी चीजें लानेकी आज्ञा दी।

पहरेदारिनके बाहर चले जानेपर संक्षेपमें जोधपुरी बेगमने कहा,—"तुम अपने पतिके नाम एक चिट्ठी लिखो। तबतक मैं पत्थरकी चीजें पसन्द करती हूं। इसी समय तुम्हारी खबर तुम्हारे पतिको देनी होगी।"

ठीक समयपर पत्थरकी चीजें यहां आ पहुंचीं। निर्म्मलने देखा, कि कुल चीजोंमें माणिकलालका निशान है। देखकर निर्म्मल पत्र लिखने लगी। जबतक निर्म्मलका पत्र लिखना समाप्त नहीं हुआ, तबतक जोधपुरी सब चीजोंको उलट-पुलट करती रहीं। इन पत्थरकी चीजोंमें एक खूबसूरत बेलबूटेदार डिब्बा था, उसमें चाभी भी लगी थी। जोधपुरीने उसमें इस खूबीसे चिट्ठी रख कर उसे बन्दकर दिया, कि निर्म्मलके सिवा और कोई

यह बात न जान सका ।

जोधपुरीने सब चीजें रख लीं ; पर उस डिब्बेको नापसन्दकर वापिस कर दिया । वापिस करते समय जान-बूझकर उन्होंने उसको चाभी रख ली ।

छद्मवेशी सौदागर माणिकलालको केवल वह डिब्बा ही वापिस आते देख कुछ आशा हुई । रुपये-पैसे तथा डिब्बा लेकर वह दूकानपर आ वह एकाया । न्तमें उसने उसमेंसे निर्म्मलकुमारीका पत्र निकालकर पढ़ा ।

पत्रमें क्या लिखा था, यह बात पाठकोंको विस्तारपूर्वक बतानेकी कुछ जरूरत नहीं । असल बात तो पाठकोंने समझ ही ली होगी । और बातें पीछे मालूम होंगी । पत्र पानेके बाद माणिकलाल निर्म्मलकी ओरसे निश्चिन्त हो स्वदेश-यात्राका उद्योग करने लगा । किन्तु उस दिन ही दुकान दौरी उठानेसे शायद किसीको शक हो, इससे उसने कुछ दिन और ठहरना निश्चय किया ।

सातवां परिच्छेद ।

जेबुन्निसा ।

अब कुछ देरके लिये निर्म्मलकुमारीको यहीं छोड़ मुगल-वीर मुबारककी खबर लेनी चाहिये । कह चुके हैं, कि रूपनगरसे अपना-सा मुंह ले जो लोग लौटे थे, उनमें किसीको औरङ्गजेबने पदच्युत किया और किसीको सजा दी । किन्तु औरङ्गजेबने मुबारकको कुछ भी सजा न दी ; क्योंकि उन्होंने औरोंसे उसकी बड़ी बहादुरी सुनी थी । मुबारक अपने पदपर पूर्व्ववत् बहाल रहा ।

जेबुन्निसाने भी उसकी प्रशंसा सुनी । सोचा,—मुबारक स्वयं मेरे पास हाजिर हो सब बातें कहेगा ; किन्तु वह न आया ।

मुबारकने दरियाको अपने घरमें ला रखा है, कपड़े-लत्तोंसे भी उसे लक-दक बना दिया है । मुबारक अब अपनी विवाहिता स्त्री दरियाके साथ गृहस्थीका सुख लूट रहा है ।

मुबारक जब स्वयं न आया, तब जेबुन्निसाने अपने विश्वासी खोजा असीरुद्दीनसे उसे बुलवा भेजा । तथापि वह न आया । जेबु-न्निसा मनमें बहुत नाराज हुई । इतनी हिमाकत ! शाहजादीने खपा-कर उसे याद किया और वह हाजिर न हुआ ; इतनी हिमाकत !!

कुछ दिनोंतक जेबुन्निसा इसी प्रकार कुपित रही ; एक दिन मन ही मन बोली,—"मुझे तो सभी बराबर हैं ।" किन्तु जेबुन्निसा तब भी नहीं जानती थी, कि शाहजादियां भी भूलती हैं । शाहजादी और किसानकी लड़की दोनोंको ही एक ईश्वरने गढ़ा है । धन-दौलत और तख्त ताऊस आदि सभी कर्मभोग हैं । इसके सिवा और कुछ फर्क नहीं ।

'सबै दिन नाहिं बराबर जात ;' जेबुन्निसा भी अधिक दिन कुपित रह न सकी । कुछ दिन कुपित रहनेके बाद जेबुन्निसा मुबारकके लिये कुछ कातर हुई । शाहजादीका मान, नायिकाका मान—दोनों खोकर फिर उसने मुबारकको बुलवाया । मुबारकने कहला भेजा,—"शाहजादीसे मेरा बहुत-बहुत सलाम कहना । साथ ही यह भी कहना, कि शाहजादीसे प्यारा मुझे इस दुनियामें कुछ नहीं । हां एक चीज है,—वह है,—खुदा ; वह है,—'दीन' । गुनहगारी अब और मुझसे हो न सकेगी । मैं अब महलके भीतर न जाऊंगा । क्योंकि अब मैं दरियाको घर ले आया हूं ।"

जवाब सुन जेबुन्निसा बेतरह बिगड़ी । उसने मुबारक और दरियाका सर्व्वनाश करनेकी प्रतिज्ञा कर ली ; यही शाही

घरानेका नियम भी था।

निर्म्मलकुमारीके महलमें रहनेसे जेबुन्निसाको अपना मतलब साधनेमें कुछ सुविधा हुई। निर्म्मलकुमारी धीरे-धीरे औरङ्गजेबसे हिलमिल गई। औरङ्गजेब रोज फुर्सतके समय "रूपनगरी नाजनी"-को बुला उससे बातें करते। बातोंका प्रधान उद्देश्य यही रहता, कि जिसमें राजसिंहके राज्यकी भीतरी बातें मालूम हों। वह इतनी बुद्धिमानीसे बातें करते, कि अचानक कोई समझ न सकता, कि वह युद्धके कामकी बातें संग्रह करते रहे हैं; किन्तु निर्म्मल उनका मतलब समझ गई थी और वह उनकी सब जरूरी बातोंका झूठा उत्तर देती जाती थी।

यही कारण था, कि औरङ्गजेबने उसकी सब बातोंसे सन्तुष्ट न हो मनही मन विचार किया,—"मेवाड़को मैं सैन्य-सागरसे डुबो दूंगा। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, कि राजसिंहका राज्य भी नहीं रहेगा; किन्तु राज्य पाते ही मैं रूपनगरीको पाऊंगा ही, इसका तो कोई भरोसा नहीं; क्योंकि राजपूत-कन्याएं बात-बातमें चितापर चढ़ती हैं; बात-बात में विष खाती हैं। मेरे हाथमें आनेसे पहले ही वह शैतानी प्राण त्याग करेगी; किन्तु इस बांदीको यदि हाथमें कर सकूं, वशमें रख सकूं, तो क्या इसके द्वारा उसे बुला न ला सकूंगा? यह बांदी क्या कब्जेमें न आयेगी? मैं दिल्लीका बादशाह, एक बांदीको भी वशमें कर न सकूंगा? यदि न कर सका, तो मेरी बादशाही व्यर्थ है।"

इसके बाद बादशाहके इशारेसे जेबुन्निसाने निर्म्मलकुमारीको गहनोंसे मढ़ दिया। उसके गहने-कपड़े बेगमोंकी बराबरी करने लगे। निर्म्मल जो कहती, वही होता, जो चाहती, वही पाती। केवल बाहर निकल न सकती।

इन सब विषयोंमें जोधपुरीके साथ निर्म्मलकी बातें होतीं। एक

दिन हंसकर निर्म्मल जोधपुरीसे बोली,—

सोनेका पिञ्जरा सोनेकी चिड़िया, सोनेकी रस्सी पैरमें ॥
सोनेका खाना, सोनेका दाना, मट्टी केवल खैरमें ॥

जोधपुरीने पूछा,—"तुम रोती क्यों हो ?"

निर्म्मल बोली,—"उदयपुर जाकर दिखाऊंगी, कि मैं मुगल-बादशाहको ठगकर यह सब चीजें लाई हूं।"

जेबुन्निसा औरङ्गजेबका दहना हाथ थी; औरङ्गजेबका हुक्म पाते ही जेबुन्निसा निर्म्मलके पीछे पड़ी। असल मतलब निकालनेका भार जेबुन्निसापर रहा; बादशाहने अपने हिस्से केवल मीठी-मीठी बातें ही रखीं। बादशाह निर्म्मलके साथ जो हंसी-मजाक करते, वह बादशाही ढङ्गकी छिपी हुई। उससे निर्म्मल कुपित न होती; उसका जवाब देती; किन्तु साथ ही ऐसी मीठी चुटकी लेती, कि बादशाह भी जानते! इस समय अङ्गरेजी पढ़े-लिखे बाबुओंके मन की वह बातें न होंगी, नहीं तो बादशाही रुचिका कुछ दृष्टान्त देते।

जेबुन्निसासे वह बात निर्म्मल साफ-साफ कहती, जो कहने योग्य होती। अन्यान्य बातोंके सिवा यह बातें भी उठीं, कि रूपनगरका युद्ध कैसा हुआ था। निर्म्मलने युद्धका पहला हिस्सा यद्यपि देखा नहीं था; तथापि उसने चञ्चलसे सब हाल सुना था। जैसा हाल सुना था, जेबुन्निसाको वैसा ही कह सुनाया। यह भी कहा, कि मुबारकने मुगल-सेनाको रोककर चञ्चलसे हार मानी थी; जीत परित्याग की थी। यह भी कहा, कि राजपूतोंको बचानेके लिये चञ्चल खुशीसे दिल्ली आना चाहती थी; विष खानेकी बात भी कही थी। मुबारक ही उसे नहीं लाया; यह बात भी निर्म्मल कहनेसे न चूकी।

सुनकर जेबुन्निसा मन ही मन बोली,—"जनाब मुबारक साहब! इसी अस्त्रसे तुम्हारे शरीरसे तुम्हारा सिर अलग किया जायेगा।"

उपयुक्त समय पानेपर जेबुन्निसाने औरङ्गजेबको वह सब बातें कह सुनाईं।

औरङ्गजेबने सुनकर जवाब दिया,—"यदि उसने ऐसी बद-माशी की है, तो आज ही वह जहन्नम भेजा जायेगा।" औरङ्गजेबने मतलब नहीं समझा, यह बात नहीं। जेबुन्निसाके बुरे चरित्रकी बात वह खूब जानते; किन्तु कुछ लोग ऐसे हैं, जो कुत्ते को तो मारते हैं; किन्तु हांड़ी नहीं फोड़ते। मुगल-बादशाह भी इसी प्रकारके थे। वह बहन या लड़कियोंकी दुश्चरित्रता सुन उसे कुछ न कहते; किन्तु उसके अनुग्रहपात्रको जान किसी प्रकार मार डालते। मुबा-रकपर जेबुन्निसाके प्रेमपात्र होनेका सन्देह औरङ्गजेबको बहुत दिनोंसे था; किन्तु अबतक वह इसे पक्का कर न सके थे। इसी समय कन्याकी बातसे उन्हें पक्का विश्वास हो गया। उन्होंने सोचा, कि शायद दोनोंमें अनबन हुई है; इसीसे शाहजादी उसे इस संसारसे उठा देना चाहती है। औरङ्गजेब तो यह चाहते ही थे; किन्तु निर्मल-की जुबानी यह सब बातें सुनना बादशाहने अपना फर्ज समझ-कर उसे बुलवाया। उसने, इस विषयमें जो कुछ जानती थी; सब सच-सच कह दिया। उचित समयपर बादशाहने बख्शीको बुलाकर अपनी आज्ञा सुनाई। बख्शीको आज्ञा पाकर आठ आदमी गये और मुबारकको पकड़ लाये। मुबारक हंसते-हंसते बख्शीके पास आया। बख्शीके पास दो लोहेके पिंजरे रखे हुए थे। उन पिञ्जरोंमें एक-एक विषधर सांप फुंफकार रहे थे।

इस समय इस देशमें जिसे प्राणदण्ड की आज्ञा होती है, उसे फांसी दी जाती है। और कोई प्राणदण्डका उपाय निर्धारित नहीं। मुगलोंके राज्यमें प्राणदण्डका भिन्न-भिन्न नियम प्रचलित था। किसीका सिर काट लिया जाता, किसीको शूली दी जाती, किसी-को हाथीसे कुचलवा दिया जाता तथा किसीको विषधर सांपोंसे

दंशनसे प्राणत्याग करना पड़ता। जिसे चुपचाप मार डालना होता, उसे चुपचाप विष खिलाया जाता था।

मुबारक हंसता हुआ बख्शीके पास जा खड़ा हुआ और दोनों ओर दो विषैले सांपोंके पिञ्जरोंको देख पूर्ववत् हंसता हुआ बोला,— "क्या मुझे सांपोंके पास जाना होगा?"

बख्शी विषण्ण चित्तसे बोला;—"बादशाहका हुक्म ऐसा ही है!"

मुबारकने पूछा,—"क्यों ऐसा हुक्म हुआ? क्या कुछ मालूम है?

बख्शी। नहीं। क्या आप कुछ नहीं जानते?

मुबारक। अन्दाजन कुछ जानता हूं। अब देर क्या है?

बख्शी। कुछ भी नहीं।

मुबारकने जूते उतार एक पिंजरेपर पैर रखा। सांपने गरजते हुए आ पिञ्जरेके छेदसे उसे डंस लिया।

सांपकी विषज्वालासे मुबारकके मुंहका रङ्ग कुछ बिगड़ गया। वह बख्शीसे बोला,—"बख्शी साहब! यदि कोई पूछे, कि मुबारक क्यों मार डाला गया, तो मेहरबानीकर कहियेगा, कि शाहजादी जेबुन्निसा बेगमकी इच्छासे!"

बख्शीने डरते-डरते दुःखित चित्तसे कहा,—"चुप-चुप! इस दूसरे पिञ्जरेपर भी पैर रखो।"

यदि एक सांपमें विष न हो, तो वध्य व्यक्तिको दूसरे सांपसे कटवानेकी उस समय रिवाज थी, मुबारक यह जानता था। उसने अपना दूसरा पैर दूसरे पिञ्जरेपर रखा। साथ ही दूसरे महासर्पने भी उसे डंस लिया।

मुबारक उस समय विषकी ज्वालासे जर्जरित होकर नीला हो गया था। उसने जमीनपर घुटने टेक तथा हाथ जोड़-कर कहा,—"अल्लाह-अकबर! यदि कभी मैंने तुमसे दया पाने-

योग्य कोई काम किया हो, तो इस समय तुम दया करो।"

इसी प्रकार खुदाका ध्यान करते हुए विषसे जर्जरित मुगल-वीर मुबारकअलीने प्राण त्याग किया !

आठवां परिच्छेद ।

सब बराबर ।

रङ्गमहलमें तरह-तरहकी सभी खबरें आतीं ; सभी तरहकी खबरें जेबुन्निसा रखती ; वह नायब बादशाह थी । मुबारकका वध समाचार भी उसके पास पहुंचा ।

जेबुन्निसाको आशा थी, कि वह इस खबरसे बहुत खुश होगी ; किन्तु अचानक उसका ठीक उलटा हुआ । खबर पाते ही एकाएक उसकी आंखोंमें जल भर आया ; जिस सूखी आंखोंमें कभी जल आया न था उन आंखोंसे आंसू बहकर गालपर होते हुए जमीन-पर टपकने लगे । अन्तमें जब उसने देखा, कि उसे पुक्का फाड़कर रोनेकी इच्छा हो रही है, तब वह दरवाजा बन्दकर हाथी दांतके बने रत्नजड़ित पलंगपर लोटकर रोने लगी ।

शाहजादी ! हस्तिदन्तनिर्म्मित, रत्नदण्डभूषित पलंगपर सोकर भी तुम्हारी आंखोंका जल क्यों नहीं रुकता ? तुम यदि दिल्लीसे बाहर निकल किसी झोपड़ीमें प्रवेशकर देखती, तो समझ सकती, कि कितने ही आदमी चिथड़े पहन तथा जमीनपर सोकर भी किस तरह हंसते हैं ; तुम्हारी भांति कोई रोता नहीं ।

जेबुन्निसाको मालूम हुआ, कि उसने अपने सुखको आपही लात मारी है ; अपने पैरोंमें अपने हाथों कुल्हाड़ी मारी है । क्रमशः उसे मालूम होने लगा, कि सब स्त्रियां समान हैं । शाहजादियां भी

प्रेम करती हैं। जाने या बेजाने स्त्री शरीर धारण करनेसे उन्हें 'प्यार' रूपी पाप करना ही पड़ता है। जेबुन्निसा आप ही आप प्रश्न करने लगी,—"मैं उसे इतना प्यार करती थी, यह बात आजतक मैं क्यों जान न सकी ?" किसीने मानो उससे कह न दिया,—"तुम ऐश्वर्य्यके घमण्डमें फूली हुई थी; रूपके गर्वसे अन्धी थी। इन्द्रियके वशीभूत होकर तुम प्यारेको पहचान न सकी थी। तुम्हें उचित दण्ड मिला है; तुमपर किसीको दया करनी न चाहिये।"

किसीके कह न देनेपर भी उसके मनमें यह सब बातें आप ही आप उठने लगीं। साथ ही साथ यह भी मनमें उदय हुआ, कि धर्म्माधर्म्मका बदला यदि हो, उसके पापका यदि कोई दण्ड देने वाला हो, तो क्या वह शाहजादी समझकर जेबुन्निसाको माफ करेगा ? यह असम्भव है !

जेबुन्निसाके मन में डर हुआ। दुःख और भयसे जेबुन्निसाने अपने विश्वासी खोजा असीरुद्दीनको बुलवाया। उसके आनेपर उसने उससे पूछा—"सांपके काटनेसे मरे हुए मनुष्यकी क्या कोई दवा है ?"

असीरुद्दीनने कहा,—"मर जानेके बाद क्या दवा है ?"

जेबु०। कभी नहीं सुना ?

असी०। हातिममलने इस तरहकी चिकित्साकी थी। कानसे सुना था; किन्तु देखा न था।

जेबुन्निसाने एक लम्बी सांस ली। बोली—"हातिममलको पहचानता है ?"

असी०। जी हां।

जेबु०। वह कहां रहते हैं।

असी०। दिल्लीमें ही।

जेबु०। मकान देखा है ?

असी० । देखा है ।

जेबु० । इस समय जा सकता है ?

असी० । हुक्म होने होसे जा सकता हूं ।

जेबु० । आज मुबारक अली (गला कांपने लगा) सर्पदंशनसे मर गया है, जानता है ?

असी० । हां जानता हूं ।

जेबु० । जानता है, कि वह कहां दफनाया गया है ?

असी० । देखा नहीं है ; किन्तु जिस समाधिस्थानमें लाश दफनाई जाती हैं, उसे मै जानता हूं । नया कब्रस्तान पूछनेसे ही पता लग जायेगा ।

जेबु० । मैं तुझे दो सौ अशरफी देती हूं । एक सौ हातिमको देना और एक सौ खुद लेना । तू मुबारककी कब्र खोदकर उसको बाहर निकलवा तथा उसकी दवा-दारू कर उसे बचा । यदि वह बच जाये , तो उसे मेरे पास ले आना । अभी जा !

अशरफी लेकर खोजा असीरुद्दीन उसी वक्त चला गया ।

नवां परिच्छेद ।

मुबारक और माणिकलाल ।

एक बार और रङ्गमहलमें पत्थरकी चीजें बेचने जा माणिकलालने निर्म्मलकुमारीकी खोज-खबर ली । उसने इस बार भी पहलेजैसा चाभी-बन्द एक पत्थरका डिब्बा भेजा था । निर्म्मलने डिब्बा खोल कर देखा, कि उसमें वही दौत्यकार्य्य करनेवाला कबूतर था । निर्म्मलने उसे रख लिया । पीछे एक पत्रमें पहलेकी भांति अपना हाल-चाल लिख उस डिब्बेमें बन्दकर वापस किया । लिखा,— "सब कुशल है । तुम अब यहांसे चले जाओ । मैं पहले ही लिख

चुकी हूं, कि मैं बादशाहके साथ आऊंगी।"

माणिकलाल दुकान-दौरी उठा उदयपुरकी ओर रवाना हुआ। रात बीतनेमें उस समय थोड़ी ही देर थी। दिल्लीमें अनेक 'दरवाजे' हैं। किसी तरहका सन्देह होनेके डरसे माणिकलाल अजमेरी दरवाजेकी ओर न जा दूसरे ही दरवाजेकी ओर चला। इस राहकी बगलमें एक कब्रस्थान है। एक कब्रके पास दो आदमी खड़े थे। माणिकलाल और उसके आदमीको देख वह दोनो आदमी भाग निकले। माणिकलाल घोड़ेसे उतर वहां गया, जहां भागनेवाले दोनो आदमी खड़े थे। वहां उसने देखा, कि कब्रकी मट्टी खोद उन दोनोंने एक लाश निकाली है। माणिकलालने उस लाशको बड़े ध्यानसे उदयोन्मुख ऊषाके प्रकाशमें देखा। उसके बाद न जानें क्या समझ वह लाश अपने घोड़ेपर लाद तथा उसे सुफेद कपड़ेसे ढांक ले चला और स्वयं पैदल चलने लगा।

माणिकलाल दिल्ली-दरवाजेके बाहर आया। कुछ देर बाद जब सूर्य्य निकल आये, तब उस लाशको घोड़ेसे उतार उसने जङ्गलकी एक झाड़ीमें ला रखी और अपने सफरी बटुएसे एक गोली निकाल किसी अनुपानमें उसे खूब घसने लगा। पीछे, एक छुरीसे उस लाशमें जहां-तहां छेदकर उसमें दवा भर दी। जीभपर दवा रगड़ दी और आंखपर भी लेप कर दिया। दो दण्ड बाद फिर ऐसा ही किया। इस तरह तीन बार दवा लगानेके बाद उस मृत व्यक्तिने सांस ली। चौथी बार उसने आंख खोली; साथ ही उसे होश हुआ और बोलने-चालने लायक हो गया।

माणिकलालने थोड़ा सा दूध मंगवाया था। उसे मुबारकको पिलाया। दूध पी जब मुबारक स्वस्थ हुआ, तो उसे सब बातें स्मरण आईं। उसने माणिकलालसे पूछा,—"किसने मुझे बचाया? आपने?"

माणिकलालने कहा,—"हां।"

मुबारकने कहा,—"क्यों बचाया ? मैं आपको पहचान गया हूं। रूपनगरके पहाड़में आपसे मैंने युद्ध किया था। आपने मुझे हराया था।"

माणिक। मैं भी आपको पहचान गया हूं। आपकी ऐसी दशा क्यों हुई ?

मुबारक। यह कहनेका समय नहीं। समय आनेपर सब बताऊंगा। क्या आप उदयपुर जाते हैं ?

माणिक। हां।

मुबारक। मुझे भी साथ ले चलियेगा ? शायद आप समझते होंगे, कि मेरे दिल्ली लौटनेका मौका नहीं। क्योंकि मैं राजदण्डसे दण्डित हूं।

माणिक। जरूर ले चलूंगा ; किन्तु आप इस समय बहुत ही कमजोर हैं।

मुबारक। सन्ध्यातक मैं चलने-लायक हो जाऊंगा। आप क्या तबतक ठहर सकेंगे ?

माणिक। हां, इसमें क्या हर्ज है ?

मुबारकको माणिकलालने थोड़ा दूध और पिलाया। पासके गांवसे माणिकलाल एक टट्टू खरीद लाया और उसपर मुबारकको चढ़ा उदयपुर ले चला।

रास्ते में चलते-चलते एकान्तमें मुबारकने जेबुन्निसाकी सब बातें माणिकलालसे कहीं। माणिकलाल समझ गया, कि मुबारक जेबुन्निसाकी कोपानलमें ही भस्म हुआ है।

इधर असीरुद्दीन लौट आया और जेबुन्निसासे कहा, कि वह किसी तरह मुर्देको जिला न सका।

जेबुन्निसा इतसे तर बतर रूमालसे दोनों आंखें ढके हुए थी ;

असीरुद्दीनकी बात सुनते ही वह किसानोंकी लड़कियोंकी तरह जमीनपर शिर पटक-पटककर रोने लगी।

जो दुःख किसीसे प्रकाश किया नहीं जा सकता, वह बड़ा ही कष्टकर होता है। शाहजादीको ऐसा ही कष्ट हुआ। जेबुन्निसाने सोचा,—"या खुदा! मैं किसानकी लड़की क्यों न हुई?"

इसी समय कमरेके दरवाजेपर शोरोगुल सुनाई दिया। कोई कमरेमें आना चाहता था; किन्तु लौंडियां उसे भीतर आने न देती थीं। जेबुन्निसाने आवाज सुन अन्दाज किया, कि यह दरियाकी आवाज है। पहरेदारिनें उसे रोक न सकीं। दरिया पहरेदारिनोंको ठेल-ठाल कमरेमें घुस आई। उसके हाथमें तलवार थी। जेबुन्निसाको कतल करनेके लिये उसने तलवार उठाई; किन्तु एकाएक तलवार फेंक वह जेबुन्निसाके मुंहकी ओर ताकने लगी। "अहा! आंखें आंसुओंसे भरी हैं।"—यह कहती हुई वह जोर-जोरसे हंसने लगी। जेबुन्निसाने एक पहरेदारिनको बुला उसे पकड़नेका हुक्म दिया। पहरेदारिन उसे पकड़ न सकी। वह उलटे पैर दौड़ी। पहरेदारिनने पीछे दौड़ उसका कपड़ा पकड़ा। दरिया कपड़ा छोड़ नङ्गी भागी। वह उस समय बिलकुल पागलसी हो गई थी; क्योंकि उसने मुबारककी मृत्युका हाल सुन लिया था।

सातवां खण्ड।

पहला परिच्छेद।

युद्धकी तय्यारी।

राजसिंहके राज्यको ध्वंस करनेमें औरङ्गजेबको इस कारण देर हुई, कि इसके लिये उसे पूरा बन्दोबस्त करना पड़ा। दुर्य्योधन तथा युधिष्ठिरकी तरह उन्होंने ब्रह्मपुत्रसे लेकर वाह्लीक तथा काश्मीरसे लेकर केरलतकको कुल फौज इकट्ठी की। इस तैयारीको देखकर दिल्लीके अधिवासियोंका दिल दहल गया। दक्षिणके गोलकुण्डा और बीजापुरकी फौज, जो महाराष्ट्रोंसे युद्धकर बलवान हो गई थी, बादशाहके ज्येष्ठपुत्र शाह आलमके साथ शहर तथा गाओंको वीरान करती हुई उदयपुरकी ओर बढ़ी। बादशाहके द्वितीय पुत्र शाहआजमने बङ्गालके राजप्रतिनिधि तथा पूर्व्वभारतके असंख्य सिपाहियोंके साथ मेवाड़के पर्व्वतपर चढ़कर ललकारा। पञ्जाब, काबुल और काश्मीरके सिपाहियोंको लेकर तीसरा पुत्र अकबर शाह उदयपुरपर चढ़ दौड़ा। दिल्लीसे खुद औरङ्गजेब बादशाही फौजके साथ उदयपुरको मटियामेट करनेके लिये आगे बढ़े। समुद्रजैसे द्वीपको घेर लेता है, उसीतरह मुगल-फौजने उदयपुरको घेर लिया।

गरुड़ सांपोंके अनन्त दलको देखकर जितना घबराता है, राजसिंह मुगल-समुद्रकी अनन्त फौजको देखकर उतना ही घबराये। कुरुक्षेत्र-युद्धके बाद इतनी फौज शायद ही कभी इकट्ठा हुई हो, इतने

सिपाहियोंकी जरूरत चीन, फारिस या रूसके युद्धमें भी हुई न थी । औरङ्गजेबने जितनी फौज इस छोटेसे राज्यको ध्वंस करनेके लिये इकट्ठी की थी, केवल एकही वार इतनी फौजके एकत्र होनेका मौका हुआ था । जिस समय फारिसका राज्य बढ़ा-चढ़ा था, उस समय फारिसके सुलतानशेर पचास लाख सिपाहियोंके साथ क्षुद्र ग्रीक राज्य पर चढ़ गये थे । थरमापलीके मैदानमें सालमिस तथा प्लेवियरने इनको खूब खबर ली । और यह पायजामा खसकाते फारिस भागे । ऐसी घटना पृथिवीमें यह केवल दूसरी बार हुई । लाखों सिपाहियोंके साथ भारतपतिने—शेरसे भी दुगना बल रखने वाले बादशाहने—राजपूतानेके एक छोटे राज्यपर चढ़ाई की ! राजसिंहने इनकी जिस तरह खबर ली, उसका हाल हम आगे चलकर लिखेंगे।

वर्त्तमान ढङ्गकी युद्ध विद्या युरोपकी विद्या है । एशिया खण्ड ; विशेषत: भारतवर्षमें इसका कभी विकाश नहीं हुआ । जिन वीरोंकी प्रशंसा पुराण-इतिहासमें लिखी है, वह तीरका निशाना मारना जानते थे तथा कभी कभी मुद्‌गर-लाठी आदि से भी युद्ध करते थे । अवश्य तलवार चलानेमें कोई भी भारतवासियोंकी बराबरी कर न सकता । सम्भव है, कि इतिहास-लेखक ब्राह्मण, युद्धसे सरोकार न रखते थे ; इसीलिये श्री रामचन्द्र तथा अर्जुन आदि प्रसिद्ध सेनापतियोंकी युद्ध-विद्याका यथोचित परिचय इतिहासोंमें नहीं मिलता। अशोक, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, शक तथा शिलादित्यकी युद्ध-विद्या का परिचय किसी भी पुस्तकमें नहीं मिलता । प्रसिद्ध मुसलमान वीरोंकी युद्धविद्याका परिचय न तो संस्कृत पुस्तकोंमें और न फारसी, अरबी तथा उर्दूकी पुस्तकोंमें ही मिलता है । शायद फारसी-उर्दू आदिके लेखक मुल्ला, पीर या मुरशिदोंमें से होते होंगे! भला उनका युद्ध-विद्यासे क्या सरोकार ? शायद इसीलिये संस्कृत लेखकोंने सब धान बाईस पसेरी कर दिया होगा । अकबरके समय-

से इतिहास लिखनेवालोंमें कुछ रद्दोबदल हुई है ; क्योंकि उस समयके इतिहास-लेखक अबुल-फजल, मुल्ला दोप्याजा आदि युद्धमें शामिल हुए थे ; इसीलिये इन इतिहास-लेखकोंको लेखनीसे युद्ध विद्याका थोड़ा-बहुत परिचय मिलता है । अकबर, शिवाजी, अह-मदशाह अबदाली, हैदरअली तथा हरीसिंह आदिकी युद्ध-विद्याका परिचय उस समयके इतिहास-लेखक थोड़ा बहुत दे गये हैं । जिन वीरोंने भारतवर्षका इतिहास उज्वल कर रखा है, राजसिंह उनमें किसीसे कम नहीं । युरोपमें भी ऐसे युद्ध-विद्या-विशारद न तो देखनेमें आये और दिखाई पड़ते हैं । इने-गिने सिपाहियोंकी-सहायतासे और किसी वीरने ऐसी वीरता दिखाई नहीं थी ।

पाठक ! अब जरा राजसिंहकी युद्ध-विद्याका परिचय सुनिये । चारो दिशासे औरङ्गजेबकी फौजको उदयपुर चढ़ाई करते देख एक रणपण्डितको जैसी व्यवस्था करनी चाहिये थी, राजसिंहने भी वैसा ही बन्दोबस्त किया था । पर्व्वतके नीचेके मैदानोंको छोड़कर राज-सिंहने अपने सिपाहियोंको पर्व्वतकी चोटीपर एकत्र किया । उन्होंने अपने सिपाहियोंके तीन दल बनाये । एक दलको अपने ज्येष्ठ पुत्र जयसिंहकी अधीनतामें पर्व्वतकी चोटीपर भेजा । दूसरे दलको छोटे पुत्र भीमसिंहकी अधीनतामें पश्चिमकी ओर रखा । एक भागकी राह इसलिये खुली रखी, कि समयानुसार इधरसे राजपूतोंसे साहाय्य पानेकी उन्हें आशा थी । और स्वयं राणा राजसिंह तीसरे दलके सेनापति बन पूर्व्वकी ओर नयन नाम्नी गुफामें जा छिपे ।

आजमशाह फौज लेकर एक ऐसे पहाड़की दरीमें जा फंसा, जहांसे आगे बढ़ना उसके लिये असम्भव था । वहांसे पहाड़पर चढ़नेकी भी कोई राह न थी । भण्डारघर बन्द हो जानेपर जैसे कुत्ते घरका किवाड़ खटखटाते हैं, वैसे ही शाह आजम पहाड़ी द्वार खटखटाने लगा ।

अकबर अजमेरमें औरङ्गजेबसे आ मिला। पिता-पुत्र मिलकर पहाड़की ओर जिधर तीन राहें थीं, उधर ही गये। यह तीनों राहें ऊंचे-ऊंचे पहाड़ोंके बीचसे थे। ऐसी राहोंको "पास" कहते हैं। एकका नाम था दोबारी, दूसरेका दयेलवार और तीसरेका नयन। दोबारीमें पहुंचकर औरङ्गजेबने शाहजादा अकबरसे कहा,—"पचास हजार सिपाही लेकर आगे बढ़ो।" स्वयं तालाबके किनारे आराम करनेके लिये ठहर गये। तालाबके किनारे खेमे-कनातोंका नया शहर बस गया।

शाहजादा अकबर पहाड़ी राहसे उदयपुर आ पहुंचा। किसीने इसका सामना न किया। पहले, बागीचे आदिको सुनसान देखकर वह बहुत ही हैरान हुआ; अन्तमें उसने समझा, कि राजपूत डरकर भाग गये हैं। शाहजादेने एक मैदानमें तम्बू तनवाया तथा सिपाहियोंको आनन्द मनानेका हुक्म दिया। छावनीमें नाच-रङ्ग होने लगा। जिस समय बादशाही फौज नाच-रङ्ग और खेल-तमाशोंमें मस्त थी, ठीक उसी समय एकाएक शेरकी तरह राजपूत फौज उसपर टूट पड़ी। यह फौज कुंवर जयसिंहकी अधीनतामें थी। एक भी मुगल-सिपाही जीता न बचा; केवल शाहजादा अकबर चार साथियों सहित जान बचाकर गुजरातकी ओर भाग गया।

मुअज्जम शाह, जिसे शाह आलम भी कहते हैं, दक्षिणसे सिपाहियोंको एकत्रकर हैदराबाद होता हुआ पहाड़के पश्चिम ओर गया। उस ओरकी पहाड़ी राहका नाम गयाराव है। वह उसी राहसे कांकरौलीके पास पहुंचा। उसने कांकरौलीमें पहुंचकर देखा, कि यहां उसे पहाड़से उतरनेकी कोई राह नहीं। राह बनवाकर आगे बढ़नेमें बहुतसी कठिनाइयां मालूम पड़ीं। साथ ही यह डर भी था, कि कहीं राजपूत पीछेकी राह बन्द न कर दें; रसद आनेकी राह रुक जाये तथा सिपाही भूखे न मर जायें। जो पक्के सेना-

पति हैं, उन्हें मालूम है, कि सम्मुख संग्राममें रसद रोकनेसे शत्रुओं-को बहुत ही अधिक क्षति पहुंचती है। जो पक्के सेनापति होते हैं, वह खान-पानका पूरा इन्तजाम रखते हैं। इतिहास जानने वालोंको भलीभांति मालूम है, कि खान-पानका अच्छा इन्तजाम न रहनेके कारण ही सिखोंको हारना पड़ा था। सर वार्टल फियरने एक बार कहा था, कि इस खयालसे बङ्गालियोंसे घृणा न करनी चाहिये, कि वह युद्ध करना नहीं जानते। उनमें बड़ा गुण यह है, कि वह दिन भरमें कुल रसद छिपा सकते हैं।

शाह आलम पक्का सेनापति था; इसलिये वह आगे न बढ़ा।

राजसिंहको व्यवस्थाके कारण बङ्गाल तथा दक्षिणके सिपाही मुंह ताकते ही रह गये; उन्हें हाथमें अस्त्र लेनेका मौकातक न मिला। मुलतानी सिपाही राजसिंहके आक्रमणके सामने ठहर न सके; तितर-बितर हो भाग निकले। बाकी रह गये शाहंशाह आलमगीर

दूसरा परिच्छेद ।

नयनोंकी कटारी भी चली थी!

शाहजादा अकबरको आगे बढ़नेका हुक्म दे औरङ्गजेबने उदय-सागरके किनारे ठहरना निश्चय किया। तम्बू ताने गये; बाजार बसा; माना उदयसागरके किनारे दूसरी दिल्ली बस गई। इस नई छावनी तथा दिल्लीमें केवल यही अन्तर था, कि दिल्लीमें पक्के मकान आसमानसे बातें करते थे; किन्तु छावनीमें बेशकीमत तम्बूओंकी भरमार थी। हरेक तम्बूके किनारे कामदार झण्डा फहरा रहा था। छावनीके बीचो-बीच शाहंशाह औरङ्गजेबका एक आलीशान

खेमा खड़ा था। इस खेमेकी लम्बाई पांच कोस और चौड़ाई दो कोस की थी ; यह खेमा कामदार मखमलका था। इसी खेमेमें दरबारे-आम, दरबारे-खास, गुसलखाना रङ्गमहल आदि थे। महल-को चारो ओर सन्त्री पहरा दे रहे थे। महलके कमरे चित्र आदि-से सजे हुए थे। दरबारी-खेमेकी बहार कुछ और ही थी। जिधर निगाह फेरिये, उधर ही हीरे, मोती, चांदी, सोनेकी भरमार थी। मोतियोंकी झालरें चारो ओर लटक रही थीं। सोने-चांदीकी कुर-सियोंमें जवाहरात जड़े हुए थे। एक ओर तख्ते-ताऊसके नमूनेका सिंहासन रखा हुआ था। महल तथा दरबारके बाहर तातारी लौंडियोंका पहरा था।

शाही तम्बूके बाद अमीरोंके तम्बू तने हुए थे। इन खेमोंकी संख्या भी कम न थी। कई कोसतक इन खेमोंकी कतार फैली हुई थी। इन खेमोंमें कोई लाल, कोई हरा, कोई पीला, भांति-भांति के रङ्गके थे। इन खेमोंके बाहर राहकी दोनो ओर दुकानोंकी बहार थी। छावनीकी शोभा देखकर लोग दङ्ग रह जाते थे।

बादशाही सफरके समय बेगमें साथ जाया करती थीं। अबके भी बेगमें साथ थीं। जोधपुरी, उदयपुरी, जेबुन्निसा, सब ही थीं। जोधपुरीके साथ निर्म्मल भी आई थी। दिल्लीमें जिस तरह बेगमोंका अलग-अलग महल था ; यहां भी वैसा ही प्रबन्ध था।

रातको औरङ्गजेब जोधपुरीके महलमें आकर बातें कर रहे थे। निर्म्मल भी उस समय वहां थी। बादशाहने उसका नाम 'इमली बेगम' रखा था। बादशाहने जोशमें आकर निर्म्मलसे पूछा,—"तुम मेरी हो या राजपूतोंकी?" इमली बेगम अर्थात् निर्म्मलने कहा, "जहांपनाह दुनियाका विचार करते हैं ; आप ही इसका भी फैसला कर लीजिये।"

औरङ्गजेब। जब तुम राजपूतकी बेटी राजपूतकी स्त्री तथा राज-

धूर्तिनकी सखी हो, तब तुम कैसे हमारी हो सकती हो? तुम राजपूतों होकी हो।

निर्म्मल। जहांपनाह! यह क्या ठीक फैसला हुआ? जैसे मैं राजपूतकी कन्या हूं, वैसे ही जोधपुरी बेगम साहबा भी तो राजपूतकी कन्या हैं। आपकी दादी, परदादी भी तो राजपूतोंकी ही कन्या थीं। क्या वह मुगल-बादशाहोंकी भलाई नहीं चाहती थीं?

औरङ्गजेब। तुमने जिनका नाम लिया, वह मुगल-बादशाहकी बेगमें थीं, किन्तु तुम राजपूतकी स्त्री हो।

निर्म्मल। (मुस्कराकर) क्या मैं शाहंशाह आलमगीरकी इमली बेगम नहीं हूं?

औरङ्गजेब। नहीं, तुम रूपनगरवालीकी सखी हो!

निर्म्मल। जोधपुरी बेगम भी रूपनगरवालीकी सखी हैं।

औरङ्गजेब। तब तो इस नाते तुम भी मेरी ही हो।

निर्म्मल। जैसा आप समझें।

औरङ्गजेब। मैं तुमसे एक काम लेना चाहता हूं। उससे मेरा बहुत-कुछ फायदा और राजसिंहका नुकसान है; क्या तुम उसे कर सकोगी?

निर्म्मल। पहले यह बताइये, कि मुझे क्या काम करना पड़ेगा, तब मैं बताऊं, कि मुझसे वह काम हो सकेगा या नहीं। मैं किसी देवता या ब्राह्मणका अनिष्ट न कर सकूंगी।

औरङ्गजेब। मैं ऐसा काम तुमसे कराऊंगा भी नहीं। मैं शीघ्र ही उदयपुरपर चढ़ाई करूंगा। राजसिंहकी राजधानीपर मुगलोंका झण्डा गाड़ूंगा; किन्तु मैं कह नहीं सकता, कि राजसिंहका महल हाथ लगनेपर भी रूपनगरवाली मेरे हाथ आयेगी या नहीं। क्या रूपनगरवालीको हस्तगत करनेमें तुम मेरी सहायता करोगी?

निर्म्मल । यदि आप राजधानी उदयपुरमें मुगलोंका झण्डा गाड़ सकें, तो गङ्गाजीकी कसम खाकर कहती हूं, कि मैं रूपनगर-वालीको लाकर आपके हवाले कर दूंगी ।

औरङ्गजेब । मैं तुम्हारे कथनपर विश्वास करता हूं ; क्योंकि तुम्हें भलीभांति मालूम है, कि जो मेरे सामने झूठ बोलता है, मैं उसकी बोटी-बोटी कटवाकर कुत्तोंको खिलवा देता हूं ।

निर्म्मल । इसका फैसला हो चुका है, कि आपमें यह शक्ति है ; किन्तु मैं इस बातकी शपथ करती हूं, कि मैं आपको धोखा न दूंगी ! हां, मैं यह नहीं कह सकती, कि महल आपके हाथ लगनेपर वह जीती मिलेगी या नहीं । राजपूत स्त्रियोंका कायदा है, कि वह शत्रु-के कब्जेमें जानेसे पहले या तो चितारोहण करती हैं और नहीं तो विष खा लेती हैं । मुझे विश्वास है, कि वह जीती न मिलेगी ; इसीलिये मैंने कसम खाई है । मैं चञ्चलकुमारीका अनिष्ट कर नहीं सकती ।

औरङ्गजेब । इसमें अनिष्टकी बात ही क्या है ? मैं उसे बेगम बनाऊंगा ।

निर्म्मल जवाब देना ही चाहती थी, कि एक खोजेने आकर कहा,- "पेशकार दरबारमें हाजिर हैं ; कोई जरूरी अरजी पेश करेंगे ।" औरङ्गजेब फौरन दरबारमें चले गये । पेशकारने अरजी पेश की । औरङ्गजेबने सुना, कि शाहजादा अकबरके पचास हजार सिपाही मारे गये तथा बचे-बचाये न जाने कहां भाग गये ।

औरङ्गजेबने फौरन कूच करनेका हुक्म दिया ।

अकबरकी हारकी खबर रङ्गमहलमें पहुंची । निर्म्मलने प्रसन्न होकर यह खबर जोधपुरीको दी तथा वह दोनो आनन्द मनाने लगीं । अभी निर्म्मल आनन्द मना ही रही थी, कि बादशाहने उसे बुलवा भेजा ।

निर्म्मलके वहां जानेपर बादशाहने उससे कहा,—"अब मैंने आगे बढ़नेका इरादा किया है; युद्धकी सम्भावना है; क्या तुम उदयपुर जाओगी ?"

निर्म्मल। हां; किन्तु मैं फौजके साथ ही रहना चाहती हूं। सफरमें, जहांसे मेरे लिये जाना सुगम होगा; मैं वहींसे चली जाऊंगी।

औरङ्गजेबने कुछ दुःखित होकर कहा,—"क्यों जाओगी ?"

निर्म्मल। शाहंशाह बादशाहकी आज्ञासे।

औरङ्गजेबने मुस्कराकर कहा,—"यदि मैं जाने न दूं, तो क्या तुम हमेशाके लिये मेरे रङ्गमहलमें रहने में राजी हो ?"

निर्म्मलने हाथ जोड़कर कहा,—"हुजूर! मेरे पतिदेव जीवित हैं।"

औरङ्गजेबने कुछ सोचकर कहा,—"यदि तुम इस्लामधर्म्म कुबूल करो, यदि तुम उस पतिको छोड़ दो, तो उदयपुरीसे भी तुम्हारा रुतबा बढ़ा दूंगा।"

निर्म्मलने मुस्कराते हुए हाथ जोड़कर कहा,—"जहांपनाह! ऐसा होना असम्भव है।"

औरङ्गजेब। असम्भव क्यों ? सैकड़ों राजपूत राजकन्याएं तो हमारे कुटुम्बमें आई हैं।

निर्म्मल। उनमेंसे कोई भी अपने पतिको छोड़कर नहीं आई थीं।

औरङ्गजेब। यदि तुम्हारा पति न होता, तो तुम मेरे यहां रहतीं ?

निर्म्मल। हुजूर! आप यह बात क्यों पूछते हैं ?

औरङ्गजेब। मुझे कहते लज्जा आती है। मैंने आजतक ऐसी बात किसीसे नहीं कही। मैं बढ़ा हो गया सही; किन्तु अबतक मैंने

अपना दिल किसीको दिया न था। हां, इस बुढ़ापेमें तुम्हें दिल दे बैठा हूं ; इसीलिये यदि तुमसे यह सुनूं, कि यदि तुम्हारा पति न रहे, तो तुम्हें बेगम बननेमें इनकार न होगा, तो मेरा सूखा कलेजा-मेरा जला दिल, फिर हरा हो जाये।

निर्म्मलने औरङ्गजेबकी बातपर विश्वास किया। क्योंकि वह विश्वास करनेके योग्य था ; अतः वह औरङ्गजेबके लिये दुःखित होकर बोली,—"जहांपनाह! लौंडीसे ऐसा क्या काम बना है, जिससे आप जैसे बुजुर्गने अपना दिल मुझपर न्योछावर किया?

औरङ्गजेब। मैं कह नहीं सकता। इसमें सन्देह नहीं, कि तुम खूबसूरत हो ; पर मेरी उम्र सौन्दर्य्यपर मोहित होनेकी अब नहीं, तुम्हारी खूबसूरती भी उदयपुरीसे अधिक नहीं। हां सत्य बोलनेमें तुम्हारीजैसी निर्भय रमणी मैंने आजतक नहीं देखी। जो हो ; आलमगीर बादशाह तुम्हारे सिवा और कभी किसीपर मोहित नहीं हुआ।

निर्म्मल। बादशाह सलामत! मुझसे एक दिन रूपनगरकी राजकन्याने पूछा था, कि तुम किससे व्याह करना चाहती हो? मैंने कहा था,—"आलमगीर बादशाहसे।" उन्होंने मुझसे पूछा—"क्यों?" मैंने कहा,—"बचपनमें मैंने शेर पाला था ; उससे आज्ञानुसार काम लेनेकी चेष्टा करती थी। यदि मैं बादशाहको अपने वशमें ला सकी, तो मेरे दिलमें वही आनन्द होगा।" यदि मेरी किसमत खोटी न होती, तो विवाहसे पहले ही मुझे आपको अवलोकन करनेका सुअवसर मिलता। मैंने जिस दरिद्रको अपना पति बनाया है, अब वही मेरा देवता है। अब मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये।

औरङ्गजेबने ठण्डी सांस भरकर कहा,—"दुनियाके बादशाहको भी सुख नसीब नहीं। पृथिवीमें मैंने केवल तुम्हें दिल दिया था ; किन्तु तुम्हें भोग करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त नहीं हुआ। मैं तुम्हें चाहता

हूं; इसलिये तुम्हारी इच्छाके विरुद्ध कोई काम न करूंगा। तुम जा सकती हो। मेरी यही विनती है, कि तुम मुझे याद रखना। यदि कभी मुझसे किसी तरहके उपकारकी सम्भावना हो, तो मुझे खबर देना। मैं तुम्हारी इच्छा दिलोजानसे पूरी करूंगा।

निर्म्मलने बादशाहको सलामकर कहा,—"मैं केवल एक प्रार्थना करती हूं; जब दोनों दलोंकी भलाईके लिये मैं सन्धिकी बात छेड़ूंगी, तब मेरी बातपर ध्यान दीजियेगा।"

औरङ्गजेबने कहा,—"इसका विचार उसी समय किया जायेगा।"

निर्म्मलने कबूतरोंको दिखाकर कहा,—"यह कबूतर सिखाये हुए हैं। इन्हें अपने पास रखिये। जब मुझे याद कीजियेगा, तब इनमेंसे एकको उड़ा दीजियेगा। इसी कबूतर द्वारा मैं आपके पत्र-का जवाब भेज दूंगी। मैं इस समय आपकी फौजके साथ रहूंगी। बेगम साहबाको कह दीजिये, कि जब मैं जाना चाहूं, तो वह मुझे चले जानेकी आज्ञा दें।"

इस बातचीतके बाद औरङ्गजेब रङ्गमहलसे बाहर गये तथा आगे बढ़नेका प्रबन्ध करने लगे।

औरङ्गजेब मन ही मन बहुत ही दुखी हुए। औरङ्गजेब ऐसा साहस किसीमें नहीं देखा था। मीठी-मीठी बातें करनेमें कोई स्त्री निर्म्मलकी बराबरी कर नहीं सकती। यदि कोई राजा—शिवाजी वा राजसिंह, यदि कोई सेनापति—दिल्लीका या बाहरका, यदि कोई शाहजादा आजम या अकबर इस साहसके साथ सभी बात कहता तो औरङ्गजेब क्रोधसे आगबबूला हो जाते। किन्तु अकेली सुन्दरी युवतीका साहस औरङ्गजेबको भी भला मालूम होता था। बूढ़ेपर कन्दर्पका जितना अत्याचार होना सम्भव था, औरङ्गजेबपर उतना अत्याचार हुआ था। औरङ्गजेब जवान प्रेमियोंकी तरह

विच्छेद—शोकसे शोकाकुल न हुए; हां कुछ उदास अवश्य हुए। औरङ्गजेब मोम न होने पर भी बिल्कुल पत्थर न थे।

तीसरा परिच्छेद।

बादशाह पर आफत।

पौ फटते ही बादशाही फौज आगे बढ़ी; सफरमैना पलटन राह साफ करती चली। उसके साथ फावड़ा-गड़ांसा आदि हथि-यार थे। वह वृक्ष काटती तथा गढ़े पाटती हुई चली। तोपें बैल-गाड़ियोंपर लदी हुई थीं; साथ-साथ पलटनें थीं। फौज और गाड़ियोंकी अधिकताके कारण उड़ती हुई गर्दसे अन्धेरा हो गया था। बड़ी-बड़ी तोपोंसे लदी हुई गाड़ियोंकी कतार देखकर दर्शकोंका हृदय कांप उठता था। तोपोंके पीछे खजानेकी रक्षा करनेवाले सिपाहियोंकी श्रेणी थी। औरंगजेब किसीका विश्वास न करते इसीलिये शाही खजाना साथ रखते थे। औरङ्गजेबकी प्रधान नीति थी, किसीका विश्वास न करना। अबके दिल्लीसे रवाना होनेके बाद औरङ्गजेब फिर दिल्ली न जा सके। दश वर्षों तक दक्षिणमें युद्धकर वह पृथिवीसे सदा के लिये कूच कर गये।

शाही खजानेके पीछे शाही दफ़्तरखाना आगे बढ़ रहा था। गाड़ी, हाथी और ऊंटों पर केवल बही-खाते सजे हुए थे। इस तरहसे एकके बाद दूसरी फौजकी श्रेणी आगे बढ़ रही थी। इन श्रेणियोंके पीछे गंगाजलके कलशोंसे लदे हुए ऊंटोंकी श्रेणी थी। गंगाजलको बादशाह पिया करते थे; इसीलिये गंगाजल साथ रखते थे। इन ऊंटोंकी कतारोंके पीछे रसद—आटा, चावल, दाल

थी, मसाला चीनी, तथा मुर्गी आदि तथा चौपाये जीवित जानवर थे। साथ-साथ बावर्चियोंकी कतार थी। बावर्चियोंके बाद तोशाखाना-लिवास, पोशाक, जवाहरातकी भरमार थी। इसके बाद अगणित रिसाले थे।

इस तरह सिपाहियोंका पहला भाग चल रहा था। दूसरे भागमें बादशाह खुद विराजमान थे। बादशाहके सामने ऊंट तथा हाथियोंपर लोहबान आदि सुगन्धित द्रव्य जलाये जा रहे थे। सुगन्धि कोसोंतक फैल रही थी। इसके पीछे खास आदमियोंकी पलटनें थीं। सुन्दर सजे हुए घोड़ोंपर सड़कके दोनो किनारे कतार बांधे अहदी सिपाही आगे बढ़ रहे थे। बीचमें हीरे मोतियोंसे सजे हुए एक बड़े घोड़ेपर बादशाह सलामत सवार थे। आपके सिरपर मोतियोंका झालरदार छत्र तना था। बादशाहके पीछे सिपाहियों-की कतार थी। इस कतारके पीछे बेगमोंकी सवारी; तद्-पश्चात फिर सिपाहियोंकी कतार; इसके बाद दिल्लीकेसौदागरों तथा अमीरोंकी श्रेणियां थीं। बेगमें कोई तो हाथीपर और कोई पालकी पर थीं। मृगनयनियोंकी हथियारसी तिरछी कटाक्षोंसे हजारों घायल होते थे। हजारों सुन्दरियां हाथियों पर बड़े ठाठ-बाटसे बैठी थीं; पालकियोंमें जो सुन्दरियां थीं, उनकी बहार अजीब थी। पालकीमें मुरस्सा चद्दर तथा चद्दरके बाहर मखमली गिलाफ था। मखमलपर मोतियोंकी झालरें अजीब शोभा दे रही थीं। जोधपुरी, उदयपुरी और जेबुन्निसा हाथियोंपर थीं। उदयपुरी बहुत प्रसन्न थी और जोधपुरी कुछ दुःखित। निर्मल दिलगीमें समय व्यतीत कर रही थी। जेबुन्निसा मुरझाई हुई बेल तथा कुम्हलाए हुए फूलकी तरह दिखाई देती थी। जेबुन्निसा सोच रही थी, कि क्या इन हथियारोंमें यह ताब नहीं, कि वह मेरी जान ले लें?

इन मनमोहिनी सुन्दरियोंके पीछे घोड़ों पर सवार कुटुम्बके अन्यान्य लोग तथा दासियां थीं। सभीकी पीठपर नागिनसी लम्बी वेणी भूल रही थीं। सभी के ओठ लाल थे! तीखे कटाक्ष-और गहनोंसे सभी भरी पूरी थीं। यह अश्वारोहिणी सेना भी लोक-मोहिनी थी। इनके पीछे गोलन्दाज सेना थी; और इसके साथ छोटी-छोटी तोपें थीं। बादशाहने शायद सोचा होगा, कि काम नियोंके कमनीय कटाक्षके सामने बड़ी तोपकी क्या जरूरत है!

तृतीय भागमें पैदल सेना थी। सबके बाद दास-दासियां, मजदूर, नर्त्तकी प्रभृति तथा खाली रथबहली आदि थीं।

जिस वेगसे सावन-भादोंकी गङ्गा तटस्थ गांवोंको डुबोनेके लिये तेजीसे बढ़ती है, उसी वेगसे, बल्कि उससे भी तेजीसे मुगलवाहिनी राजसिंहका राज्य डुबोनेके लिये आगे बढ़ रही थी।

किन्तु अचानक एक रुकावट पड़ी; जिस राहसे शाहजादा अकबर सेना लेकर गया था, औरङ्गजेब भी उसी राह ससैन्य जाते थे। उनकी इच्छा यह थी, कि वह अकबरकी सेनाके साथ अपनी सेना मिला लें और राहमें यदि कहीं कुमार जयसिंहकी सेना मिले, तो उसे वह पीस डालें और इसकेबाद दोनों मिलकर उदयपुर लूटें। किन्तु पार्व्वतीय पथमें घुसनेसे पहले ही उन्होंने देखा, कि राजसिंह सेना सहित पर्व्वतकी एक चोटी पर बैठे हुए हैं। यह चोटी राहके बगलमें थी। राजसिंह पहले नयन नामक पहाड़ी राहका रोके हुए थे; पर जब उन्होंने दूत द्वारा सुना, कि अकबर आ रहा है, तब अपने रणपाण्डित्यसे मांस-भोजी पक्षीकी भांति ऊपर कहे हुए पर्व्वतीय पथकी बगलमें आ डटे। मुगलोंने देखा, कि राजसिंहकी इस अद्भुत रण-चातुरीसे बचना मुश्किल है; क्योंकि जिस राहसे मुगल जा रहे थे, उस राहसे यदि वह आगे बढ़े, तो राजसिंह बगलमें ही छूट जाते हैं। शत्रु-सेनाको बगलमें छोड़ जाना कम खतरेकी बात नहीं।

बगलसे जो सेना आक्रमण करती है, वह निश्चय ही जयी होती है। कई युद्धोंमें यह उदाहरण देखा गया है। औरंगजेब इस युद्धके ढंग-को खूब जानते थे। वह यह भी जानते थे, कि यदि बगलवाली सेनासे लड़ना हो, तो जरा पीछे हट तथा विपक्षी सेनाके सामने आकर युद्ध करना चाहिये। इस पहाड़ी राहमें इस भारी सेनाको फिराने व घुमानेके लिये जगह भी नहीं ; समय भी नहीं ; क्योंकि सेनाका मुंह घुमाते-घुमाते राजसिंह पहाड़से उतर हमारी सेनाको दो खण्डोंमें बांट देंगे। ऐसे युद्धके लिये साहस करना उचित नहीं। उदयपुर जानेके लिये कोई और राह ढूंढ़नेकी सलाह हुई। औरङ्ग-जेबकी आज्ञासे बहुतसे लोग राह ढूंढ़ने निकले। औरङ्गजेबने निर्मल-कुमारीसे पुछवाया ; किन्तु उसने कहला भेजा, कि मैं पर्दानशीन स्त्री हूं ; इससे मुझे राह-बाटकी बात मालूम नहीं। किन्तु थोड़ी देर बाद समाचार मिला, कि उदयपुर जानेके लिये एक और राह है। एक मुगल सौदागर मिला है, वह राह दिखा देगा। एक मन-सबदार यह राह देख आया है। वह एक दर्रा है ; बड़ी ही सङ्कीर्ण राह है। सीधी है, इससे वह जल्द तय की जा सकती है। उधर कोई राजपूत दिखाई नहीं देता। जिस मुगलने यह खबर दी है, वह कहता है, कि इधर कोई राजपूत-फौज नहीं।

औरंगजेबने सोचकर कहा,—"राजपूत दिखाई नहीं देते ; किन्तु छिपे हो सकते हैं।"

बख्त खां नामक जो सिपाही राह देख आया था, उसने कहा, कि जिस मुगलने राह दिखाई थी, उसे मैंने पहाड़पर यह खबर लेनेके लिये भेजा है, कि यदि राजपूत फौज ऊपर हो तो, वह हमें इशारा कर देगा।

औरंगजेबने पूछा,—"वह क्या हमारा सिपाही है ?"

बख्त खां। नहीं, वह एक सौदागर है, उदयपुर शाल बेचने

गया था। वहांसे छावनीमें वे चले आया है।

औरंगजेब। अच्छा, तब उसी राहसे फौज ले चलो।

बादशाहके हुक्मसे फौज फिरी; क्योंकि कुछ दूर आगे बढ़नेके बाद ही पहाड़ी खोहमें घुसना होता है। इसमें भी बड़ा डर है—तब पिञ्जरेमें बन्द शेर और किस तरफ जाये? जिस प्रकार आगे पीछे मुगल-सेना आई थी, उससे उसकी रक्षा होनी मुश्किल थी। जो हिस्सा आगे था, वह पीछे पड़ा; जो पीछे था वह आगे। सेनाका पिछला हिस्सा आगे-आगे चला। बादशाहने हुक्म दिया, कि तम्बू, अन्यान्य चीजें तथा ऐरे-गैरे मनुष्य उदयसागरकी राह जायें। वह लोग सेनाके पीछे आयेंगे। ऐसा ही हुआ। औरंगजेब स्वयं पैदल सिपाही, छोटी-छोटी तोपें तथा गोलन्दाज सेना लेकर पहाड़ी खोहसे चले। आगे-आगे बख्‌त खां था।

इस तरह शिकार हाथसे जाते देखकर राजसिंह शेरकी भांति पहाड़से उतर मुगल सेनाके बीचोबीच आ धमके। मुगल-सेना दो हिस्सोंमें ऐसी बंट गई, जैसे छुरी लगनेसे फूलकी माला कट जाती है। एक हिस्सा औरङ्गजेबके साथ खोहमें घुस गया; किन्तु पिछला हिस्सा पहले की राह होकर, यानी राजसिंहकी सेनाके सामने रहा।

मुगलोंपर विपद पड़ी। जहां मुगल-बादशाहकी बेगमें तथा अन्यान्य मुगल औरतें थीं, ठीक वहीं राजसिंहकी सेना उतरी। राजसिंहकी सेनाको आमने-सामने देखकर मुगल-बेगमें और शाहजादियां बेतरह घबराईं। यहां जरा भी लड़ाई न हुई। बेगमोंके पहरेपर जो अहदी थे, वह इस डरसे, कि कहीं बेगमोंको चोट न लग जाये, अस्त्र चला न सके। राजपूतोंने बिना लड़ाई ही अहदियोंको कैद कर लिया; असंख्य बेगमें, शाहजादियां तथा दासियां बिना लड़ाई-भिड़ाईके ही राजसिंहकी बन्दिनी हुईं

माणिकलाल सदा राजसिंहके साथ रहता ; वह राजसिंहका, बड़ा ही प्रिय पात्र था। माणिकलालने हाथ जोड़कर राजसिंहसे कहा,— "महाराणा साहब ! इन बिल्लियोंका इस समय क्या किया जाये ? यदि आज्ञा दें, तो इन्हें उदयपुर दही-दूध खानेके लिये भेज दूं"

राजसिंहने हंसकर कहा,—"इतना दही-दूध उदयपुरमें कहां मिलेगा ? सुनते हैं, कि दिल्लीकी बिल्लियोंका पेट मोटा होता है । केवल उदयपुरीको महारानी चञ्चलकुमारीके पास भेज दो । उन्होंने इसके लिये मुझसे विशेष अनुरोध किया है । और सब औरंगजेबकी चीज हैं, उसीके पास भेज दो ।"

माणिकलालने हाथ जोड़कर कहा,—"लूटकी चीजें सिपाहियोंको भी कुछ-कुछ मिलती हैं ।"

राजसिंह हंसते-हंसते बोले,—"यदि तुम्हें इनमेंसे किसीकी जरूरत हो, तो ले सकते हो। पर याद रखना, मुसलमानिनें हिन्दुओंके छूने योग्य नहीं होतीं ।"

माणिक । नाचना-गाना वह खूब जानती हैं ।

राज० । नाच-गानमें मन लगानेसे क्या कोई राजपूत तुम्हारी भांति वीरता दिखा सकता है ? सबको छोड़ दो । सिर्फ उदयपुरीको उदयपुर भेज दो ।

माणिक । इस समुद्रमें वह रत्न कैसे ढूंढ़ सकूंगा ? मैं तो उसे पहचानता भी नहीं । यदि हुक्म हो, तो मैं हनुमानजीकी भांति इस गन्धमादनको ही ले जाकर उदयपुरमें रख दूं । महारानी स्वयं चुन बाकीको छोड़ देंगी । बाकी सब उदयपुरके बाजारमें सुरमा और मिस्सी बेच दिन बितायेंगी ।

इसी समय एक बड़े हाथीके ऊपरसे निर्म्मलकुमारीने राजसिंह और माणिकलालको देखा । दोनों हाथ उठाकर उसने राजसिंह और माणिकलालको प्रणाम किया । यह देखकर राजसिंहने

माणिकलालसे पूछा,—"वह कौन बेगम है? वह मुसलमानिन तो नहीं जान पड़ती; क्योंकि उसने सलाम न कर हमें प्रणाम किया है।"

माणिकलाल जोरसे हंसा। बोला,—"महाराज! वह तो एक लौंडो है। वह बेगम कबसे हुई? उसे पकड़ लाना होगा।"

यह कहकर माणिकलाल निर्म्मलकुमारीको हाथीसे नीचे उतार लाया। निर्म्मल कुछ न बोल हंसने लगी। माणिकलालने पूछा,—"अच्छा! बेगम कबसे हुई?"

निर्म्मलने आंख-मुंह मटकाकर कहा,—"मैं हजरत इमली बेगम हूं। कोरनिस करो।"

माणिक। हां कोरनिस कर सकता हूं; किन्तु तुम्हारी यह सज-धज कैसी?

निर्म्मल। पहले मेरा हुक्म बजा लाओ; पीछे और बात करना।

माणिक। राम, राम! बेगम साहबाकी धमकी तो देखो!

निर्म्मल। मैं हुक्म देती हूं, कि हजरत उदयपुरी बेगम साहबा सामनेके पांच कलशवाले हौदेके हाथीपर सवार हैं, उन्हें मेरे सामने हाजिर करो।

कहते देर न थी, कि फौरन माणिलकालने उदयपुरीको हाथीसे उतरवा लिया। उदयपुरी मुंहपर बुरका डाले हुए रोती-रोती नीचे उतरी। माणिकलालने एक पालकी हाथीके पास भेज दी; उसीपर चढ़ाकर उदयपुरी वहां लाई गई। पीछे निर्म्मल-कुमारीके कानमें माणिकलालने कहा,—"इमली बेगम साहबा! और एक बात—"

निर्म्मल। (बीचही में रोक कर) खामोश! बेतमीज! मेरा नाम हजरत इमली बेगम साहबा है।

माणिक। आप चाहे कोई बेगम ही क्यों न हों; किन्तु क्या

आप शाहजादी जेबुन्निसाको पहचानती हैं ?

निर्म्मल। वाह ! मैं अपनी बेटीहो को न पहचानूंगी। वह देखो, जिस हाथीपर सोनेके तीन कलश शोभा दे रहे हैं, उसीपर शाहजादी जेबुन्निसा बैठी हुई है।

माणिकलाल उसे भी हाथीसे उतरवा लाया। उसी समय फिर किसी बेगमने हौदेसे मुंह निकालकर निर्म्मलको पुकारा। माणिकने निर्म्मलसे पूछा,—"वह देखो, तुम्हें कोई पुकार रहा है ?"

निर्म्मलने उधर देखकर कहा—"वह जोधपुरी बेगम हैं। उन्हें यहां लाना नहीं होगा। मुझे एक हाथीपर चढ़ाकर स्वयं वहां ले चलो ! सुन आऊं क्या कहती हैं।"

माणिकलालने ऐसा ही किया। निर्म्मलकुमारी अपने हाथीके ऊपरसे ही जोधपुरीके हाथीपर, उसके इन्द्रासन तुल्य हौदेमें घुसी। जोधपुरी बोली,—"मुझे भी अपने साथ ले चलो !"

निर्म्मल। क्यों ?

जोधपुरी। क्यों ? सो तो अनेक बार कहा है। मैं इस म्लेच्छपुरीमें, इन महापापियोंके बीच और नहीं रह सकती।

निर्म्मल। नहीं, ऐसा नहीं होगा। आज यदि मुगल-साम्राज्यकी नींव दृढ़ हो जाये, तो आप हीका लड़का दिल्लीका बादशाह होगा।

जोधपुरी। बेटी ! ऐसी बात कभी मुंहपर न लाना। बादशाहने सुना, कि मेरा लड़का एक दिन भी जीता न बचेगा। विष खिलाकर मार डाला जायेगा।

निर्म्मल। मैं और किसीसे यह बात न कहूंगी ; किन्तु शाहजादोंका जो हक है, वह आपके पुत्र समयपर अवश्य पायेंगे। आप मुझे कुछ और आज्ञा न कीजियेगा। आप यदि इस समय मेरे

साथ चली आवेंगी, तो आपके पुत्रका अमङ्गल होगा।

जोधपुरीने सोचकर कहा—'बात बहुत ठीक है। "तुम्हारी बात मानकर मैं कहीं न जाऊंगी। अब तुम जाओ।"

निर्मलकुमारीने प्रणामकर उनसे विदा ली।

उदयपुरी तथा जेबुन्निसा दोनो उपयुक्त सेनासे घिरकर निर्मल-कुमारीके साथ उदयपुरमें चञ्चलकुमारीके पास भेजी गईं।

चौथा परिच्छेद।

आग बहुत बढ़ी।

राजसिंहने बादशाहको गजारूढ़ा, शिविकारूढ़ा, तथा अश्वारूढ़ा, कुल स्त्रियोंको उसी पहाड़ी खोहमें जाने दिया, जिसमें औरङ्गजेब घुसे थे। उनके घुस जानेके बाद दोनों तरफकी सेना चुपचाप खड़ी रही। अब औरङ्गजेबकी बाकी सेना खोहमें जाने नहीं पाती; क्योंकि राजसिंहने उसकी राह रोक ली है। यह दशा देखकर औरङ्गजेबकी बड़ी सेना युद्ध करनेके लिये तय्यार होने लगी। वह घोड़ोंका रुख फिरा राजसिंहके सामने आ डटी। ऐसी अवस्था-में राजसिंहने जरा पीछे हट उसको राह छोड़ दी। मुसलमानी सेना "दीन-दीन" करती हुई बादशाहके आज्ञानुसार खोहमें घुसी। राजसिंह फिर आगे बढ़े।

उसके बाद बादशाही तोपखाना आगे बढ़ा। इसके साथ रक्षक-वचाक कोई न था। राजपूतोंने उसे लूट लिया। उसके बाद रसद आगे बढ़ी। हिन्दुओंके खाने योग्य जो सामान थे, वह राजसिंहकी रसदमें मिला दिये गये, जो हिन्दुओंके व्यवहार योग्य न थे, वह

डोम-चमार आदिमें बांट दिये गये। उन्होंने कुछ स्वयं खाया; कुछ पर्व्वतपर छींटा-बोया; जिसे कुत्ते, सियार तथा बनैले पशुओंने खाया। इसके बाद दफ़्तरखाना अग्रसर हुआ। राजपूतोंने दफ़्तरखाना हाथी-परसे उतार लिया। उसमेंसे कुछ कागजपत्र जला दिया तथा बाकी फिर हाथियोंपर रखवा दिया। इसके बाद खजाना था। इसमें जितना धन था, उतना पृथिवीमें और कहीं न था। यह बात राजपूत जानते थे; इससे वह बड़े प्रसन्न हुए। इसके बाद गोलन्दाज सेना थी। राजसिंहने अपनी सेनाको संयत करते हुए कहा,—"तुम लोग व्यस्त न हो। यह सब तुम्हारा ही है; किन्तु आज इसके लेने का समय नहीं।" राजसिंह चुप रहे। बादशाही सेना खोहमें घुस गई।

पीछे माणिकलालसे अलग ले जाकर राजसिंहने कहा,—"मैं उस मुगलसे बहुत खुश हुआ हूं। बिना परिश्रम हमलोग कृतकार्य्य हो सकेंगे,—यह आशा मुझे जरा भी न थी। मैं मुगलोंको युद्ध करके मारना चाहता था; किन्तु अब बिना युद्ध ही मुगल नष्ट हो जायेंगे। मुबारकको मेरे पास लिवा लाओ। मैं उसको इनाम दूंगा।"

पाठकोंको याद होगा, कि मुबारकको जिलाकर माणिकलाल उसे अपने साथ उदयपुर ले आया था। राजसिंह उसकी वीरता जानते थे; इसीलिये उसे अपनी सेनाके ऊंचे पदपर नियत कर दिया था; पर मुगल समझकर उसपर पूरा विश्वास कर नहीं सकते थे; इससे मुबारक कुछ दुःखित रहता। आज उसी दुःखको दूर करनेके लिये उसने यह बड़ा काम अपने जिम्मे लिया था। जो बड़ा काम उसने पूरा किया है, वह तो पाठक जानते ही हैं। पाठक समझ गये होंगे, कि मुबारक ही वेश बदलकर सौदागर बना था।

माणिकलालने आज्ञा पाते ही मुबारकको राजसिंहके सामने हाजिर किया। राजसिंहने मुबारककी बड़ी तारीफ की। कहा,—

"यदि तुम चालाकीसे मुगल-सौदागर बनकर बादशाही सेनाको खोहमें न ले जाते तो अनेक मनुष्योंका प्राण जाता। यदि तुम्हें कोई पहचान लेता, तो तुमपर भी पूरी आफत आती!"

मुबारकने कहा,—"महाराज! जो मनुष्य सबके सामने मर चुका है, सबके सामने कब्रमें दफन कर दिया गया है, उसे लोग पहचान-कर भी नहीं पहचानते। सोचते हैं, कि भ्रम हो रहा है। मैं इसी भरोसे गया भी था।"

राजसिंहने कहा,—"यदि इस समय भी मेरा काम न बने, तो दोष मेरा होगा। तुम जो इनाम चाहो, मांग सकते हो।"

मुबारक बोला,—"महाराज बेअदबी माफ कीजिये। मैंने मुगल होकर मुगल राज्यको नष्ट करनेका उपाय कर दिया है; मैंने मुसलमान होकर हिन्दू-राज्य प्रतिष्ठाकी चेष्टा की है; मैं सत्यवादी होकर झूठ बोला हूं, धोखा दिया है। मैंने बादशाहका नमक खाकर नमकहरामी की है; इन सब करतूतोंके कारण मैं मृत्युसे भी अधिक कष्ट पा रहा हूं, मुझे अब और कुछ इनाम नहीं चाहिये। मैं केवल एक पुरस्कार आपसे भीख मांगता हूं; मुझे तोप-के मुंहपर रखकर उड़वा देनेकी कृपा कीजिये। मुझे अब और जीनेकी इच्छा नहीं।"

राजसिंहने विस्मित होकर कहा,—"यदि इस कार्य्यमें तुम्हें इतनी मनोव्यथा हुई, तो तुमने इसे क्यों किया? मैं दूसरा आदमी नियत करता। मैं किसीको इतनी मनोव्यथा पहुंचाना नहीं चाहता।"

मुबारकने माणिकलालको दिखाकर कहा,—"इन्हीं महात्माने मुझे जिलाया है; इन्हींके विशेष अनुरोधसे मैंने यह कार्य्य किया है। मेरे सिवा यह कार्य्य और किसीसे पूरा नहीं होता; क्योंकि मुगल मुगलोंके सिवा किसी हिन्दूका विश्वास नहीं करते। यदि मैं

इनकी यह आज्ञा नामंजूर करता, तो मैं अकृतज्ञ कहलाता । इसीसे मैंने यह काम किया है । मैंने निश्चय कर लिया है, कि अब प्राण न रखूंगा । मुझे तोपसे उड़ा देनेकी आज्ञा दीजिये अथवा बंधवाकर बादशाहके यहां भिजवा दीजिये । यदि यह भी न कर सकें, तो आज्ञा दीजिये, कि जिस प्रकार हो, मैं मुगल-सेनामें शामिल होकर आपकी सेनाके साथ लड़ मरूं ।"

राजसिंह बड़े सन्तुष्ट हुए । कहा,—"कल मैं तुम्हें मुगल-सेनामें जानेकी आज्ञा दूंगा । एक दिन और ठहरो । मुझे तुमसे सिर्फ एक बात पूछनी है । औरङ्गजेबने तुम्हें क्यों मरवाया था ?"

मुबारक । यह बात आपसे कहने योग्य नहीं ।

राजसिंह । माणिकलालसे ?

मुबारक । उनसे कही है ।

राजसिंह । एक दिन और ठहरो ।

यह कहकर राजसिंहने मुबारकको वहांसे विदा किया ।

इसके बाद माणिकलालने मुबारकको एकान्तमें ले जाकर पूछा,—"यदि आपको मरना ही था, तो क्यों आपने शाहजादीको पकड़नेके लिये मुझसे अनुरोध किया ?"

मुबारक बोला, —"मुझसे भूल हुई है । मैं अब शाहजादीको लेकर क्या करूंगा ? सोचा था, कि मेरे प्रेमका जो बदला उसने विषधर सर्पसे कटवा कर दिया था, उसका बदला मैं भी उसे चुकाता ; किन्तु मनुष्य जो आज चाहता है, कल भी वह उसे ही नहीं चाहता । अब जब मैंने मरना ही निश्चय किया है, तब चाहे शाहजादी प्रतिफल पाये वा न पाये ; मुझे क्या ? मैं मरनेके बाद तो कुछ देखने न आऊंगा ।"

माणिकलाल । यदि आप जेबुन्निसाको अपने पास न रखना चाहें, तो मैं बादशाहसे कुछ रिश्वत लेकर उसे छोड़ दूं ।

मुबारक । मैं एक बार उसे और देखना चाहता हूं । एक बार पूछना चाहता हूं, कि संसारके धर्म्म-अधर्म्मपर उसका अबतक कुछ विश्वास है या नहीं । एक बार सुननेकी इच्छा है, कि अब वह मुझे देखकर क्या कहती है ! एक बार जाननेकी इच्छा है, कि मुझे देखकर वह क्या समझती है ।

माणिक० । इससे जान पड़ता है, कि अबतक उसके लिये आपके हृदयमें जगह है ।

मुबा० । कुछ भी नहीं । केवल एक बार उसे देखनेकी इच्छा है ; कृपाकर आप उसे मुझे दिखा दीजिये ।

आठवां खण्ड।

पहला परिच्छेद।

बादशाहको जलन।

इधर बादशाह बड़ी ही आफतमें फंसे। उनकी कुल सेनाके खोहमें घुस जानेके थोड़ी ही देर बाद सूर्य्यदेव अस्ताचलको सिधारे; किन्तु खोह कितनी दूर और है, इसका कुछ पता नहीं चलता। सन्ध्या होते ही खोहमें भयानको अन्धकार छा गया। रोशनीका सामान इतना न था, जिससे सारी सेनामें रोशनी कर दी जाती; केवल बेगमोंके पास रोशनी करदी गई। अन्यत्र सब जगह घोर अन्धकार रहा! एक तो वैसे ही पहाड़ी जमीन; दूसरे कङ्कड़-पत्थरसे भरी हुई गन्दी राह। घोड़े अन्धेरेमें ठोकरें खाने लगे। अनेक ठोकर खाकर गिरे भी; जो गिरे उन्होंने पीछेके घोड़ेको भी अपने ऊपर गिराया और खुद घायल होते हुए अपने तथा पीछे वाले घुड़सवार-को भी घायल किया। हाथीके पैरोंसे बड़ी-बड़ी चट्टानें पटापट टूटने लगीं। हाथी चौंकने लगे, उनपर चढ़ी हुई स्त्रियां जमीनपर पके आमकी तरह टपकने लगीं और हाथी घोड़ोंके पैरतले पड़कर हाहाकार करने लगीं। पालकी ढोनेवालोंके पैर बिल्कुल लहूलुहान हो गये। पैदल सेना ठोकरें खाते-खाते अब और आगे चलने योग्य न रही। यह दशा देखकर औरङ्गजेबने सेनाका आगे बढ़ना रोक दिया।

पर यहां तो तम्बू गाड़नेकी जगह ही नहीं। बड़ी मुश्किल-से बेगमोंके लिये एक छोलदारी खड़ी की गई। और सब ज्योंके त्यों

रहे ; जो जहां था वह वहीं खड़ा रहा । घुड़सवार घोड़ोंपर, हाथीके सवारहो हाथीपर और पैदल पैरके बल ही खड़े रहे । कोई-कोई बड़ी मुश्किलसे खोहकी दीवारमें ताक बनाकर तथा पैर लटकाकर बैठ गये ; किन्तु ऐसा सुख बहुत कम लोगोंके भाग्यमें बदा था ।

इसके बाद भोजनकी बारी आई । जो कुछ खाद्यसामग्री थी, वह राजपूतोंने लूट ली थी । इस खोहमें मनुष्योंकी कौन कहे, घोड़ोंके लिये भी काफी घास मिल नहीं सकती थी । दिनभरकी मेहनतके बाद भी किसीको कुछ भोजन न मिला । बादशाह और बेगमें भी भूखी रहीं । खाद्य पदार्थ और नींदके अभावसे सब लोग मृतप्राय हो गये । मुगल-सेना बड़ी विपदमें पड़ी ।

भोजन आदिकी सामग्री न होनेसे बादशाह दुःखित थे ही, कि इसी समय वह उदयपुरी और जेबुन्निसाके हरे जानेकी खबर सुनकर जलते तेलके बैंगन हो गये । बादशाह सैनिकोंपर भी मन ही मन बहुत बिगड़े । अकेले यदि सारी सेनाको मार डालनेकी उनमें शक्ति होती, तो वह अवश्य ही वैसा करते । सिंहनीको पिञ्जरेमें बन्द देखकर सिंह जिस प्रकार गरजता है, औरङ्गजेब भी उसी प्रकार गरजने लगे । बहुत रात हो जानेके बाद जब सिपाहियोंमें सन्नाटा छा गया, तब जान पड़ने लगा, मानो पहाड़पर अनेक लोग पेड़-पालो उखाड़ रहे हैं । कोई इसका कुछ मतलब नहीं समझ सका । बहुतोंने इसे भूतोंका खिलवाड़ समझा ।

दूसरा परिच्छेद ।

जलेपर नमक ।

सवेरा होते ही औरङ्गजेबने सेना आगे बढ़ानेकी आज्ञा दी । कुछ सेना तोप आदि लेकर जल्द-जल्द खोहपार करनेके

लिये आगे बढ़ो। भूख-प्याससे सब लोग घबराये हुए थे। सबको यही विश्वास था, कि बाहर निकलनेपर ही खान-पानका सुयोग मिलेगा। इससे सभी एक दूसरेसे आगे बढ़ना चाहते थे। उधर बादशाह-सलामत जल्द खोहसे निकलकर उदयपुरी और जेबुन्निसाको छुड़ाते हुए उदयपुरका नामोनिशान मिटानेको मन ही मन अलग ही खिचड़ी पका रहे थे। उनका हृदय क्रोधसे जल रहा था। बड़ी दौड़ा-दौड़ीके बाद मुगलसेना खोहके मुहानेपर पहुंची। पहुंचकर देखा, कि मुगलोंके सर्व्वनाशका सामान ठीक हो गया है; खोहका दरवाजा बन्द है। रात ही भरमें राजपूतोंने पहाड़की चट्टान और पेड़-पल्लवोंसे दरवाजेको खूब बन्द कर दिया है! हाथी-घोड़े और सिपाहियोंकी बात तो दूर रही; सियार और कुत्तोंके आने-जानेतकको भी राह नहीं।

मुगल-सेना हाहाकार करने लगी। स्त्रियोंकी कातर रुलाई सुनकर औरङ्गजेबका पत्थरसा कलेजा भी कांप गया।

सेनाके साथ राह साफ करनेवाला एक दल रहता है। वह आगे-आगे रहता है; पर यहां कुछ उलट-पुलट हो गया था। पहले बादशाहने उसे पीछेसे आगे लानेकी आज्ञा दी; पर उसके आनेमें बड़ी देर लगती। उसकी अपेक्षा करनेसे कहीं ऐसा न हो, कि आज भी उपवास ही करना पड़े। इससे बादशाहने अपने पैदल सिपाहियोंको हुक्म दिया, कि वह तथा अन्यान्य लोग मिलकर हाथियोंकी सहायतासे पेड़-पल्लवों तथा चट्टानोंको हटाकर बगलमें कर दें। हजारों पैदल सिपाही और सैकड़ों हाथी इस काममें लगे; किन्तु ज्योंही वह चट्टान आदि हटाने लगे, त्यों ही पहाड़के ऊपरसे अविराम शिलावृष्टि होने लगी। पैदल सिपाहियोंमेंसे किसीका पैर टूटा, तो किसीका हाथ; किसीका सिर फटा, तो किसीका कन्धा ही भर्ता हो गया। हाथियोंमेंसे किसीका कान कट गया, तो किसीका दांत ही

नदारद; किसीकी सूंड़ है, तो किसीकी पीठहीमें चार अंगुल गढ़ा हो गया और वह चिग्घाड़ते और पैदल-सिपाहियोंको रौंदते हुए भागे। फलतः बादशाही सेना बहुत ही घायल हुई और बेतरह डर सबने ऊपर आंख उठाकर देखा, तो पहाड़पर हजारों राजपूत दिखाई पड़े। जो सिपाही दरवाजा साफ करते हुए, पत्थरोंसे न तो जखमी हुए और न मारे ही गये, उन्हें राजपूतोंने गोलीसे मार डाला।

यह बात सुनकर बादशाहने तिरस्कार करते हुए सेनाध्यक्षोंको पेड़-पल्लवोंकी दीवार तुड़वानेको आज्ञा दी। "दीन" "दीन"-कर मुगल-सेना फिर उस कामके लिये आगे बढ़ी। फिर राजपूत ईंट-पत्थर और गोले-गोलियोंसे सिपाहियोंको भूमिशायी करने लगे। इस प्रकार बारंबार उद्योग करनेपर भी मुगलसेना दरवाजा साफ कर न सकी।

तब औरङ्गजेबने हताश होकर अपनी बड़ी सेनाको पीछे लौट चलनेकी आज्ञा दी। जिधरसे सेनाने प्रवेश किया था, उधर ही से बाहर निकलना होगा। सारी सेना भूख-प्याससे जर्जरित थी। दिल्लीश्वरके इस प्रकार भूख-प्यास सहनेका पहला मौका था; इसके सिवा और कोई उपाय न था; क्योंकि पहाड़ एकदम ऊंचा था उसपर भी चढ़नेका कोई ढङ्ग बादशाहको न दिखाई पड़ा।

लौटकर बादशाही सेना फिर वहीं पहुंची, जहांसे वह चली थी। देखा, कि वहां भी मृत्यु प्रत्यक्ष रूपसे सेनाओं सहित उसे निगलनेको तय्यार है। यह दरवाजा भी उसी तरह चट्टान, पत्थरों और विशाल वृक्षोंसे बन्द था; साथ ही पर्व्वतके ऊपर राजपूत-सेना पंक्ति बांधे खड़ी थी।

किन्तु बाहर न निकलनेसे तो निश्चय ही ससैन्य मरना पड़ेगा; इससे औरङ्गजेबने कुल सेनापतियोंको बुलाया तथा नर्मी-गर्मी सब

तरहसे उन्हें समझाते हुए कहा,—"जिस तरह हो जान लड़ाकर राह साफ करवाइये।" सेनापतियोंने पहलेकी भांति फिर जोरशोर-से सिपाहियोंको आगे बढ़ाया। इस बार उन्हें कुछ सुविधा भी थी; क्योंकि राह साफ करने वाली सेना आगे ही थी। मुगल बड़ी तेजीसे जान लड़ाकर पेड़, पाली, पत्थर, चट्टान आदि काटने और हटाने लगे; किन्तु कबतक यह बात रही? थोड़ी ही देरमें जब ऊपरसे सावनकी वर्षाकी भांति पत्थर बरसने लगे, तब औरङ्गजेबकी सारी सेना उसमें तहस-नहस होने लगी।

राजसिंह की तोपें गर्जने लगीं। वृक्ष आदिके दरवाजोंको लांघकर तोपोंके गोलोंने हाथी, घोड़े, सेनापति और सिपाहियोंको भुलस दिया मुगल सेना खोह में घुस गई। जिस प्रकार आग देखकर क्रूर सर्प बिलमें छिप जाता है, उसी प्रकार राजपूतोंको देखकर मुगल बिलमें छिपे! बादशाहने अपने जवाहरातसे जड़े हुए ताजको मस्तकसे उतारकर जमीनपर फेंक दिया, और घुटने टेककर जमीनपर बैठ गये। खोहका कङ्कड़ अपने सिर पर रखा। दिल्लीके बादशाहकी अवस्था इस समय चूहेदानीके चूहे की भांति है, वह इस समय यदि चूहेका भी आहार पायें तो उनका प्राण बच सकता है।

इसी समय भारतेश्वर औरङ्गजेबने राजपूत-कुलबाला निर्मलसे सहायता पानेकी इच्छासे उसका एक कबूतर उड़ा दिया।

तीसरा परिच्छेद।

उदयपुरीका जलना।

निर्मलकुमारी, उदयपुरी बेगम और शाहजादी जेबुन्निसाको उपयुक्त स्थानपर ठहरा महारानी चञ्चलकुमारीके पास पहुंची।

महारानीको प्रणामकर उसने उनसे सब वृत्तान्त निवेदन किया। सब बातें सुनकर चञ्चलकुमारीने सबसे पहले उदयपुरीको बुलवाया। उदयपुरीके आनेपर उन्होंने उसे बैठनेके लिये मखमली कोच दिया और उसकी इज्जत करनेके लिये स्वयं उठ खड़ी हुईं। उदयपुरी विषण्ण हृदयसे डरती हुई चञ्चलकुमारीके यहां आई थी; यहांपर अपना इतना आदर-सत्कार होते देख उसने समझा, कि हिन्दुओं-का छोटा हृदय डरसे यह आदर सत्कार कर रहा है। यह सोच उदयपुरीने कहा,—"तुम लोग अपनी मौत अपने आप क्यों बुला रही हो?"

चञ्चलकुमारी कुछ मुस्कराकर बोली,—"हम लोग मुसलमानों द्वारा मृत्यु नहीं चाहते। मुसलमान स्वयं यहां मृत्युभिक्षा मांगने आये हैं। वह भूल गये हैं, कि हमलोग हिन्दू हैं; हिन्दू यवनोंका दान नहीं लेते।"

उदयपुरीने घृणाके साथ कहा—"उदयपुरके भुइंहार पुश्त-दरपुश्तसे इस प्रकारका दान लेते आये हैं; सुलतान अलाउद्दीनकी बात छोड़ दीजिये; मुगल-बादशाह अकबर शाह तथा उनके पौत्रसे भी राणा राजसिंहके पुरुखोंने यह दान लिया है।"

चञ्चल। बेगम साहबा! आप भूल रही हैं। उसे दान समझकर नहीं लिया था; वरंच कर्ज समझकर लिया था। अकबर शाहका कर्ज प्रतापसिंह स्वयं चुका गये हैं। आपके ससुरका ऋण इस वक्त हमलोग भरनेमें लगी हुए हैं। उसकी पहली किश्त लेनेके लिये आपको बुलाया गया है। मेरा तम्बाकू जल गया है। मिहरबानी करके दूसरा तम्बाकू भर लाइये।

चञ्चलकुमारीने पहले जैसा भलमनसहतका व्यवहार किया था, उदयपुरी भी यदि वैसा ही व्यवहार करती, तो उसे इतना अपमान सहना न पड़ता; किन्तु उदयपुरीके व्यवहारने चञ्चलकुमारीको

गर्व्वान्वित कर दिया है ; इसीसे उदयपुरीको अपनी करनीका फल भोगना पड़ता है। तम्बाकू भरनेकी बातसे तम्बाकू चढ़ानेवाले निमन्त्रण पत्रकी बात उदयपुरीको याद आई। उदयपुरीके सारे शरीरमें पसीना होने लगा। तिसपर भी भीतरी गर्व्वको भीतर ही दबाकर उसने कहा,—"बादशाहकी बेगमें तम्बाकू नहीं चढ़ातीं ?"

चञ्चल। जब तुम बादशाहकी बेगम थी, तब थी ; इस समय तो तुम मेरी बन्दिनी हो ; मेरा हुक्म है, कि तुम्हें तम्बाकू भरना ही होगा।

यह बात सुनकर उदयपुरीने रो दिया ; किन्तु यह रुलाई दुःखकी नहीं क्रोधकी थी ; उसने कहा,—"तुम्हारी इतनी हिम्मत है, कि तुम आलमगीर बादशाहकी बेगमको तम्बाकू भरनेके लिये कहती हो ?"

चञ्चल। मुझे आशा है, कि कल आलमगीर बादशाह भी स्वयं यहां आकर महाराणाका तम्बाकू भरेंगे। यदि वह तम्बाकू भरना न जानते हों, तो तुम उन्हें सिखा देना। आज खुद सीख रखो।

इसके बाद चञ्चलकुमारीने दासीको हुक्म दिया,—"इनसे तम्बाकू भरवा लाओ।"

उदयपुरी नहीं उठी।

दासीने कहा,—"चिलम उठाइये।" उदयपुरी जब इतनेपर भी न उठी, तब दासी उसका हाथ धरकर उठाने चली। अपमानके डरसे कांपती हुई बादशाहकी प्रेयसी बेगम चिलम उठाने चली। क्रोधसे उठकर ज्यों ही वह दो-एक पैर आगे बढ़ी थी, कि थरथर कांपती हुई पत्थरके फर्शपर गिर पड़ी। दासीने फौरन पकड़ लिया ; चोट न लगी। उदयपुरी फर्शपर गिरकर मूर्च्छित हो गई।

चञ्चलकुमारीकी आज्ञासे उदयपुरीको दासियां उठाकर एक कीमती पलङ्गपर ले गईं। वहां उसकी खूब सेवा-शुश्रूषा होने

लगी। वह थोड़ी देरमें होशमें आ गई। चञ्चलकुमारीने हुक्म दिया, कि अब कोई उसका कुछ अपमान न करे। शयन, भोजन और सेवा-शुश्रूषाका जैसा बन्दोवस्त चञ्चलके लिये था, उदयपुरीके लिये उससे भी अधिक ध्यान रखनेके लिये चञ्चलने निर्म्मलकुमारीको हुक्म दिया।

निर्म्मलने कहा,—"यह सब-कुछ किया जायेगा; किन्तु इससे उनकी तृप्ति न होगी।"

चञ्चल। क्यों? और क्या चाहिये?

निर्म्मल। जो चाहिये वह राजपुरीमें मिलना मुश्किल है?

चञ्चल। क्या, शराब? जब वह शराब चाहें, तब तुम उन्हें गोमूत्र पिलाना।

उदयपुरी सेवासे सन्तुष्ट हुई; किन्तु रातके समय उपयुक्त समय आनेपर उदयपुरीने निर्म्मलकुमारीको बुलाकर प्रार्थनापूर्वक कहा,—"इमली बेगम! थोड़ी शराब दिलवाइये!"

"देती हूं" कहकर निर्म्मलने राजवैद्यको चुपचाप खबर दी। राजवैद्यने एक बून्द दवा भेज दी और कहला दिया, कि थोड़े शरबतमें डालकर उसे शराबकी जगह पीनेके लिये देना। निर्म्मलने ऐसा ही किया। उदयपुरी उसे पीकर बड़ी सन्तुष्ट हुई। कहा,—"बड़ी सुन्दर शराब है।" थोड़ी देरके बाद ही वह उसके नशेमें बेखबर सो गई।

चौथा परिच्छेद।

जेबुन्निसा जलने लगी।

जेबुन्निसा अकेली बैठी हुई है। दो-एक दासियां उसकी आज्ञा सुननेके लिये इधर-उधर खड़ी हैं। निर्म्मलकुमारी भी बीच-बीचमें

उसकी खबर लेती है। धीरे धीरे उदयपुरीके तम्बाकू भरनेकी अपमान-जनक बात जेबुन्निसाके कानों तक पहुंची। सुनकर वह अपने लिये चिन्तित हुई।

अन्तमें उसे भी निर्म्मलकुमारी चञ्चलके पास ले गई। वह साधारण भावसे वहां गई। उसने मन ही मन स्थिर कर लिया था, कि मैं हर वक्त इसका खयाल रखूंगी, कि मैं आलमगीर बादशाहकी कन्या हूं।

चञ्चलकुमारीने बड़े आदरसे जेबुन्निसाकी अभ्यर्थना की तथा उसे अलग एक कोचपर बिठाया। तरह-तरहकी मीठी-मीठी बातें कीं। जेबुन्निसाने भी सौज्यन्यतासे उसकी बातोंका जवाब दिया। आपसमें ऐसी बातें उठी ही नहीं, जिससे दिलमें कुछ विद्वेष पैदा हो। अन्तमें चञ्चलकुमारीने जेबुन्निसाके सत्कारमें कुछ कमी न होनेके लिये निर्म्मलसे अनुरोध किया तथा जेबुन्निसाको इतर-पानादि दिया।

जेबुन्निसा ज्योंकी त्यों बैठी रही और अन्तमें उसने चञ्चलसे पूछा,—"महारानी! क्या मैं सुन सकती हूं, कि क्यों मैं यहां लाई गई हूं?"

चञ्चल। वह बात आपसे कहनेकी जरूरत नहीं; किसी दैवज्ञकी आज्ञासे आप यहां लाई गई हैं। आज आप अकेली ही सोना। दरवाजा खुला रहने दीजियेगा। प्रहरी छिपे-छिपे पहरा देंगे। आप कुछ खटका न कीजियेगा। आपका इसमें कुछ नुकसान न होगा। दैवज्ञने कहा है, कि आज आप स्वप्न देखेंगी। यदि स्वप्न देखें, तो कल मुझसे मिहरबानीकर स्वप्नकी बात बताइयेगा।

यह बात सुन चिन्तित-हृदयसे उठकर जेबुन्निसाने चञ्चलसे विदा ली। उसके खाने-पीने और सोने आदिका जैसा प्रबन्ध दिल्लीके रङ्गमहलमें था, निर्म्मलके तत्वावधानमें यहां भी वैसा ही हुआ। वह सोई; पर उसे नींद न आई। चञ्चलकी आज्ञाअनुसार दरवाजा खुला रखा और अकेले ही सोई। यह सब उसने कुछ डरकर भी किया,

कि कहीं आज्ञा न माननेसे उदयपुरीकी भांति उसे भी अपमानित न होना पड़े ; किन्तु अकेली रातभर दरवाजा खुला रखनेकी आज्ञासे उसे कुछ खटका हुआ, कि कहीं मुझपर धोखेसे अत्याचार करनेका तो बन्दोवस्त नहीं हुआ है । उसने निश्चय कर लिया, कि सोऊंगी नहीं ; रात भर जागती रहूंगी ।

अनेक चेष्टा करनेपर भी जेबुन्निसाको बीच-बीचमें झपकी आने लगी । झपकी आती और वह फिर प्रतिज्ञा यादकर आंखें खोल देती । जब-जब आंखें खोलती, तब-तब उसे दिल्ली याद आती ; वह सोचती,—"जो मुगल-बादशाही रङ्गभूमिकी प्रधान अभिनेत्री है, मुगल-बादशाही आकाशकी पूर्ण जोत्स्ना है, जो वहांके तख्तेताजस की उज्ज्वल मणि है, जो काबुलसे गोलकुण्डा तककी एकमात्र शासन कर्त्री है वही आज उदयपुरके पहाड़ी बिलमें चूहेकी भांति रूपनगरकी, भुइंहार-कन्याकी बांदी है ! क्या मृत्यु इससे भली नहीं ? जो मृत्यु मैंने मुबारकको अर्पण की थी, क्या वह मेरे लिये अच्छी नहीं ? जिस मृत्युसे मुबारक मरा क्या मैं उसके योग्य नहीं हूं ? हा, मुबारक प्यारे मुबारक !! तुम्हारी वीरता क्या सामान्य काले सर्पके विषसे विजय कर न सकी ? वह आनन्ददायक मूर्त्ति भी क्या सर्पके विषसे नीली हो गई ? क्या उदयपुरमें वैसा सांप नहीं मिलता, जो इस-कालभुजङ्गिनीको डंसे ? क्या मानवी कालभुजङ्गिनी फणिनी काल-भुजङ्गिनीके डंसनेसे मर नहीं सकती ? प्राणप्यारे मुबारक ! एक बार तुम सशरीर आकर कालसर्प द्वारा इस शाहजादीरूपिणी काल-भुजङ्गिनीको डंसवाओ ; देखो वह मरती है, या नहीं" ।

ठीक यही बात सोचती हुई मुबारकको मानो देखनेकी इच्छासे जेबुन्निसाने आंखें खोलीं ; देखा, कि सामने सशरीर मुबारक खड़ा है । जेबुन्निसा चिल्लाकर आंखें बन्द करती हुई अचेत हो गई ।

पांचवां परिच्छेद।

आगमें ईंधन-निक्षेप—ज्वाला बढ़ी!

दूसरे दिन जब जेबुन्निसा सोकर उठी, तब वह पहचानी नहीं जाती थी। एक तो वह वैसे ही कुछ कुम्हला गई थी, दूसरे रातकी घटनासे आज और झुलस सी गई है। जैसा चेहरा चितामें अर्द्ध-दग्ध मनुष्यका होता है—जैसा बदन आगकी लपट लगनेसे हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जेबुन्निसाका चेहरा हो गया था। सिवा इसके जेबुन्निसा प्रति मुहूर्त्त भीतर ही भीतर जल रही थी।

इच्छा न होनेपरभी वेशभूषा ठीककर जेबुन्निसाने कुछ जलपान किया। इसके बाद पहले उदयपुरीसे मिलने गई; देखा, कि उदय-पुरी अकेले बैठी हुई है; सामने मरियम तथा यीशू क्रिष्टका चित्र पड़ा हुआ है। अनेक दिनोंसे उदयपुरी यीशू तथा उनकी माताको भूल गई थी; आज विपदके समय वह लोग याद आये हैं। क्रस्तानी-के चिन्हस्वरूप यही दो तस्वीरें उदयपुरीके साथ सदा रहतीं। जिस प्रकार बेतरह टूटा-फूटा छाता गरीब लोग बरसातके दिनों निका-लते हैं, उसी प्रकार उदयपुरीने विपदमें इनको स्मरण किया है। जेबुन्निसाने देखा, कि उदयपुरीकी आंखोंमें अविरल अश्रुधारा बह रही है। जेबुन्निसाने आजकी भांति सुन्दरता उदयपुरीमें और कभी देखी न थी। वह वास्तविक परम सुन्दरी थी; परन्तु गर्व्व, भोग-विलास और ईर्ष्यादिकी जलन सर्व्वदा उसके सौन्दर्य्यको कुछ खराब किये रहती थी। आज अश्रुस्रोतसे वह खराबी धुल गई है और उसकी अपूर्व्व रूपराशि चमक उठी है।

उदयपुरी जेबुन्निसासे अपनी दुःख-कहानी कहने लगी। उसने कहा,—"मैं बांदी थी; बांदीकी दरसे बिकी हुई थी। क्यों बांदी ही

न रही ? क्यों मेरे भाग्यमें यह ऐश्वर्य बदा था ?"

इतना कह उदयपुरीने जेबुन्निसाके मुंहकी ओर देखकर कहा—"तुम्हारी ऐसी बुरी दशा क्यों है ? कल तुम कैसी थी ? काफिरोंने तुमपर भी क्या कुछ अत्याचार किया है ?"

जेबुन्निसा लम्बी सांस खींचती हुई बोली,—"काफिरोंकी क्या मजाल है ! खुदाने किया है ?"

उदयपुरी। सब वही करता है ; किन्तु हुआ क्या है ? क्या मैं सुन नहीं सकती ?

जेबु०। वह बात जुबानपर ला नहीं सकती। मरते समय बतला जाऊंगी।

उदय०। जो हो ; खुदा राजपूतोंके इस घमण्डका उन्हें बदला दें।

जेबु०। राजपूतोंका इसमें कुछ दोष नहीं।

यह बात कहकर जेबुन्निसा चुप हो गई। उदयपुरी भी कुछ न बोली। अन्तमें चञ्चलकुमारीके यहां जानेके लिये जेबुन्निसाने उदयपुरी बेगमसे बिदा मांगी।

उदयपुरीने कहा,—"क्या तुम्हें उसने बुलाया है।"

जेबु०। नहीं।

उदय०। तुम बादशाहकी लड़की हो ; बिना बुलाये कभी न आना।

जेबु०। मेरा अपना कुछ कार्य्य है।

उदय०। मुलाकात होनेसे पूछना, कि कितनी अशरफियां पानेसे गंवार-भुइहार हमें छोड़ देंगे ?

"पूछूंगी"—कहकर जेबुन्निसा वहांसे विदा हुई। पीछे चञ्चल-कुमारीको खबर करवाकर उससे मिली। चञ्चलकुमारी उससे पहलेकी भांति ससम्मान मिली ; उसका स्वागत किया। अन्तमें

पूछा,—"कहिये, रातको अच्छी तरह नींद आई थी न ?"

जेबु० । नहीं, आपके आज्ञानुसार किवाड़ आदि खुली रखने-के कारण मैं डरसे रातको सो न सकी ।

चञ्चल । तब तो आपने कुछ स्वप्न भी देखा न होगा ?

जेबु० । स्वप्न तो नहीं देखा ; पर प्रत्यक्ष मैंने कुछ देखा है ।

चञ्चल । अच्छा या बुरा ?

जेबु० । अच्छा या बुरा ; यह तो मैं बता नहीं सकती । अच्छा तो हो ही नहीं सकता ; किन्तु उस विषयमें मैं आपसे कुछ भीख चाहती हूं ।

चञ्चल । कहो ।

जेबु० । वह दृश्य क्या और एक बार देख सकती हूं ।

चञ्चल । दैवज्ञसे पूछे बिना कह नहीं सकती । पांच-छः दिन बाद दैवज्ञके यहां आदमी भेजूंगी ।

जेबु० । आज आदमी भेजा जा नहीं सकता ?

चञ्चल । शाहजादी ! इतनी जल्दी क्या है ?

जेबु० । इतनी जल्दी क्या ; यदि आप मुझे इसी वक्त उसे दिखा सकें, तो मैं आपकी बांदी होकर रहूंगी ।

चञ्चल । आश्चर्यकी बात है शाहजादी ! ऐसी क्या बात है ?

जेबुन्निसाने कुछ जवाब न दिया । उसकी आखोंसे अश्रु-धारा बह चली । उसकी आंखोंसे आंसू झरते देख चञ्चलकु-मारीको दया आई । चञ्चलने कहा,—"आप पांच-सात दिन और ठहरिये ; विचार करूंगी ।"

इस समय जेबुन्निसा हिन्दू-मुसलमानोंका भेद बिलकुल भूल गई । जहां उसे आना नहीं चाहिये, वहां वह गई । जिस बिछौने-पर चञ्चल बैठी हुई थी, उसपर जा खड़ी हुई । इसके बाद वह कटे हुए वृक्षकी भांति धड़ामसे चञ्चलके पैरोंपर गिर पड़ी

और उसके पैरोंपर सिर रखकर-पल्लपर पल्ल उलटकर अश्रुधारसे उसे भिगोने लगी। कहा,—"मेरी जान बचाइये, नहीं तो आज ही मर जाऊंगी।"

चञ्चलकुमारीने उसे पकड़कर उठाया। वह भी हिन्दू-मुसलमानका भेद भूल गई। उसने कहा,—"शाहजादी! तुम कल जिस प्रकार दरवाजा खोलकर सोई हुई थी, आज भी उसी प्रकार खोलकर सोना। जरूर तुम्हारी इच्छा पूरी होगी।" यह कहकर उसने शाहजादीको विदा की।

इधर उदयपुरी जेबुन्निसाकी बाट देख रही थी; किन्तु जेबुन्निसाने उसके साथ फिर भेंट न की। निराश होकर उदयपुरीने स्वयं चञ्चलकुमारीसे मिलनेकी आज्ञा चाही।

मुलाकात होनेपर उदयपुरीने चञ्चलकुमारीसे पूछा,—कितनी अशरफियां पानेपर वह उसे छोड़ देंगी। चञ्चलकुमारीने कहा,—"यदि बादशाह भारतवर्षकी तमाम मसजिदोंको मय जुमा-मसजिदके तुड़वा दें, मयूर-सिंहासन यहां भिजवा दें तथा प्रति वर्ष हमें राजकर देना स्वीकार करें, तो तुम्हें छोड़ दिया जा सकता है।"

उदयपुरी क्रोधसे अधीर हो गई। बोली—"गंवार भुंइहारको इतना घमण्ड! आश्चर्य है।"

यह कहकर उदयपुरी उठकर जाने लगी। चञ्चलकुमारीने हंसकर कहा,—"बिना हुक्म कहां जाती हो? तुम गंवार-भुंइहारकी बांदी हो—यह क्या तुम भूल गई हो?" इसके बाद एक परिचारिकाको हुक्म दिया,—"मेरी इस नई बांदीको और-और रानियोंको दिखा आओ। कहना, कि यह दाराशिकोहकी खरीदी हुई बांदी है।"

उदयपुरी रोती-रोती दासीके संग चली। दासी औरङ्गजेबकी बेगमको सब रानियोंके यहां दिखा लाई।

निर्म्मलने चञ्चलसे कहा,—"महारानी असल बात तो आप भूल ही रही हैं ? किस लिये उदयपुरीको पकड़वाया था ? ज्योतिषीकी भविष्यवाणी क्या भूल गईं ?"

चञ्चलकुमारी हंसकर बोली,—भूली नहीं हूं । उस दिन बेगम बड़ी दुखी हुई थी ; इसीसे उसे और कष्ट दे न सकी ; किन्तु बेगमने स्वयं ही अपनी ओरसे मुझे दयाहीन बनाया है ।

छठां परिच्छेद ।

शाहजादी भस्म हुई ।

आधी रात बीत गई है ; सब लोग चुपचाप सोये हुए हैं ; किन्तु जेबुन्निसाको इस समय भी चैन नहीं । वह उदयपुर-राजमहलके अपने कमरेमें पड़ी हुई तरह तरहकी चिन्ता कर रही है । वह तोपोंकी आवाज सुन सोच रही है, कि यह तोपें जो दग रही हैं, वह मुगलोंकी ओरकी हैं । मेरे पिताके पास ऐसी सेकड़ों तोपें हैं ; उनमें क्या एक भी मेरे हृदयके लिये नहीं ? कैसे मैं इन तोपोंके सामने छातीकर उसकी आगकी जलनसे अपना हृदय ठण्डा करूं ? कल जब हाथीपर सवार थी, तब मैंने तरह-तरहकी फौज और उसके हाथ तरह-तरहके अस्त्र देखे थे ; किन्तु उस समय तो मुझे मरनेकी जरा भी इच्छा न हुई ? हाथीसे कूद हाथियोंके पैर-तले भी कुचली जा सकती थी ; किन्तु उस समय मैंने वैसी चेष्टा एक बार भी न की । मरनेकी इच्छा होनेपर भी मरनेका उद्योग क्यों नहीं करती ? इस समय भी तो साथमें कितने ही हीरे हैं, एकका चूर्ण खाकर क्यों न प्राण दे दूं ? किन्तु मेरे मनमें इतनी शक्ति नहीं, कि उद्योग कर मर सकूं ।"

इसी समय एक तेज हवाके झकोरेने घरमें प्रवेशकर वहांकी सब रोशनी बुझा दी। अन्धकारमें जेबुन्निसा कुछ डरी। वह सोचने लगी,—"अभी थोड़ी ही देर पहले जब मरनेकी इच्छा करती थी, तब अब डरनेकी जरूरत ही क्या है? जो मरना चाहता है, उसे डर किस बातका? कल मरे मनुष्यको देखकर भी आज जीती हूं। जहां वह मरा हुआ मनुष्य गया है, वहीं जाना होगा, तब डर किस बातका है? बिहिश्त हमारे भाग्यमें लिखा नहीं; जहन्नममें जाऊंगी; शायद इसीसे डर लगता है! इतने दिनोंतक तो इन बातोंपर कुछ भी विश्वास न था। जहन्नम और बिहिश्त दोनोंको मैं केवल कहानी समझती थी; यहांतक, कि खुदा और दीनको भी मैं जुबानी जमाखर्च समझती; केवल भोग-विलासको ही संसारका सार जानती थी। अल्लाह! रहीम! तुमने क्यों ऐश्वर्य्य दिया था? ऐश्वर्य्यने ही मेरे जीवनको विषमय बनाया। उसीके घमण्डमें मैंने तुम्हें न पहचाना। मैं यह नहीं जानती थी, कि ऐश्वर्य्य सच्चा सुख नहीं; किन्तु तुम तो जानते थे! जान-सुनकर निर्दय हो क्यों तुमने मुझे कष्ट दिया? मेरी भांति ऐश्वर्य्य किसके नसीबमें है? मेरी भांति दुःखी कौन है?"

पलङ्गपर कहींसे एक कीड़ा आ गया था, उसने जेबुन्निसाको एक जगह काट खाया। जिस कोमल अङ्गपर पुष्पधन्वा भी शराघात करते समय धीरे-धीरे वाण छोड़ते हैं, अवलीलाक्रमसे उसी अङ्गमें कीड़ेने एक जगह काट खून निकाल दिया! कीड़ेके काटनेसे जेबुन्निसाको कष्ट-भयानक कष्ट होने लगा। अपना कष्ट देखकर जेबुन्निसा बोली,—"एक तुच्छ कीड़ेके काटनेसे मैं कातर हो रही हूं। स्वयं एक पिपीलिका—एक कीड़ेकी दंशनज्वाला बरदाश्त कर नहीं सकती और अवलीलाक्रमसे अपने प्राणाधिक

प्रिय मुबारकको मैंने काले सर्पसे कटवाया ! क्या ऐसा कोई नहीं, जो मुझे वैसा ही काला सांप ला दे ! चाहे सांप ला दे चाहे मुबारकको ला दे ।"

प्रायः देखा जाता है, कि किसी विषयमें बहुत देरतक मर्म्मभेदी चिन्ता करते समय भी कोई न कोई बात मुंहसे जोरसे बाहर निकल ही जाती है ; इसी तरह जेबुन्निसाकी कुछ अन्तिम बातें उसके मुंहसे एकाएक बाहर निकल आईं । वह वाक्य यह था,—"चाहे सांप ला दे, चाहे मुबारकको ला दे ।" किसीने उस अन्धकारके बीचसे ही उत्तर दिया,—"मुबारकको पानेपर क्या तुम न मरोगी ?"

"कौन है ?" कहती हुई जेबुन्निसा बिछौनेपर उठ बैठी । जैसे गीतध्वनि सुन हरिणी ऊपर मुंहकर उठ बैठती है, उसी तरह जेबुन्निसा उठ बैठी । "कौन है ? क्या सुना ? किसकी आवाज है ?"

उत्तर हुआ,—"क्या नहीं पहचानती ?"

जेबुन्निसाने कहा,—"किसकी ! जो स्वर्ग गया है, उसकी आवाज कैसी ? मुबारक ! तुम किस तरह बिहिश्तसे आते-जाते हो ? तुमने कल दर्शन दिया था—आज तुम्हारी बात सुन रही हूं,—सच बताओ, तुम मर गये हो या जीते हो ? क्या असीरुद्दीनने आ मुझसे झूठ कहा था ? तुम चाहे मृत पुरुष हो, चाहे जीवित ; किन्तु तुम कृपाकर आओ ; एक बार मेरे पलङ्गपर बैठो । यदि तुम छाया भी हो, तो भी मुझे डर नहीं । एक बार आओ ; बैठो ।"

उत्तर,—"क्यों ?"

जेबुन्निसाने कातर होकर कहा,—"मैं कुछ कहना चाहती हूं । मैंने जो कभी नहीं कहा, वही कहूंगी ।"

मुबारक (बताना नहीं होगा, कि मुबारक सशरीर उपस्थित है)

उस समय जेबुन्निसाके पलङ्गपर आ बैठा। जेबुन्निसाका शरीर हर्षसे कण्टकित तथा आह्लादसे परिप्लुत हुआ। अन्धकारमें मुक्तापंक्ति उसकी आंखोंसे बही। जेबुन्निसाने आदरसे मुबारकका हाथ अपने हाथमें रख लिया। इसके बाद उसने कहा,—"प्राणनाथ! तुम छाया नहीं हो। तुम चाहे जो बात कहकर मुझे भुलावो; पर अब मैं भूलने वाली नहीं। मैं तुम्हारी हूं; इससे अब मैं तुम्हें न छोड़ूंगी।" इसके बाद अचानक जेबुन्निसा पलङ्गसे नीचे उतर मुबारकके पैरोंपर गिरकर बोली,—"मुबारक! प्यारे मुबारक! तुम मुझे माफ करो। उस समय मैं ऐश्वर्य्यके मदमें मतवाली हो गई थी। मैं शपथकर कहती हूं, कि यदि तुम मुझे माफ कर दो, तो मैं फिर दिल्ली लौटकर न जाऊंगी। कहो तुम जीवित हो न!"

मुबारकने लम्बी सांस खींचकर कहा,—"मैं जीता हूं। एक राजपूतने कब्रसे निकाल चिकित्साकर मुझे जिलाया था, उसीके साथ मैं यहां आया हूं।"

जेबुन्निसाने उसका पैर नहीं छोड़ा। उसकी आंसुओंसे मुबारकका पैर भींग गया। मुबारक शाहजादीको हाथ पकड़ उठाने लगा; किन्तु वह न उठी। बोली,—"मुझपर दया करो; मुझे माफ करो।"

मुबारकने कहा,—"तुम्हें माफ किया है; यदि माफ न करता, तो तुम्हारे पास आता ही क्यों?"

जेबुन्निसाने कहा,—"यदि आये हो, यदि माफ किये हो, तो मुझे अपनाओ। अपनाकर जो इच्छा हो, सो करो। तुम मुझे जो कहोगे, मैं वही करूंगी। मुझे अब न त्यागना। मैं शपथकर कहती हूं, कि मैं अब दिल्ली जाना न चाहूंगी; आलमगीरके महलमें प्रवेश न करूंगी। मैं किसी शाहजादेसे विवाह किया नहीं चाहती; तुम्हारे ही साथ रहूंगी।

मुबारक सब भूल गया,—सर्पदंशनज्वाला भूल गया, ; अपने मरनेकी इच्छा भूल गया ; दरियाको भूल गया। जेबुन्निसाके प्रीति-शून्य कड़वे वाक्य भूल गया। केवल जेबुन्निसाकी अतुल रूपराशि उसके नयनोंमें समा गई ; जेबुन्निसाकी प्रेमपूर्ण कातरोक्ति उसके कानोंमें गूंजने लगी ; शाहजादीका घमण्ड चूर होते देख उसका मन पानी-पानी हो गया। तब मुबारकने पूछा,—"तो क्या तुम इस गरीबको पति बनानेके लिये राजी हो ?"

जेबुन्निसाने हाथ जोड़ डबडबाई आंखोंसे कहा,—"मेरा क्या ऐसा सौभाग्य है ?"

शाहजादी अब शाहजादी नहीं ; अब वह केवल मनुष्यमात्र है। मुबारकने कहा,—"तब निर्भय हो निःसङ्कोच मेरे साथ चली आओ।"

चिराग जलानेकी सामग्री मुबारकके पास थी। वह चिराग जला तथा उसे फानूसके भीतर रख बाहर आ खड़ा हुआ। इसी बीच उसके कथनानुसार जेबुन्निसाने अपने कपड़े-लत्ते ठीक कर लिये। इसके बाद मुबारक फिर भीतर गया और जेबुन्निसाका हाथ पकड़ कमरसे बाहर निकला। वहां कई पहरेदारिनें नियुक्त थीं। उनमें दो मुबारकके इशारेसे मुबारक और जेबुन्निसाके साथ चलीं। जाते-जाते जेबुन्निसाको समझाया, कि राजान्तःपुरमें किसी मर्दके आनेकी आज्ञा नहीं ; विशेषतः मुसलमानकी तो बात ही दूर है। इसलिये वह रातको आता है ; सो भी महारानीके विशेष अनुग्रह से ; उन्हींकी इच्छासे यह पहरेदारिनें भी साहाय्य कर रही हैं। सिंहद्वारतक हम दोनोको पैदल चलना होगा। बाहर मुबारकके लिये घोड़ा तथा जेबुन्निसाके लिये पालकी तय्यार है।

पहरेदारिनोंकी सहायतासे वह दोनो सिंहद्वारतक बाहर आ अपनी-अपनी सवारीपर सवार हुए। उदयपुरमें भी दो-चार मुसलमान सौदागर बसते थे ; इन्होंने महाराणासे आज्ञा लेकर नगरके

बाहर एक मसजिद भी बनवा ली थी; मुबारक जेबुन्निसाको इसी मसजिदमें ले आया। वहां एक मुल्ला, एक वकील और एक गवाह आदि उपस्थित थे। इन लोगोंकी सहायतासे जेबुन्निसा और मुबारकका निकाह हो गया।

पश्चात् मुबारकने जेबुन्निसासे कहा,—"अब तुम्हें जहांसे ले आया हूं, वहां पहुंचा आना होगा; क्योंकि तुम अबतक महाराणाकी बन्दिनी हो; किन्तु मैं आशा करता हूं, कि तुम शीघ्र छूट जाओगी।"

यह कह मुबारक जेबुन्निसाको फिर उसके शय्यागृहमें पहुंचा आया।

सातवां परिच्छेद।

बादशाहकी अलभिक्षा।

दूसरे दिन तीसरेपहर चञ्चलकुमारीके पास बैठी जेबुन्निसा प्रसन्नतापूर्वक बातें कर रही थी। दो रात जागनेके कारण उसका शरीर म्लान और दुश्चिन्तासे विशीर्ण हो गया था। जो जेबुन्निसा रत्नराशि और पुष्पराशिसे मण्डित हो शीशमहलके दर्पणोंमें अपनी प्रतिमूर्ति देख आप ही हंसा करती थी, यह वह जेबुन्निसा नहीं। जेबुन्निसा समझी है, कि शाहजादियां भी नारी हैं तथा उनका हृदय भी नारियोंका है; स्नेहशून्य नारी-हृदय जलशून्य नदीकी भांति केवल पङ्कमय है।

जेबुन्निसा इस समय अकपट भावसे गर्व्व त्याग बड़ी नम्रता-से रातकी सब घटनायें चञ्चलकुमारी से कह रही थी। चञ्चल-

कुमारी सब जानती थी। यह सब बातें कहकर जेबुन्निसाने हाथको जोड़ चञ्चलकुमारीसे कहा,—"महारानी ! अब मुझे कैद रखनेसे क्या फल होगा ? अब मैं यह बिलकुल भूल गई हूं, कि मैं आलमगीर बादशाहकी कन्या हूं। यदि आप अब मुझे उनके पास भेजें भी तो मेरी उनके पास जानेकी इच्छा नहीं। जानेसे भी शायद मेरा प्राण बचनेकी आशा नहीं; इसलिये मुझे छोड़ दीजिये ; मैं अपने पतिके साथ उनके देश तुर्कस्थान चली जाऊं।"

यह बात सुनकर चञ्चलकुमारीने कहा,—"इस विषयमें कुछ उत्तर देनेका अधिकार मुझे नहीं। मालिक महाराणा हैं। उन्होंने आपको रखनेके लिये मेरे पास भेजा है ; फलतः मैंने रखा है : किन्तु यह जो एक नई घटना हो गई है, उसका उत्तरदाता महाराणाका सेनापति माणिकलालसिंह है। मैं माणिकलालकी बहुत ही बाधित हूं ; इसीसे उसके कहनेसे इतना कर दिया है ; किन्तु छोड़ देनेके लिये मुझे कोई आज्ञा नहीं हुई है ; इसलिये इस विषयमें मैं आपको कोई वचन दे नहीं सकती।"

जेबुन्निसाने उदास होकर कहा,—"क्या मेरी यह प्रार्थना आप महाराणासे निवेदन कर नहीं सकतीं ? उनकी छावनी भी तो दूर नहीं। कल रातको पहाड़पर उनके तम्बूकी रोशनी दिखाई दे रही थी।"

चञ्चलकुमारीने कहा,—"पहाड़ जितना पास दिखाई देता है, वास्तवमें उतना पास नहीं होता। हमलोग पहाड़ी देशमें रहते हैं ; इसीसे यह सब बात जानते हैं। आप भी काश्मीर गई हैं, शायद आपको भी यह बातें याद हो सकती हैं ; किन्तु यह भरोसा नहीं, कि राणा इस बातमें राजी होंगे। यदि ऐसा सम्भव होता, कि उदयपुरकी थोड़ी सेना मुगलराज्यको इसी युद्धमें एक बारगी ही तहस-नहस कर सकेगी, यदि बादशाहसे हमें फिर सन्धि करनेकी सम्भा-

बना न होती, तो अवश्य ही वह आपको अपने पतिके साथ चले जाने की आज्ञा दे सकते ; किन्तु जब एक न एक दिन सन्धि अवश्य ही करनी होगी, तब आपलोगोंको भी बादशाहके पास अवश्य ही वापस भेजना पड़ेगा।"

जेबुन्निसा। यदि ऐसा हुआ, तो निश्चय ही मुझे कालके गालमें जाना पड़ेगा। इस निकाहकी बात सुनते ही बादशाह मुझे जहर खिलवा देंगे। और मेरे स्वामीकी तो बात ही छोड़ दीजिये ; अब दिल्ली जानेमें उनकी खैर नहीं। यदि गये, तो निश्चय ही उनकी मृत्यु होगी। महारानी ! इस विवाहसे क्या मतलब निकला ?

चञ्चल। ऐसा कोई उपाय किया जायेगा, जिससे कोई उत्पात खड़ा न हो।

इस तरह बातें हो ही रही थीं, कि इसी समय निर्मलकुमारी घबराई हुई वहां आ पहुंची। निर्मलने चञ्चलको प्रणाम करनेके बाद जेबुन्निसाको अभिवादन किया। जेबुन्निसाने भी उसे प्रत्याभिवादन किया। इसके बाद चञ्चलने पूछा,—"निर्मल ! इतनी व्यस्त क्यों ?"

निर्मल। एक जरूरी खबर है।

यह बात सुन जेबुन्निसा वहांसे चली गई। चञ्चलने पूछा,—"क्या कोई युद्धका समाचार है ?"

निर्मल। हां।

चञ्चल। सो तो लोगोंसे सुना है, कि चूहा बिलमें घुसा है और महाराणाने उस बिलका मुंह बन्द कर दिया है। सुना है, कि उसके बिलमें मर, सड़ जानेकी नौबत पहुंची है !

निर्मल इसके सिवा और एक बात है। चूहा बड़ा ही धूर्त्त है। मेरा वह कबूतर आज लौट आया है। बादशाहने उसे छोड़ दिया है।

चञ्चल। कबूतर क्या कोई पत्र ले आया है?

निर्म्मल। ले आया है।

चञ्चल। किसके नाम?

निर्म्मल। इमली बेगमके।

चञ्चल। क्या लिखा है?

निर्म्मलकुमारीने चिट्ठी निकाल उसका कुछ अंश इस तरह पढ़ सुनाया,—

"मैं तुमसे जितना स्नेह करता हूं, उतना स्नेह मैंने आजतक किसीसे भी न किया। तुम भी मेरी अनुगता हुई थी। लोगोंसे सुना होगा, कि आज पृथिवीश्वर बड़ी ही आपदामें है; अनाहार मरा चाहता है। दिल्लीका बादशाह आज एक टुकड़ा रोटीके लिये लालायित है। ऐसी दशा में क्या कोई उपकार कर नहीं सकती? यदि हो सके, तो चेष्टा करना। ऐसे सङ्कटके समयका उपकार कभी भूल न सकूंगा।"

चिट्ठीका यह मजमून सुन चञ्चलकुमारीने पूछा,—"क्या उपकार करोगी?"

निर्म्मलने कहा,—मैं क्या उपकार कर सकती हूं; हां, और कुछ हो चाहे न हो; किन्तु बादशाह और जोधपुरी बेगमके लिये कुछ खानेकी चीजें अवश्य भेज दूंगी।"

चञ्चल। क्योंकर भेजोगी? वहां तो इस समय मनुष्य आ-जा नहीं सकते।

निर्म्मल। सो अभी बता नहीं सकती। मुझे एक बार तम्बूमें जानेकी आज्ञा दीजिये। वहां जानेपर, क्या करना उचित होगा, स्थिर करूंगी।

चञ्चलकुमारीने जानेकी आज्ञा दी। निर्म्मल हाथीपर सवार हो तथा पहरेवालोंसे घिर स्वामीके पास चली। जाते ही माणिकलाल-

से मुलाकात हुई। माणिकलालने पूछा,—"युद्ध करने आई हो क्या?"

निर्म्मल। किससे युद्ध करूंगी? क्या तुम मुझसे युद्ध करने योग्य हो?

माणिक। मैं तो उस योग्य नहीं; किन्तु आलमगीर बादशाह तो हैं!

निर्म्मल। मैं उनकी इमली बेगम हूं; उनसे मुझसे युद्ध कैसा? मैं उनके उद्धारके लिये आई हूं। मैं जो कुछ फरमा रही हूं, उसे ज़रा ध्यानपूर्व्वक सुनो।

इसके बाद माणिकलाल और निर्म्मलकुमारीमें क्या बातें हुईं, सो हमें मालूम नहीं। केवल इतना जानती हैं, कि बहुत सी बातें हुईं।

माणिकलाल निर्म्मलकुमारीको उदयपुर लौटा स्वयं राजसिंहसे मिलनेके लिये उनके तम्बूकी ओर रवाना हुआ।

आठवां परिच्छेद।

आग बुझानेकी सलाह।

माणिकलाल महाराणासे मिला। प्रणाम करनेके बाद उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की,—"यदि इस दासको किसी अन्य युद्ध-क्षेत्रमें भेजा जाता, तो यह बड़ा ही अनुगृहीत होता।"

महाराणाने पूछा,—"क्यों, यहां क्या हुआ है?"

माणिकलालने उत्तर दिया,—"यहां अब कोई काम नहीं। यदि कुछ है, तो भूखों मुगलोंका सूखा मुंह देखना और उनका

आर्त्तनाद सुनना। मैं कभी-कभी पर्व्वतके ऊपरवाले वृक्षोंपर चढ़ देख आता हूं ; किन्तु यह काम अब मुझसे हो न सकेगा। मैं सोचता हूं, कि इतने हाथी, इतने घोड़े, इतने ऊंट और इतने मनुष्योंके रंध्रपथमें मरकर सड़ जानेसे दुर्गन्धके कारण उदयपुरमें भी कोई न बचेगा ; भयानक महामारी फैल जायेगी।"

महाराणाने कहा,—"इससे तुम्हारी रायमें मुगल-फौजको भूखे-प्यासे मार डालना उचित नहीं?"

माणिक। मैं तो यही समझता हूं। युद्धमें लाखों मनुष्योंको मरते देखकर भी दुःख नहीं होता। बैठे-बैठे भूखे-प्यासे एक आदमी-का मर जाना भी दुःखदायी है।

महाराज। तब उनके सम्बन्धमें क्या करना चाहिये?

माणिक। महाराणा साहब! मुझमें इतनी बुद्धि कहां, कि मैं आपको सलाह दूं ; किन्तु मेरी तुच्छ बुद्धिमें सन्धि करनेका यही उत्तम समय है। पेटकी ज्वालाके समय मुगल जैसे नरम होंगे, भरे पेट वैसे नहीं रहेंगे। मेरी राय है, कि राजमन्त्रियों और सेनापतियों-को बुला तथा परामर्शकर इस विषयमें मीमांसा करना उचित है।

राजसिंहने इस प्रस्तावसे सहमत हो इसे स्वीकार किया। उनकी भी इच्छा नहीं थी, कि भूखके कारण इतने मनुष्योंका प्राण जाये। हिन्दू क्षुधार्त्तको अन्न देना परम धर्म्म समझते हैं ; इसीलिये हिन्दू-शत्रुओंको भी सहजमें बिना अन्न मारना नहीं चाहते।

सन्ध्याको शिविरमें दरबार लगा। प्रधान सेनापति और प्रधान राजमन्त्रीगण वहां मौजूद थे। राजमन्त्रियोंमें प्रधान थे, दीनदयालु-सिंह ; वह भी मौजूद थे। माणिकलाल भी था।

राजसिंहने विचार्य्य-विषय सबको अच्छी तरह समझा उसके सम्बन्धमें सभासदोंकी राय पूछी। बहुतोंने कहा,—"मुगल वहीं मरकर सड़ जायें। औरङ्गजेबको पकड़ उनके लिये कब्र खुदवा-

ऊँगा। यदि वह नहीं सकेगा, तो डोमोंसे गढ़े खुदवा उन्हें मट्टीमें तुपवा दूँगा। मुगलोंने वारंवार राजपूतोंका जो अनिष्ट किया है, उसके स्मरण होनेपर किसीकी इच्छा न होगी, कि वह मुगलोंको हाथमें पा छोड़ दे।"

इसके उत्तरमें महाराणाने कहा,—"मान लिया, कि इन मुगलों-को वहीं भूखों मारकर मट्टीमें तोप दिया जायेगा; किन्तु औरङ्गजेब और औरङ्गजेबकी इस सेनाके मर जानेसे ही तो मुगल निःशेष हो न जायेंगे। औरङ्गजेबके मरनेपर आलमशाह बादशाह होगा। शाह आलमके साथ दक्षिण-विजयिनी महासैन्य पर्व्वतके उस पार सशस्त्र उपस्थित है। हम क्या इन सबको एक बारगी ही ध्वंस कर सकेंगे? यदि न सका, तो अवश्य एक न एक दिन सुलह करनी ही होगी। यदि सुलह करनी हो, तो इससे अच्छा समय और कब आयेगा? इस समय औरङ्गजेबका प्राण कण्ठागत है; इससे इस समय उससे जो मांगोगे वही पाओगे। समय निकल जानेपर क्या यह सुविधा रहेगी।"

दीनदयालुसिंहने कहा,—"नहीं मिलेगा न सही; किन्तु ऐसे महापापिष्ठ पृथिवीके कण्टकस्वरूप औरङ्गजेबको मार डालनेसे पृथिवीका पुनरुद्धार समझना होगा। ऐसा पुण्य और किसी काममें नहीं। आशा है, कि महाराज मेरी बात स्वीकार करेंगे।"

महाराणा राजसिंहने कहा,—"मैंने तो प्रायः सभी मुगल-बादशाहोंको पृथिवीका कण्टक देखा। औरङ्गजेब क्या शाहजहां-से भी नराधम है? खुसरू द्वारा हमारा जितना नुकसान हुआ है, उतना क्या औरङ्गजेबसे हुआ है? इसका क्या ठीक है, कि शाह-आलम अपने बाप-दादोंसे भी दुराचारी न निकलेगा? यदि तुम लोगोंको यह भरोसा हो—यह भरोसा मुझे भी है—कि हमलोग इन चारो मुगल-सेनाको मार डालूँगा, तो सोचकर देखो, कि

असंख्य मनुष्योंकी हत्याके बाद यह आशा पूरी होगी। असंख्य राजपूत विनष्ट होंगे। तब कितने राजपूत बचेंगे? हमलोग थोड़े हैं, और वह बहुत। हमारी संख्या कम होजानेपर यदि फिर मुगल आयें, तो किसके बाहुबलसे हमलोग उन्हें फिर मार भगायेंगे?"

टीमदयालुसिंहने कहा,—"महाराज! समूचे राजपूतानेके मिल जानेपर मुगलों को सिन्धुपार करनेमें कितनी देर लगेगी?"

महाराणाने कहा,—"यह बात सच है; किन्तु क्या कभी ऐसा हुआ है? इस समय भी तो मैं दिन-रात यही कोशिश करता हूं; किन्तु कहां, वह कोशिश पूरी होनेकी तो कोई उम्मेद नहीं? ऐसी दशा है, ऐसी आशा क्योंकर की जाये?"

टीमदयालुसिंहने कहा,—"ऐसी आशा नहीं, कि सन्धि होनेपर भी औरङ्गजेब सन्धि मानेगा! ऐसा मिथ्यावादी भण्ड पृथिवीमें कभी जन्मा न था। छूट जानेपर वह सन्धि-पत्रको फाड़कर फेंक देगा और जो करता था, वही करेगा।"

महाराणाने कहा,—"ऐसा सोचकर तो सन्धि की नहीं जाती; तो क्या यही सबकी राय है?"

इस तरह बहुत देरतक विचार हुआ। अन्तमें सबने राणाकी बातका याथार्थ्य स्वीकार किया। सुलह करनेकी बात ही स्थिर हुई।

इसी समय किसीने आपत्ति की और कहा,—"औरङ्गजेबने तो सन्धि आदि करनेके लिये कोई दूतादि नहीं भेजा; उसे गर्ज है या हमें।"

इसके उत्तरमें राजसिंहने कहा,—"दूत आयेगा किधरसे? उस खोहसे एक चींटीके निकलनेकी राह तो तुमने रखी ही नहीं।"

टीमदयालुसिंहने कहा,—"तब हम लोगोंका दूत क्योंकर जायेगा? उस बार औरङ्गजेबने हमारे दूतको मार डालनेकी आज्ञा

दी थी। इस बार भी वह वैसी ही आज्ञा न देगा ; इसका क्या ठिकाना है ?"

राणा राजसिंहने कहा,—"यह निश्चय है, कि इस बार वह दूतको मारनेका नामतक न लेगा ; क्योंकि कपट-सन्धिसे भी इस समय उसका मङ्गल है। हां, यह बात अवश्य है, कि वहां-तक दूत पहुंचेगा कैसे ?"

महाराणाको यह बात सुन माणिकलालने प्रार्थना की,—"यह भार मुझे सौंपा जाये। मैं महाराणाका पत्र औरङ्गजेबको दे उसका जवाब ला दूंगा।"

सबने उसकी बातपर विश्वास किया ; क्योंकि सब लोग जानते, कि कौशल और साहसमें माणिकलाल अद्वितीय है ; इसलिये पत्र लिखनेकी आज्ञा हुई। प्रधान मन्त्री दीनदयालुसिंहने पत्र लिख-कर प्रस्तुत किया। उस पत्रका मतलब यह था, कि बादशाहको अपनी समूची सेना मेवाड़से हटा लेनी होगी। मेवाड़में गोहत्या और मन्दिर तुड़वाना बन्द हो जायेगा। वह जिजिया लेना भी बन्द कर देंगे। यदि बादशाहको यह बातें स्वीकार हों तो वह लिख भेजें, महाराणा राजसिंह उनकी राह साफ कर देंगे। वह आनन्दपूर्व्वक जहां चाहें चले जायें।

पत्र सब सभासदोंको पढ़कर सुना दिया गया। पत्र सुनकर माणिकलालने कहा,—"बादशाहकी स्त्री और कन्या हमलोगोंके यहां कैद है ; वह क्या हमलोगोंके यहां ही रहेंगी।"

माणिकलालकी बात सुनते ही सब लोग खिलाखिलाकर हंस पड़े। सबने एकस्वरसे कहा,—"हां यहीं रहेंगी, छोड़ी न जायेंगी।" किसीने कहा,—"रहने दो वह सब महाराणाका आंगन झाड़ेंगी।" किसीने कहा,—"उन्हें ढाके भेज दो, हिन्दू बन वैष्णवी-सज हरि नाम जपेंगी।" किसीने कहा,—"उनके मूल्यस्वरूप एक

करोड़ रुपये बादशाहसे वसूल करना चाहिये ।" इत्यादि तरह-तरहका प्रस्ताव हुआ । महाराणाने कहा,—"दो मुसलमान बांदियों-के लिये सुलह परित्याग करना अच्छा नहीं । लिख दो ; उन्हें छोड़ दूंगा ।"

ऐसा ही पत्र लिख माणिकलालके हवाले किया गया पीछे सभा भङ्ग हुई ।

नवां परिच्छेद ।

आगमें जलका छींटा ।

सभा भङ्ग होनेपर भी माणिकलाल वहांसे नहीं गया । सबके चले जानेपर माणिकलालने धीरे-धीरे महाराणासे कहा,—"मुबारकको इनामकी बात इसी समय महाराणाको स्मरण करा देना उचित है ।"

राजसिंहने पूछा,—"वह क्या चाहता है ?"

माणिक । बादशाहकी जो कन्या हमलोगोंके यहां कैद है, वह उसे ही चाहता है ।

राजसिंह । यदि उसे बादशाहके पास वापस भेजा न जायेगा, तो सुलह न होगी । साथही स्त्रीसे मैं कैसे जबरदस्ती करूंगा ?

माणिक । जबरदस्ती करनी न पड़ेगी । कल रातको शाहजादी-से मुबारकका व्याह हो गया है ।

राज० । यह बात शाहजादी यदि बादशाहसे कह देगी, तो आप ही झगड़ा मिट जायेगा ।

माणिक । किसी कदर ; क्योंकि दोनोंका शिर उतार लिया जायेगा

राजसिंह । क्यों ?

माणिक । शाहजादियोंका विवाह शाहजादोंके सिवा किसी दूसरेसे हो नहीं सकता । इस शाहजादीने एक साधारण फौजी अफसरसे

विवाहकर दिल्लीके बादशाही खान्दानमें कलङ्क लगाया है। सबसे बड़ा अपराध तो यह है, कि उसने बादशाहको बिना जनाये ही यह शादी की है; इसके लिये शाहजादीको रङ्गमहलके प्रथानुसार अवश्य ही जहर खाकर मरना पड़ेगा। और मु... सांपके विषसे यदि मरा नहीं, तो अबके उसे हाथीके पैरतले कुचलवा या सूलीपर चढ़ा दिया जायेगा। यदि यह अपराध भी माफ हो जाये, तो उसने महाराणाका जो उपकार किया है, उसके लिये उसे कभी माफी मिल न सकेगी। इसके सिवा बिना आज्ञा शाहजादीसे व्याह करनेके लिये भी वह फांसीपर लटकनेको बाध्य है।

राजसिंह। क्या मैं इसका कुछ प्रतिकार कर सकता हूं ?

माणिक। हां, यदि आप यह ठान लें, कि औरङ्गजेब अपने कन्या दामादको माफ न करेंगे, तो मैं सुलह न करूंगा।

राजसिंहने कहा,—"ऐसा करनेके लिये मैं राजी हूं। उन दोनोंके लिये मैं एक अलग पत्र बादशाहको लिखता हूं; उसे भी तुम उस पत्रके साथ ले जाओ। औरङ्गजेब कन्याको माफ कर सकते हैं; किन्तु फिलहाल मुबारकको माफ करनेकी बात स्वीकार करनेपर भी मुझे विश्वास नहीं, कि वह उसे छोड़ देंगे। जो हो, यदि मुबारक इसमें राजी हो, तो मैं यह करनेके लिये प्रस्तुत हूं।"

यह कहकर महाराणा राजसिंहने एक पत्र अपने हाथों लिख माणिकलालको दिया। माणिकलाल दोनों पत्र ले उसी रात वहांसे उदयपुरको रवाना हुआ।

उदयपुरमें पहुंच माणिकलालने पहले निर्म्मलकुमारीसे सब हाल कहा। निर्म्मल सन्तुष्ट हुई। उसने भी एक पत्र बादशाहको इस मतलबका लिखा,—

शाहंशाह !

बांदीका असंख्य कोरनिस। हुजूरने जो हुक्म दिया था, बांदी

उसे बजा लाई है। अब केवल हुजूरकी मंजूरीकी देर है। मेरी आखरी भीख याद रख सन्धि कर लीजियेगा।

हुजूरकी—
इमली बेगम।"

यह पत्र निर्म्मलने माणिकलालको दिया। उसके बाद निर्म्मलने जेबुन्निसासे सब हाल कह सुनाया। वह भी सुनकर प्रसन्न हुई। इधर माणिकलालने सब हाल मुबारकको कह सुनाया; मुबारक कुछ न बोला। माणिकलालने उसे सावधान करनेके लिये कहा,—"भाई मुबारक! मुझे जरा भी विश्वास नहीं, कि तुम्हारे लौट जानेपर तुम्हें बादशाह माफ कर देंगे!"

मुबारकने कहा,—"न करेंगे, न सही।"

दूसरे दिन सवेरे माणिकलालने निर्म्मलकुमारीका कबूतर ले उन चिट्ठियोंको काट छोटीकर उस कबूतरके पैरमें बांध दिया। कबूतरने छूटते ही आकाशकी राह ली। यद्यपि कई चिट्ठियां होनेसे कबूतरको उड़नेमें बड़ा कष्ट हो रहा था, तथापि वह किसी तरह उड़कर वहां पहुंचा, जहां बादशाह औरङ्गजेब ऊपरको मुंह किये हुए आकाशकी ओर देख रहे थे। बादशाहने उसके पैरसे पत्र खोल लिये।

दशवां परिच्छेद।

आग बुझते-बुझते उदयपुरी जली।

कबूतर शीघ्र ही औरङ्गजेबसे जवाब ले आया। राजसिंहकी सब शर्त्तें औरङ्गजेबने स्वीकार कीं। केवल एक झगड़ा उन्होंने लगा रखा; लिखा,—"चञ्चलकुमारीको मुझे दे देना होगा।" राज-

सिंहने इसका जवाब लिखवाया,—"यदि आप नहीं मानते, तो ससैन्य आपकी कब्र मैं यहीं बनानेको प्रस्तुत हूं।" लाचार औरङ्गजेबने अपनी इच्छा परित्याग की। उन्होंने सन्धिकी शर्त्तोंसे राजो हो मुंशी द्वारा उस मतलबका एक सन्धिपत्र लिखा उसपर अपना पञ्जा छाप दिया। साथ ही अपने हाथसे उसपर 'मञ्जूर' शब्द भी लिख दिया। जेबुन्निसा और मुबारकको भी माफ करनेके लिये बादशाहने मंजूर किया; किन्तु साथ ही लिखा, कि इस विवाहकी बात किसीसे कहा न जाये। यह भी स्वीकार किया, कि मैं ऐसा प्रबन्ध कर दूंगा, जिससे मेरी कन्या अपने पतिका दर्शन कर सकेगी।

महाराणा राजसिंहने सन्धिपत्र पाते ही मुगल-फौजको छोड़ देनेकी आज्ञा दी। राजपूतोंने हाथी आदिकी सहायतासे पेड़-पत्थरादि खींचकर बाहर किया। मुगल हठात् आहार्य्य कहां पायेंगे; यह सोच तथा दयाकर राजसिंहने कितने ही हाथियोंपर लाद बहुत सी आहार्य्य वस्तु उपहारस्वरूप भेजी तथा अन्तमें उदयपुरी, जेबुन्निसा और मुबारकको अपने पास भेज देनेके लिये उदयपुर आज्ञा भेजी। यह आज्ञा उदयपुर पहुंचते ही निर्म्मलने चञ्चलसे कहा,—"क्यों, बेगमने तुम्हारी चिलम नहीं भरी?" यह कहकर निर्म्मलने उदयपुरीसे कहा,—"मैं जिस कार्य्यके लिये आपको दिल्ली निमन्त्रण देने गई थी, वह कार्य्य तो आपने किया ही नहीं?"

उदयपुरीने कहा,—"तुम्हारी जीभ मैं उखड़वा लूंगी। तुम्हारी क्या मजाल, कि तुम मुझसे तम्बाकू भरवाओ! तुमजैसे छोटे लोगोंकी क्या ताकत, कि बादशाहकी बेगमको कैद रखो? क्यों, इस समय कैसा छोड़ना पड़ा; किन्तु जो अपमान तुमलोगोंने किया है, उसका बदला मैं अवश्य लूंगी। उदयपुरका नामो-निशानतक रहने न दूंगी।"

उदयपुरीकी बात सुन चञ्चलने कहा,—"सुना है, कि महाराणाने दयाकर बादशाहको छोड़ दिया है। आप उसके लिये एक मोठी बाततक कहना नहीं जानतीं; इसलिये आप छोड़ी न जायेंगी। आप दासियोंके महलमें जा मेरे लिये तम्बाकू भर लाइये।"

जेबुन्निसाने कहा,—"यह क्या महारानी! आप इतनी निठुर हैं?"

चञ्चलकुमारीने कहा,—"आप जाना चाहती हों, तो जाइये। तुम्हें अब मैं न छोड़ूंगी।"

जेबुन्निसाके बहुत-कुछ आवेदन-निवेदन करनेपर अन्तमें उदयपुरी भी कुछ नरम हुई; किन्तु चञ्चलकुमारी इस समय बहुत गरम है। दयाकर उसने केवल यही कहा,—"मेरे लिये केवल एक बार तम्बाकू भर दें, तब मैं जाने दूंगी।"

उदयपुरीने कहा,—"मैं तम्बाकू भरना नहीं जानती।"

चञ्चलकुमारीने कहा,—"दासियां सिखा देंगी।"

लाचार उदयपुरी राजी हुई। दासियोंने तम्बाकू भरना सिखा दिया। उदयपुरीने चञ्चलकुमारीके लिये तम्बाकू भरा।

अन्तमें चञ्चलकुमारीने उसे सलामकर विदा करते समय कहा,—"यहांकी सब बातें बादशाहसे कहियेगा तथा उन्हें स्मरण करा दीजियेगा, कि मैंने ही लात मारकर उनके चित्रकी नाक तोड़ दी थी! और भी कहियेगा, कि यदि फिर वह किसी हिन्दू-बालाके अपमानकी इच्छा करेंगे, तो मैं केवल चित्रको लात मारकर ही सन्तुष्ट न हूंगी।"

उस समय निदाघके मेघकी भांति सजल-कान्ति हो उदयपुरी वहांसे विदा हुई।

बेगम और शाहजादीको पा औरङ्गजेब बेतसे पीटे हुए कुत्तेकी भांति पूंछ दबा राजसिंहके सामनेसे भाग गये।

ग्यारहवां परिच्छेद ।

अग्निकाण्डमें तृषिता चातकी ।

बेगम आदिको विदाकर चञ्चलकुमारीने फिर अन्धकार देखा। मुगल हार गये। बादशाहकी बेगमने उसकी सेवा की; किन्तु तिसपर भी राणाने कुछ न कहा। चञ्चलकुमारीको रोते देख निर्म्मल उसके पास आ बैठी। निर्म्मल चञ्चलके मनका भाव समझ गई थी; इससे उसने चञ्चलसे कहा,—"महाराणाको क्यों नहीं यह बात याद दिला देती?"

चञ्चलने कहा,—"तुम पागल हो गई हो क्या? स्त्री होकर क्या यह बात किसीसे बारंबार कही जा सकती है?"

निर्म्मल। तब रूपनगर अपने पिताको आनेके लिये क्यों नहीं लिख भेजती?

चञ्चल। क्यों? क्या उस पत्रका जवाब भूल गया? उस पत्रके उत्तरके बाद फिर पत्र लिखूंगी?

निर्म्मल। पितासे क्रोध-अभिमान कैसा?

चञ्चल। क्रोध और अभिमान कुछ भी नहीं। एक बार लिखकर जो शाप पा चुकी हूं, उससे अब भी हृदय कांप उठता है! ऐसी दशामें क्या फिर लिखनेकी हिम्मत हो सकती है?

निर्म्मल। उस बार तो विवाहके लिये लिखा था।

चञ्चल। इस बार किसलिये लिखूंगी?

निर्म्मल। यदि महाराणाने कोई बात न उठाई, तो पित्रालयमें

जा रहना ही अच्छा है ; औरंगजेब अब उधर ताकेगा भी नहीं ; इसीलिये पत्र लिखनेके लिये कह रही थी। पितालयके सिवा और क्या उपाय है ?

चञ्चल कुछ उत्तर दिया चाहती थी ; किन्तु उसकेमुंहसे कोई शब्द न निकला। वह रोने लगी। निर्म्मल भी उपर्युक्त बात कह कुछ लज्जित हुई थी।

चञ्चल आंखसे आंसू पोंछ लज्जासे कुछ हंसी। निर्म्मल भी हंसी। हंसते-हंसते निर्म्मलने कहा,—"मैं दिल्लीके बादशाहके सामने भी कभी लज्जित हुई न थी ; किन्तु तुमसे लज्जित हुई ; यह दिल्लीके बादशाहके लिये बड़ी लज्जाकी बात है। अच्छा, एक बार तुम हमलो बेगमका मुंशीपन और देखो। दावात-कलम लेकर लिखने बैठो ;—"मैं बोलती जाती हूं।"

चञ्चलने पूछा,—"किसे लिखूं ? माताको या पिताको ?"

निर्म्मलने कहा,—"पिताको।"

चञ्चलके यथायोग्य लिख लेनेपर निर्म्मल बोलने लगी,—"इस समय मुगल-बादशाह महाराणासे" बादशाहतक लिखकर चञ्चलकुमारीने कहा,—"महाराणासे" न लिख "राजपूतोंसे" लिखूंगी। निर्म्मलकुमारीने मुस्कराकर कहा,—अच्छा वही लिखो। इसके बाद निर्म्मलके कथनानुसार चञ्चल लिखने लगी,—"हार राजपूतोंसे भाग गये हैं। फिलहाल हमपर उनके जबरदस्ती करनेकी सम्भावना नहीं। ऐसी दशामें इस समय आप अपनी कन्याको क्या हुक्म देते हैं ? मैं आप हीके अधीन—"

पीछे निर्म्मलने कहा —"महाराणाके अधीन नहीं !"

चञ्चलने कहा,—"दूर हो, पगली" चञ्चलने वह बात न लिखी। निर्म्मलने कहा, अच्छा लिखो,—"और किसीके अधीन नहीं।" लाचार चञ्चलने यही लिखा।

यह पत्र लिख जानेके बाद रूपनगर भेज दिया गया। उत्तरमें रूपनगरके रावने लिख भेजा,—"मैं दो हजार सिपाहियों सहित उदयपुर आ रहा हूं ; राह साफ रखनेके लिये राणासे कह देना।"

इस आश्चर्यजनक उत्तरका अर्थ बहुत सोचने विचारनेपर भी चंचल और निर्म्मल समझ न सकीं। अन्तमें उन्होंने विचारकर स्थिर किया, कि जब सिपाहियोंको जिक्र है, तब इस बातकी खबर राणाको भी कर देनी चाहिये। निर्म्मलकुमारीने यह खबर माणिकलालके पास भिजवा दी।

राणा भी ऐसी ही उलझनमें पड़े। वह चञ्चलकुमारीको भूले न थे ; उन्होंने भी विक्रम सोलङ्कीको पत्र लिखा था। पत्रमें चञ्चल-कुमारीके विवाहके सम्बन्धकी बातें ही लिखी थीं। राणाने यह स्मरण करा दिया था, कि विक्रमसिंहने अपनी कन्याको शाप दिया था ; साथ ही यह भी स्मरण करा दिया, कि उन्होंने यह भी स्वीकार किया था, कि जिस समय वह राजसिंहको योग्य पात्र समझेंगे, उस समय आनन्दपूर्व्वक वह उन्हें अपनी कन्या संप्रदान करेंगे। राणाने पत्रमें पूछा,—"अब आप क्या आज्ञा करते हैं ?"

इसी पत्रके उत्तरमें विक्रमसिंहने लिखा था,—"मैं दो हजार घुड़सवारों सहित आता हूं। राह साफ रखियेगा।"

राजसिंह भी चञ्चलकी भांति इसका खुलासा अर्थ समझ न सके। उन्होंने सोचा,—"केवल दो हजार घुड़सवार ले विक्रमसिंह हमारा क्या करलेंगे ? आयें, मैं सावधान हूं।" इससे उन्होंने आज्ञा प्रचार करा दी, कि विक्रमसिंह सोलङ्कीके आनेमें कोई रोक-टोक न करे।

बारहवां परिच्छेद ।

आग फिर जली !

उदयसागरके किनारे लौटकर औरङ्गजेबने वहां शिविर प्रतिष्ठित-करा रात बिताई। सैनिक और बाहनोंने भर पेट भोजनकर आन बचाई। पेट भर जानेपर फौजी सिपाहियोंको आनन्दकी सूझी तथा उनमें तरह-तरहकी रसिकता होने लगी। एक मुगलने कहा,—"हिन्दूके राज्य में आये थे; इसलिये हमलोगोंने एक दिन मानो एकादशीका व्रत किया था।" उसकी यह बात सुनकर एक मुगलानीने कहा,—"यह देख मैं बहुत ही खुश हुई, कि तुम अबतक जीते हो। तुम्हारी मृत्युके उपलक्ष्यमें मैं तो एक दिन फाका कर चुकी।" एक वेश्या कुछ शौकीन मुगलोंके सामने गीत गा रही थी; गाते-गाते उसका ताल भङ्ग हो गया, तब एक श्रोताने पूछा,—"बीबी साहबा! ताल भङ्ग हो गया; मामला क्या है?" गायिकाने कहा,—"आप लोगोंकी जो वीरता देखी है, उससे अब हिन्दुस्तानमें रहनेकी हिम्मत नहीं। उड़ीसा जानेकी इच्छासे ताल भङ्ग करना सीखती हूं।" कोई उदयपुरीके हरे जानेकी बात छेड़ अफसोस करने लगा। कोई हिन्दू सिपाही रावण-कृत सीता-हरणसे उदयपुरीके हरणकी तुलना करने लगा। किसीने उसके उत्तरमें कहा,—"बादशाह इतने बानरों-को साथ ले आये थे, तथापि सीताका उद्धार क्यों न हुआ?" किसी-ने कहा,—"हम लोग सिपाही हैं—बन्दर नहीं; इसीसे हमारी हार हुई।" किसीने उत्तर दिया,—"तुम केवल घास काटना जानते हो तो पेड़-पल्लव कौन काटेगा?" इसी तरह हंसी-दिल्लगी चलने लगी।

इधर बादशाहके शिविरस्थ रङ्गमहलमें प्रवेश करते ही जेबुन्निसा उनके सामने हाथ जोड़कर आ खड़ी हुई। बादशाहने जेबुन्निसा-से कहा,—"मैं समझता हूं, कि तुमने जो कुछ किया है, अपनी इच्छासे नहीं ; इसलिये तुम्हें माफ करता हूं । किन्तु सावधान! विवाहकी बात किसीसे न कहना।"

इसके बाद बादशाह उदयपुरीसे मिले । उदयपुरीने अपने अप-मानकी सब बातें आद्योपान्त असलीसे भी कुछ बढ़ाकर कहीं, औरङ्गजेब सुनकर बहुत ही कुपित और दुःखित हुए ।

दूसरे दिन दरबार बैठनेसे पहले एकान्तमें बुला बादशाहने मुबारकसे कहा,—"इस समय मैं तुम्हारा कुसूर माफ करता हूं ; क्योंकि तुम मेरे दामाद हो। अपने दामादको नीचे पदपर भी रख नहीं सकता ; इसलिये तुम्हें दो हजारी मनसब-दारका पद प्रदान किया गया । परवाना आजही निकल जायेगा ; किन्तु इस समय तुम यहां रह न सकोगे ; क्योंकि शाहजादा अकबर पहाड़में मेरी ही भांति फंसे हुए हैं ; उनके उद्धारके लिये दिलेरखां फौज सहित आगे बढ़ रहे हैं । वहां तुम्हारे जैसे वीरकी बहुत ही जरूरत है। तुम आज ही दिलेरकी सहायताके लिये रवाना हो जाओ।"

मुबारक यह सब बातें सुन प्रसन्न न हुआ ; क्योंकि वह जानता था, कि औरङ्गजेबका यह आदर मङ्गलजनक नहीं ; किन्तु मनमें जो कुछ ठान लिया था, उससे वह इन बातोंसे जरा भी दुःखित न हुआ । बड़ी विनतीके साथ बादशाहसे विदा हो वह दिलेरखांके तम्बूकी ओर जानेका उद्योग करने लगा ।

इसके बाद एक विश्वासी दूत द्वारा बादशाहने दिलेरखांके पास एक पत्र भेजा । पत्रका मतलब यह था, कि मुबारकखांको दो हजारी मनसबदार नियतकर तुम्हारे पास भेजा है उसे एक दिन भी

जीता न रखना। युद्धमें मरे तो ठीक ही है; नहीं तो जिस तरह हो उसे मार डालना।"

दिलेर मुबारकको पहचानता न था। उसने मन ही मन बादशाहकी आज्ञा पालन करना स्थिर किया।

इसके बाद औरङ्गजेबने आम-दरबारमें बैठ अपनी इच्छा प्रकाश की। कहा,—"हमलोगोंने जङ्गलियोंके फेरमें पड़कर सुलह की है; इसलिये वह शर्त्तें माननीय नहीं। एक क्षुद्र ज़मीन्दारसे बादशाहको सुलह कैसी? मैंने सुलह-नामा फाड़कर फेंक दिया है। सबसे बड़ी बात तो यह है, कि उसने रूपनगरकी राजकुमारीको हमें नहीं लौटाया। रूपनगरवालीको उसके पिताने मुझे दिया है; इसलिये उसपर राजसिंहका कोई अधिकार नहीं। उसे पाये बिना मैं राजसिंहको कभी माफ कर नहीं सकता; इसलिये युद्ध ज्योंका त्यों चलेगा। राणाके राज्यमें गाय देखते ही मुसलमान उसे मार डालेंगे! देवमन्दिर देखते ही उसे तोड़ डालेंगे। जिजिया सब जगह वसूल किया जायेगा।"

यह सब घोषणायें जारी हुईं। इधर दिलेरखांको दाईसुरीकी राहसे मारवाड़ होते हुए उदयपुरमें प्रवेश करनेकी चेष्टा करते सुन राजसिंहने औरङ्गजेबके पास आदमी भेज पुछवाया, कि सुलहके बाद यह युद्धका उद्योग कैसा? औरङ्गजेबने कहा,—"एक साधारण भुंइहारसे बादशाहकी सन्धि कैसी? बादशाहको रूपनगरी बेगमको बिना वापिस किये बादशाह तुम्हें माफ न करेंगे।" यह बात सुन राजसिंहने कहा,—"मैं अभी जीवित हूं।" रूपनगरकी कुमारीका हरा जाना बादशाहकी आंखमें शूलकी भांति खटकता था। उन्होंने राजसिंहसे अपना मतलब निकलते न देख रूपनगरके राव साहबके नाम एक परवाना जारी किया। उस परवानेमें लिखा,—"तुम्हारी लड़की अबतक मेरे पास नहीं पहुंची। उसे

शीघ्र मेरे पास पहुंचा दो ; नहीं तो रूपनगरके किलेका नामो-निशानतक न रहने दूंगा ।" औरङ्गजेबको भरोसा था, कि पिताके जिद करनेपर चञ्चलकुमारी उनके पास आनेके लिये राजी हो सकती है । परवाना पाते ही विक्रमसिंहने उत्तर लिखा,—"मैं बहुत शीघ्र दो हजार घुड़सवार सिपाहियों सहित आपके सामने हाजिर होऊंगा ।"

औरङ्गजेबने सोचा,—"सिपाही क्यों लायेगा ?" लाचार बादशाहने इस तरह मनको समझाया, कि मेरी सहायताके लिये विक्रमसिंह सिपाहियों सहित आ रहा है ।

तेरहवां परिच्छेद ।

मुबारक और जबुन्निसा ।

सौन्दर्य्यकी क्या ही महिमा है । मुबारक जेबुन्निसाको देखते ही अपनी पिछली सब बातें भूल गया । कहा नहीं जाता, कि गर्व्विता और क्रोधाभावदर्पिता जेबुन्निसाको देखनेसे मुबारक ऐसा होता, या नहीं ; किन्तु वही जेबुन्निसा इस समय विनीता, दर्पशून्या, क्रोधशालिनी और अश्रुमयी है । मुबारकका पूर्व्वानुराग पूर्णरूपसे फिर लौट आया । दरिया दरियामें बह गई । मनुष्य जब स्त्री-जातिके प्रेममें अन्धा हो जाता है, तब उसे धर्म्माधर्म्मका ज्ञान रह नहीं जाता । उसकी भांति विश्वासघातक पापिष्ट दूसरा नहीं ।

उदयसागरके किनारे इन्द्रभवन जैसे तंबूमें मुबारक जेबुन्निसाका हाथ अपने हाथमें रख बैठा हुआ है । मुबारकका मुंह कुम्हलाया हुआ था है । इसी समय मुबारकने बड़े ही दुःखसे कहा—"बड़े

भाग्यसे तुम फिर मिली हो ; किन्तु दुःख यही है, कि वह स्वर्गीय सुख दश दिन भी भोग न सका !"

जेबुन्निसा । क्यों ? कौन बाधा देगा ? बादशाह ?—पिता ?

मुबारक । ऐसा भी सन्देह है ; किन्तु इस समय बादशाहकी बात नहीं कहता हूं । मैं कल युद्धमें जाऊंगा । युद्धमें मरना-जीना दोनों होता है ; किन्तु मेरे लिये मृत्यु ही निश्चय है । मैंने राजपूतोंके युद्धका ढङ्ग देखा है ; इससे मुझे दृढ़ विश्वास है, कि पार्व्वत्य युद्ध में हमलोग उन्हें हरा न सकेंगे, मैं एक बार हारकर लौट आया हूं ; अबके हारकर मुंह न दिखा सकूंगा । मुझे युद्धमें अवश्य मर जाना पड़ेगा ।

जेबुन्निसाने डबडबाई आंखोंसे कहा,—"खुदा अवश्य तुम्हें जयी करेंगे । तुम यदि मेरे पास लौट कर न आये, तो निश्चय ही मैं प्राण त्याग दूंगी ।"

दोनोंकी आखें छलछला आईं । आंखें पोंछते हुए मुबारकने सोचा,—"मरूंगा, नहीं न मरूंगा, ?" बहुत कुछ सोचा । उस समय दोनोंकी आंखोंके सामने अन्धकार छा गया था ।

एकाएक जेबुन्निसाने कहा,—"इस अन्धकारमें तम्बूकी कनातके पास अभी न जानें कौन छिप गया है । तुम्हारे लिये मेरे मनमें सदा आशङ्का बनी रहती है ।"

"देख आऊं" कहकर तम्बूकी प्राचीरके पास मुबारक दौड़कर गया । देखा, कि सचमुच ही वहां एक आदमी जमीनमें लेटा हुआ छिपा है । मुबारकने उसे पकड़ा । हाथ धर उठाया । वह लेटा हुआ उठ खड़ा हुआ । अन्धकारमें मुबारक उसे पहचान न सका तथा उसे पकड़कर किलेमें रोशनीके पास खींच लाया । देखा, कि वह एक स्त्री है । वह घूंघट काढ़े हुए थी ; उसने घूंघट न उठाया ; मुंहसे भी कुछ न बोली । मुबारक उसे एक

बाँदीके हवालेकर स्वयं जेबुन्निसाको खबर करने गया। जेबुन्निसा-ने कौतुहलवश उसे कमरेमें लानेकी आज्ञा दी। मुबारक उसे कमरेमें ले आया।

जेबुन्निसाने कहा,—"तुम कौन हो? क्यों छिपी हुई थीं? मुंह-का घूंघट उठाओ।"

उस स्त्रीने एकाएक अपना घूंघट उठा दिया! दोनोंने आश्चर्य से देखा; सामने दरिया बीबी खड़ी है।

बड़े सुखके समय अचानक बिना मेघ सामने वज्रपात देख जिस तरह विह्वल होना पड़ता है, जेबुन्निसा और मुबारक भी उसी तरह हुए। तीनोंमें कोई कुछ न बोला। बहुत देर बाद लम्बी सांस खींच मुबारकने कहा,—"या खुदा! मुझे हो मरना पड़ेगा।"

यह बात सुन बड़ी ही कातरतासे जेबुन्निसाने कहा,—"तब मुझे भी।"

दरिया बोली,—"तुम लोग कौन हो?"

मुबारकने उससे कहा,—"मेरे साथ आओ।"

इसके बाद बड़ी दीनतासे मुबारक जेबुन्निसासे विदा हुआ।

चौदहवां परिच्छेद।

आगकी नई चिनगारी।

राजसिंह राजनीति और युद्ध-नीतिके अद्वितीय पण्डित थे। मुगल जबतक समस्त सेना ले राणाका राज्य छोड़ बहुत दूर निकल न गये, तबतक उन्होंने शिविर भङ्ग न किया। अपनी सेना-को भी अङ्गुल भर इधर-उधर होने न दिया। वह शिविरमें ही

थे, कि उन्हें समाचार मिला,—"विक्रमसिंह दो हजार फ़ौज ले रूपनगरसे आ रहे हैं।" राजसिंह युद्धके लिये प्रस्तुत होगये।

एक घुड़सवारने उनके आनेकी खबर महाराणाको देने आ महाराणासे भेंट करनेकी इच्छा जनाई। राजसिंहकी आज्ञा पा प्रतिहारी उसे उनके पास ले गया। उसने राजसिंहको प्रणामकर निवेदन किया, कि रूपनगरके राजा विक्रमसिंह सोलङ्की महाराणाके दर्शनोंके लिये ससैन्य आ रहे हैं।

राजसिंहने कहा,—"यदि शिविरमें आ मिलना चाहते हों, तो अकेले आनेके लिये कहना, यदि ससैन्य मिलना चाहते हों, तो शिविरके बाहर ही रहनेके लिये कहना—मैं ससैन्य आता हूं।"

विक्रम सोलङ्कीने अकेले छावनीमें आ मिलना स्वीकार किया। उनके आनेपर राजसिंहने उन्हें आदरपूर्व्वक बैठाया। विक्रमसिंहने राणाके सामने कुछ नजर पेशकी। उदयपुरके राणा राजपूतोंमें सर्व्व-श्रेष्ठ हैं तथा सदासे उन्हें ऐसी नजरें मिलती आती हैं किन्तु राजसिंहने नजर न ले विक्रमसिंहसे कहा,—"इस समय यह नजर आप लोगोंसे मुगलोंको ही मिलनी चाहिये।"

विक्रमसिंहने कहा,—"महाराणा राजसिंहके जीते-जी, भरोसा है कि अब कोई राजपूत मुगल-बादशाहको नजर न देगा। महाराणा! मुझे माफ करें; बिना जाने मैंने वैसा पत्र लिखा था। आपने जिस प्रकार मुगलोंकी खबर ली है, उससे मालूम होता है, कि यदि समग्र राजपूत मिलकर आपके अधीन कार्य्य करें, तो निश्चय ही भारतसे मुगल-साम्राज्य नष्ट हो जायेगा। मेरे पत्रका अन्तिम भाग याद कीजिये। मैं केवल आपको नजर देने ही नहीं आया हूं; वरं मैं और भी दो चीजें आपको देने आया हूं। एक अपनी यह दो हजार घुड़सवार फ़ौज और दूसरी यह तलवार। आज भी इन भुजाओंमें कुछ बल है। आप मुझे जिस कार्य्य-

में लगायेंगे, शरीर-पतन करके भी मैं उसे पूरा करूंगा।"

राजसिंह बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने अपनी आन्तरिक प्रसन्नता विक्रमसिंहसे प्रकटकी। कहा,—"आज आपने सोलाङ्कीजैसी बातें कही हैं। दुष्ट मुगल जब मेरे हाथों प्राण खो रहा था, तब उसने सुलहकर रक्षा पाई। अब छूटते ही फिर युद्ध कर रहा है। दिलेरखां फौज ले शाहजादा अकबरके उद्धारके लिये आ रहा है; इसलिये आप बड़े ही अच्छे समय आये हैं। दिलेरखांको राह ही में सफाई करनी होगी; नहीं तो उसके अकबरसे मिल जानेपर कुमार जयसिंहपर विपद आवेगी। इस कामके लिये मैं गोपीनाथ राठोरको भेजता था; किन्तु उनकी सेना बहुत ही कम है। अपनी खास फौजमेंसे कुछ सिपाही उन्हें दूंगा; माणिकलालसिंह नामक मेरा एक सुदक्ष सेनापति है; वह इन सिपाहियोंको ले उनकी सहायताके लिये जायेगा। किन्तु औरङ्गजेब निकट ही है; इसलिये मैं स्वयं यहांसे कहीं हट नहीं सकता। साथ ही अधिक फौज भी माणिकलालके साथ भेज नहीं सकता। मैं चाहता हूं, कि आप भी अपने सिपाहियों सहित उसी युद्धमें जायें। आप लोगों वीर मिलकर राह हीमें दिलेरखांको ससैन्य मार डालें।"

विक्रमसिंह बड़ी प्रसन्नतासे बोले,—"आपकी आज्ञा शिरोधार्य।"

यह कह विक्रमसिंह सोलाङ्की युद्धमें जानेकी तैय्यारी करनेके लिये राणासे विदा हुए। चञ्चलकुमारीकी कोई बात ही न उठी।

पन्द्रहवां परिच्छेद ।

मुबारककी हत्या ।

गोपीनाथ राठोर, विक्रम सोलाङ्की तथा माणिकलाल, दिलेरखांको मार डालनेके लिये रवाना हुए। जिस राहसे दिलेरखां आ रहा

था, उसी राहमें तीनों तीन जगह छिप रहे। किन्तु तीनों पास ही पास रहे। विक्रम सोलङ्की घुड़सवार सिपाही लेकर आये थे, इससे वह उपत्यकामें रह न सके। पर्व्वतवासी होनेपर भी उन्हें घोड़े रखने पड़ते; इसका कारण यह था, कि बिना घोड़े वह निम्न भूमिवासी शत्रुओं और डाकुओंका पीछा कर न सकते थे। कभी ऐसे छोटे-छोटे राजा मौका पा स्वयं भी छोटी-मोटी डकैतियां करते, यानी दस-पांच गांव लूट लेते थे। पर्व्वतपर इनके सिपाही घोड़े छोड़ पैदल सिपाहीका काम करते। इस समय मुगलोंका पीछा करनेकी बात सोच विक्रमसिंह घोड़े ले आये थे। पार्व्वत्य युद्धमें इन घोड़ोंसे असुविधा हुई; इसलिये वह पर्व्वतपर न चढ़ अपेक्षाकृत समतल भूमि ढूंढ़ने लगे; किन्तु मनमुताबिक वैसी जमीन न मिली। वहां कुछ थोड़ा सा जङ्गल था। उसी जङ्गलमें उन्होंने अपने घुड़सवारोंको ले जाकर खड़ा किया। वह सबसे आगे रहे। उनके पीछे माणिकलाल राजसिंहके पैदल सिपाहियों सहित छिपा रहा। सबसे पीछे गोपीनाथ राठौर रहे।

दिलेरखां अकबरकी दुर्दशा स्मरणकर जरा सावधानीसे आगे बढ़ रहा था। वह आगे-आगे घुड़सवार भेज पता लगा रहा था, कि राजपूत कहीं छिपे तो नहीं हैं; इससे विक्रम सोलङ्कीकी फौजका पता उसे सहजहीमें लग गया। दिलेरखांने कितने ही सिपाहियोंको, उनके घुड़सवारोंको मार भगानेके लिये भेजा। विक्रमसिंह अन्यान्य विषयोंमें बड़े ही स्थूल-बुद्धि थे; किन्तु युद्धके समय वे बड़े ही धूर्त्त तथा रणपण्डित हो जाते। कितनेही समय धूर्त्तता ही रणपाण्डित्य समझी जाती है। वे मुगल-सेनाके साथ बहुत ही थोड़ी लड़ाई लड़ हट गये; हटनेमें भी मतलब था।

दिलेर माणिकलालको लांघ आगे चला। उसे जरा भी खबर न थी, कि माणिकलाल पीछे छिपा हुआ है। माणिकलालने भी

कुछ चूं-चां न की। सोलाङ्कीके पीछे हट आनेसे दिलेरने समझा, कि सब राजपूत हट गये ; इसलिये अब वह बड़ी लापरवाहीसे आगे बढ़ने लगा। माणिकलाल भी उचित समय न जान चुपचाप बैठा रहा।

अन्तमें जहां गोपीनाथ राठोर छिपे थे, दिलेर वहां पहुंचा। वह अत्यन्त तीव्र पथ बहुत सङ्कीर्ण होगया है। सेनाके वहां पहुंचते ही गोपीनाथ राठोर भूखे बाघकी तरह ससैन्य दिलेरखांकी सेनापर टूट पड़े ।

दिलेरने मुबारकको हुक्म दिया,—"आगेकी सेना ले इन लोगों-को मार भगाओ।" मुबारक आगे बढ़ा ; किन्तु गोपीनाथ राठोर-को भगानेका उसमें बल कहां? उस सङ्कीर्ण राहमें बहुत थोड़े मुगल खड़े हो सके। जिस तरह बिलसे पीपिलिकाओंके बाहर निकलते समय बालक एक-एक कर उन्हें मसलकर मार डालते हैं, उसी तरह राजपूत मुगलोंको कुचल-कुचलकर मारने लगे। इधर दिलेरखां सामने राह न पा सेना सहित निश्चल भावसे बीच राहमें खड़ा रहा।

माणिकलालने समझा, कि यही उपयुक्त समय है। वह सेना सहित पहाड़से उतर बाजकी भांति दिलेरकी फौजपर टूट पड़ा। दिलेरकी फौज जी-जानसे युद्ध करने लगी ; किन्तु इसी समय विक्रम सोलाङ्की अपने दो हजार घुड़सवारों सहित एकाएक दिलेर-की फौजके पीछेकी ओर आ पहुंचे। उस समय तीनों ओरसे आक्रान्त हो मुगल-सेना फिर एक क्षण भी ठहर न सकी। जिसने जिधर राह पाई, उसने उधर ही भाग प्राण बचाया। अधिकांश लोगोंको भागनेकी भी राह न मिली ; वह गाजर मूलीकी तरह वहीं शत्रुओं द्वारा कतरे जाने लगे।

केवल गोपीनाथ राठोरसे कई मुगल-योद्धा जी-जान लड़ाकर

बड़ी बहादुरीसे युद्ध कर रहे थे। वे सब मुगल-फौजके सार भाग अर्थात चुने-चुने लोग थे। मुबारक उन लोगोंका सेनापति था। किन्तु वे भी अधिक देरतक ठहर न सके। क्षण-क्षणमें एक-एक मनुष्य बहु-संख्यक राजपूतोंके आक्रमणसे जान खोने लगा। अन्तमें दो ही चार मनुष्य बच गये थे।

दूरसे वहांका यह तमाशा देख माणिकलाल बहुत शीघ्र वहीं आ पहुंचा और राजपूतोंको संबोधनकर उसने कहा,—"इन लोगों-को न मारना। ये लोग वीर पुरुष हैं। इन्हें छोड़ दो।"

राजपूत जब क्षण भरके लिये निरस्त्र हुए, तब माणिकलालने उन मुगलोंसे कहा,—"तुम लोग चले जाओ। तुम छोड़ दिये गये। हमारे अनुरोधसे तुम्हें कोई कुछ न कहेगा।"

एक मुगलने कहा,—"हम लोगोंने युद्धमें कभी पीठ नहीं दिखाया; इसलिये आज भी पीछे फिर न सकेंगे।" यह कह वे कई मुगल फिर युद्ध में प्रवृत्त हुए। माणिकलालने मुबारकसे कहा,—"खां साहब! अब युद्ध करके क्या कीजियेगा?"

मुबारकने कहा,—"मरूंगा।"

माणिक०। क्यों मरियेगा?

मुबा०। आप क्या नहीं जानते, कि मृत्युके सिवा मेरे लिये और कोई उपाय नहीं?

माणिकलाल। तब विवाह क्यों किया?

मुबा०। मरनेके लिये।

इसी समय बन्दूकके शब्दसे पहाड़ गूंज उठा। साथ ही एक गोली मुबारकखांके सिरमें आ लगी; वह जमीन पर गिर पड़ा। माणिकलालने तुरत उसके पास पहुंच देखा, कि मुबारकका प्राण-पखेरू उड़ गया है। माणिकलालने पहाड़पर आंख उठाकर देखा, कि पर्व्वतपर एक स्त्री हाथ में बन्दूक लिये खड़ी है। उसको

बन्दूकसे उस समय भी धूआं निकल रहा था। बताना नहीं होगा, कि वह उन्मादिनी दरिया थी।

माणिकलालने उस स्त्रीको पकड़नेकी आज्ञा दी। वह हंसते-हंसते भाग गई। उस दिनके बाद दरिया बीबी इस पृथिवीपर फिर दिखाई न पड़ी।

युद्धके बाद जब जेबुन्निसाने सुना, कि मुबारक युद्धमें मर गया, तब उसने अपना शृङ्गार-पटार उतार दिया और उदयसागरके किनारे कठिन पथरीली भूमिपर सिर पटक-पटककर रोई,—

"वसुधालिङ्गन धूसरस्तनी विललाप विकीर्ण मूर्द्धजा।"

सोलहवां परिच्छेद।

पूर्णाहुति—इष्टलाभ।

युद्धके बाद जय प्राप्तकर जब विक्रमसिंह राजसिंहके तम्बू-में लौट आये, तब राजसिंहने उन्हें सादर गले लगाया। विक्रम-सिंहने कहा,—"अब केवल एक काम बाकी है। वह यह, कि मैं अपनी उस कन्याको कायमनोवाक्यसे आशीर्व्वादकर आपको सम्प्रदान करना चाहता हूं। क्या आप ग्रहण करेंगे?"

राजसिंहने कहा,—"तब उदयपुर चलिये।"

विक्रमसिंह अपने दो हजार सिपाहियों सहित उदयपुर गये।

कहनेका प्रयोजन नहीं, कि उसी रात राजसिंहने चञ्चलकुमारी-का पाणिग्रहण किया। इसके बाद जो कुछ हुआ, उस पर-इतिहास वेत्ताओंका अधिकार है, उपन्यास लेखकोंको वह बातें कहने की जरूरत नहीं; इसके बाद स्वयं औरङ्गजेब फिर राजसिंहका सर्व्वनाश

करनेके लिये प्रस्तुत हुए। उधर आज़मशाह औरङ्गजेबसे आ मिला था। राजसिंहने सुप्रसिद्ध मारवाड़ी राठोर-वीर दुर्गादाससे मिल औरङ्गजेबपर चढ़ाईकी। औरङ्गजेब फिर पराजित और अपमानित हो बेबाहल कुत्तेकी भांति भागे। राजपूतोंने उनका सर्वस्व लूट लिया। औरङ्गजेबकी बहुत फौज कट मरी।

औरङ्गजेब और आज़मशाहने भागकर राणाओंकी परित्यक्त राजधानी चित्तोरमें आश्रय लिया; किन्तु वहां भी वह बच न सके। सुबलदास नामक एक राजपूत सेनापतिने उनके पीछे जा चित्तोर और अजमेरके बीचोबीच सेना ठहराई। फिर बादशाहके भोजनादि बन्द होनेका भय हुआ; इसलिये खां रुहेलाको बारह हजार सिपाहियोंके साथ सुबलदाससे युद्ध करने भेज औरङ्गजेब स्वयं अजमेर भाग गये: फिर कभी उदयपुरकी ओर मुंह न किया। यह साध उनके 'मन की मन ही रही'।

इधर सुबलदासने खां रुहेलाको कुछ उत्तम-मध्यम दे मार भगाया। हारकर खां रुहेला अजमेर चला गया। दूसरी ओर राजसिंहके दूसरे पुत्र कुमार भीमसिंहने गुजरातप्रान्तमें, मुगलोंके राज्यमें प्रवेशकर समस्त नगर, ग्राम, यहांतक कि मुगल-सूबेदारकी राजधानी भी लूटपाट की। वे कितने ही स्थानोंपर अधिकारकर सौराष्ट्रतक राजसिंहका अधिकार स्थापन करना चाहते थे; किन्तु प्रजाने राजसिंहके पास आ बड़ा ही करुणक्रन्दन किया। दयार्द्रहृदय राजसिंहने उनके दुःखसे दुःखित हो भीमसिंहको लौट आनेकी आज्ञा दी! दयालुताके कारण उन्होंने वहां हिन्दू साम्राज्य प्रतिष्ठित करने न दिया।

किन्तु राजमन्त्री दीनदयालुसिंह वैसी प्रकृतिके मनुष्य नहीं थे। वे भी युद्धमें प्रवृत्त हुए। वे मालवेमें मुसलमानोंको तहस-नहस करने लगे। औरङ्गजेबने हिन्दुओंपर बहुत-कुछ अत्याचार किया था।

उसके बदला स्वरूप वे काजियोंका सिर मुंडवा उन्हें बांधने लगी। राजसिंहको दीनदयालुसिंह कुरान देखते ही उसे कुएमें फेंक देते थे ।

दीनदयालुसिंह और कुमार जयसिंहकी फौजके मिल जानेपर दोनोंने शाहजादे आजमको चित्तौरके पास घेर खूब युद्ध किया। आजम भी अपनी बहुतसी सेना कटवा तथा हार खा भाग गया।

लगातार चार वर्षतक युद्ध हुआ। पद-पदपर मुगल हारे। अन्तमें औरङ्गजेबको सचमुच ही सन्धि करनी पड़ी। राजसिंहने जो-जो कहा औरङ्गजेबने वे-सब शर्तें स्वीकार कीं। फलतः सुलह हुई मुगलोंको ऐसी शिक्षा और कभी मिली न थी ।

उपसंहार ।

ग्रन्थकारका निवेदन !

ग्रन्थकारका विनीत निवेदन है, कि कोई पाठक यह न समझें, कि हिन्दू मुसलमानोंमें किसी तरहका तारतम्य निर्देश करना इस ग्रन्थका उद्देश्य है। हिन्दू होनेसे ही न तो कोई अच्छा होता है और न मुसलमान होनेसे ही कोई खराब। अच्छे-बुरे दोनोंमें समान रूपसे हैं। इसके सिवा यह भी स्वीकार किया जा सकता है, कि जब मुसलमान इतनी शताब्दितक भारतवर्षके प्रभु थे, तब राजकीय गुणोंमें मुसलमान समसामयिक हिन्दुओंकी अपेक्षा अवश्य श्रेष्ठ थे। किन्तु यह भी सत्य नहीं, कि कुल मुसलमान राजा कुल हिन्दू-राजाओंसे श्रेष्ठ थे। अनेक स्थानोंमें मुसलमान ही हिन्दुओंकी अपेक्षा राजकीय गुणोंमें श्रेष्ठ थे। अनेक स्थानोंमें हिंदू-राजा मुसलमान-राजाओंकी अपेक्षा राजकीय गुणोंमें श्रेष्ठ थे। हिंदू हो चाहे मुसलमान; अन्यान्य गुणोंके साथ जिसमें धर्म है, वही श्रेष्ठ है। अन्यान्य गुणोंके होते भी जिसमें धर्म नहीं; हिन्दू हो चाहे मुसलमान-वही निकृष्ट है। औरङ्गजेब धर्म शून्य थे; इसीलिये उनके

समयमें मुगल-साम्राज्यका अधःपतन आरम्भ हुआ । राजसिंह धार्मिक थे ; इसीलिये वे छोटे राज्यके स्वामी होकर भी मुगल-बादशाहको अपमानित तथा परास्त कर सके। सच बात तो यह है, कि यही सब इस ग्रन्थमें दिखाया गया है। राजा जैसा होता है ; राजाके अनुचर और उसकी प्रजा भी वैसी ही होती है। उदयपुरी और चञ्चलकुमारीकी तुलनासे, जेबुन्निसा और निर्मलकुमारीकी तुलनासे तथा माणिकलाल और मुबारककी तुलनासे यह बात अच्छी तरह प्रमाणित होती है। इसीलिये यह सब कल्पनायें की गई हैं।

औरङ्गजेबकी तुलना स्पेनके द्वितीय फिलिपसे ही सकती है। दोनों ही प्रकाण्ड साम्राज्यके अधिपति थे ; दोनों ही ऐश्वर्य्यमें, सैनिकबलमें, गौरवमें अन्यान्य सब राजाओंसे बड़े थे। दोनों ही श्रमशीलता, सतर्कता प्रभृति राजकीय गुणोंसे विभूषित थे ; किन्तु दोनो ही निष्ठुर, कपटाचारी, क्रूर, दाम्भिक, आत्ममात्र हितैषी तथा प्रजापीड़क थे ; इसलिये दोनो ही अपने-अपने राज्यको विध्वंस करनेका आपही बीज बो गये थे। दोनो ही छोटे शत्रु द्वारा अपमानित और परास्त किये गये थे। फिलिप ओलन्दाजों (उस समय बहुत छोटी जाति थी) द्वारा तथा औरङ्गजेब महाराष्ट्रों और राजपूतों द्वारा हारे थे। महाराष्ट्र-वीर शिवाजी और इङ्गलैण्डकी उस समयकी रानी एलिजाबेथ परस्पर तुलनीय हैं। किन्तु इनकी अपेक्षा ओलन्दाज विलियम और राजपूत राजसिंह विशेष प्रकारसे तुलनीय हैं। उज्ज्वल दोनोंकी कीर्त्तिसे इतिहास परिपूर्ण है। विलियम युरोपमें देशहितैषी, धर्म्मात्मा और वीर पुरुषोंके अग्रगण्य प्रसिद्ध हैं ; इस देशमें इतिहास नहीं ; इससे राणा राजसिंहको कोई जानता ही नहीं !

॥ समाप्त ॥

Cover Ptd By Sulov Press.